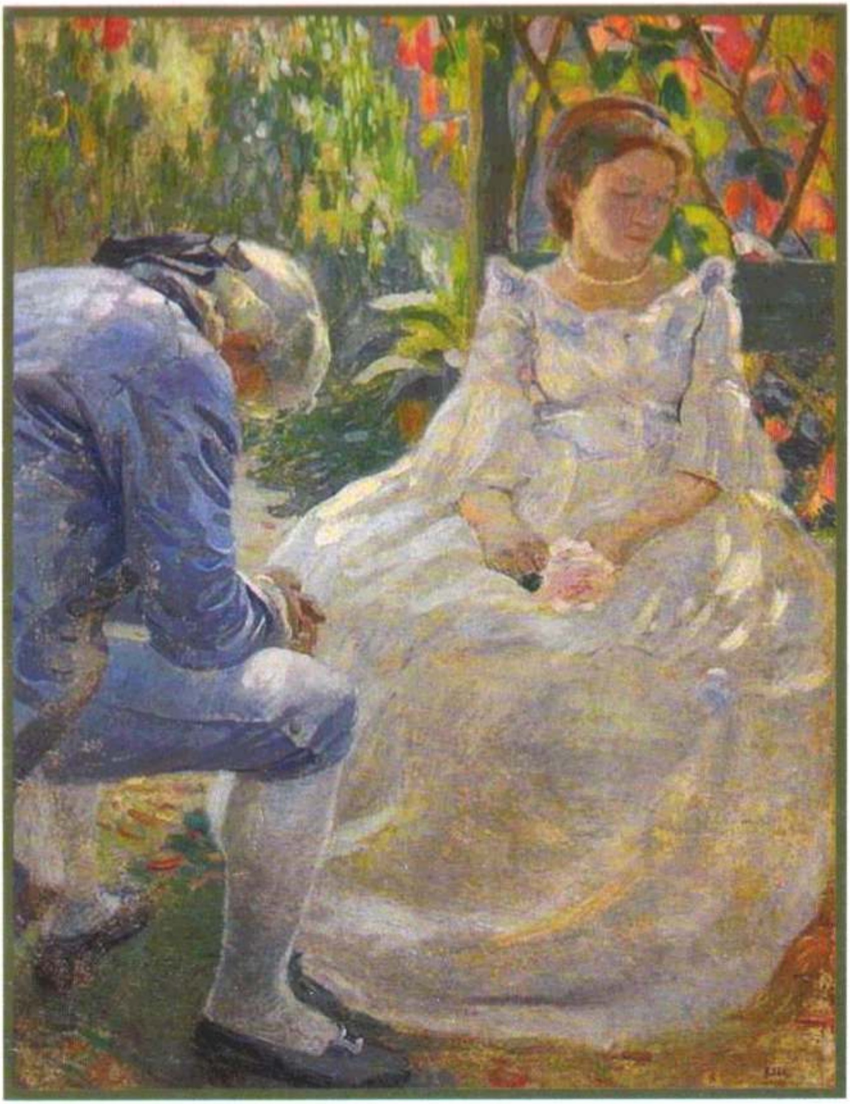


पत्नी

अन्तोन चेखव



शुभदा प्रकाशन

1/11052- ए, सुभाष पार्क, नवीन शहादरा दिल्ली-110032
फोन: 22822586

महान कथाकार चेखव रूसी साहित्य के महत्त्वपूर्ण स्तम्भ रहे हैं। सौन्दर्य बोध का आभास देने वाली इनकी रचनाओं की वास्तविक जमीन गरीबों का दुख-दर्द ही है। इसलिए गरीब लोगों के मनोविज्ञान को गहराई और संवेदना से समझने वाले चेखव पुरानी चली आ रही ध्येयवादी और विशुद्धवादी कला की बहस के दौर में भी अपनी जगह रूसी साहित्य की लोकतांत्रिक परम्परा के पास बनाते हैं।

चेखव की बारीक प्रेक्षण शक्ति, विलक्षण भाषिक-भंगिमा उनके लेखन को अनिवार्य तौर पर विशिष्ट बनाती हैं। मध्यवर्गीय मानस का तनाव और मानवीय मूल्य की परवाह उनकी कहानियों का मुख्य स्वर है।

इस संग्रह की कहानियों में एक ओर 'पहला प्रेमी' की 'सुन्दरता' है और दूसरी ओर 'निर्वासन में' 'गैर का दुख' है तो इसलिए कि दैनिक जीवन की छोटी-छोटी खुशियाँ और लम्बी-लम्बी उदासियाँ भी चेखव की कथा-तत्त्व का रसायन हैं।

जीवन के विविध रंग और संवेदना के कई स्वर इस संग्रह की कहानियों को गरिमामय पठनीयता प्रदान करते हैं।

पत्नी

अन्तोन चेखव

मूल रूसी से अनुवाद

योगेश भटनागर

शुभदा प्रकाशन
दिल्ली-110032

अनुक्रम

गैर का दुख

सुबह के छह बजे थे, जब वकालत की नयी-नयी डिग्री हासिल करके कवालोव अपनी जवान बीवी के साथ घोड़ागाड़ी में बैठा और गाँव की सड़क पर चल पड़ा। वह और उसकी बीवी आज तक कभी इतनी जल्दी नहीं उठे थे और आज उन्हें यह गर्मियों की खूबसूरत सुबह बहुत ही सुहानी और मनमोहक लग रही थी। धरती, जो हरियाली पहने हुए थी और सब तरफ़ मोती-सी ओस से ढकी थी, उन्हें बहुत ही खूबसूरत और खुशगवार लगी। सूरज की किरणें पारदर्शी बिन्दुओं की तरह जंगल पर फैल रही थीं, पारदर्शी नदी में थिरक रही थीं और हवा में इतनी ताज़गी थी मानो सारी प्रकृति अभी नहा कर चुकी हो और इसी वजह से वह और ज़्यादा जवान और सेहतयाफ़्ता हो गयी थी।

कवालोव के लिए, जैसा कि उन्होंने बाद में माना, यह सुबह उनके हनीमून के महीने की सबसे ख़ूबसूरत सुबह थी और सच कहा जाये, तो उनके जीवन में अब तक इससे ख़ूबसूरत सुबह नहीं आई थी। वह मुसलसल बोले जा रहे थे, गाये जा रहे थे, बिला वजह हँसे जा रहे थे और इतनी बेवकूफ़ियाँ कर रहे थे कि आख़िर उन्हें कोचवान से शरम आने लगी। उनका वर्तमान ही खुशगवार नहीं था, बल्कि उनके सामने भी अच्छी किस्मत खड़ी मुस्करा रही थी। वह एक जागीर (स्टेट) खरीदने जा रहे थे, एक छोटा-सा, काव्यात्मक अपना कोना, घर जिसके बारे में वह शादी के पहले दिन से सपना सँजो रहे थे। भविष्य उनको आशावान लग रहा था। वह इस गाँव में अपनी नौकरी के सपने देख रहा था, छोटी-सी खेती, अपने हाथों की मेहनत और उससे बना ऐश्वर्य वगैरह-वगैरह, जिसके बारे में उसने बहुत पढ़ा था, सुना था। उसकी बीवी तो सिर्फ़ इस सबसे जुड़े रोमांस से खिंची चली आ रही थी, अँधेरी छोटी तंग पंगडंडियाँ, मछली पकड़ना और महकभरी रातें...।

हँसी और बातों के बीच उन्हें पता ही नहीं लगा, कब वे 18 वेर्स्ट (1 वेर्स्ट=3500 फीट) पार कर गये। क्लर्क मिखाइलोव की जागीर, जिसे वे देखने और खरीदने जा रहे थे, नदी के चौड़े और ढलान के किनारे पर स्थित थी और बर्च के पेड़ों के पीछे छिपी हुई थी...लाल छत इस घनी हरियाली में से मुश्किल से दिख पा रही थी और

चिकने किनारे पर नज़र आ रहे थे नये ताज़े जवान पेड़।

"नज़ारा तो हसीन है," घोड़ागाड़ी जब घाट के दूसरी तरफ़ पहुँच गयी, तो कवालोव ने कहा, "पहाड़ पर घर है, पहाड़ के गिरिपीठ पर नदी है। कितना ख़ूबसूरत है यह सब! सिर्फ़ एक बात है वेराचका, ये सीढ़ियाँ बेकार हो गयी हैं...अगर हम यह जागीर खरीद लेंगे, तो फ़ौरन लोहे की सीढ़ी लगवायेंगे...।"

वेराचका को भी नज़ारा सुहाना और ख़ूबसूरत लगा। ज़ोर से हँसते हुए और सारे शरीर को हिलाते हुए वह सीढ़ियों पर चढ़ने लगी। शौहर पीछे-पीछे चढ़ रहा था। दोनों अस्त-व्यस्त और हाँफते हुए घने पेड़ों के झुरमुट में घुसे। सबसे पहले जो उस जागीर के पास मिला, वह एक लम्बा-चौड़ा अलसाया, घने बालों वाला और उदास किसान था। वह घर के पोर्च में बैठा था और किसी बच्चे के गमबूटों को साफ़ कर रहा था।

"मिस्टर मिखाइलोव घर पर हैं?" कवालोव ने उसकी तरफ़ मुखातिब होते हुए पूछा, "जाओ और उन्हें ख़बर करो कि ख़रीददार जागीर देखने आये हैं।"

आश्चर्यचकित किसान ने कवालोव को देखा और आहिस्ता से घर की तरफ़ न जाकर रसोई की तरफ़ गया, जो घर के बाहर एक कोने में थी। तभी रसोई की खिड़कियों से कुछ आकृतियाँ झलकीं, जो ख़ुद भी आश्चर्यचकित थीं।

"ख़रीददार आ गये हैं," फुसफुसाहट सुनाई दी, "हे भगवान, तेरी इच्छा। मिखाइलोव को बेच रहे हैं। देखो तो कोस्तया, कितने जवान हैं ख़रीददार।"

कहीं से एक कुत्ते ने भौंकना शुरू कर दिया था। तभी एक विद्वेषभरी चीख़ सुनाई दी, वैसी ही जैसी बिल्लियाँ चीख़ा करती हैं, जब उनकी दुम पर किसी के पैर पड़ जायें। घर के नौकरों की बेचैनी बड़े आराम से पगडंडियों पर घूमती हुई मुर्गियों, बत्तखों और पीरुओं में भी दिखाई देने लगी। तभी रसोई में से एक दुबला-पतला बच्चा बाहर आया। उसने कवालोव की तरफ़ देखकर आँखें मिचकायीं और चलते-चलते कोट पहनते हुए भाग कर घर में गया...। कवालोव का यह सारी बेचैनी बड़ी मज़ाकिया लग रही थी और वह बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी रोक पा रहे थे।

"कितने अजीब इन्सान हैं!" कवालोव ने अपनी बीवी से कहा, "वे हमें ऐसे देख रहे हैं, मानो हम कोई जंगली जानवर हों।"

आख़िरकार घर में से शेव किये बूढ़े चेहरे और बिखरे बालों वाला एक छोटे क़द का आदमी बाहर आया। वह अपने पैरों को फटे हुए जूतों में घसीट रहा था। वह बड़े ही फीके ढंग से मुस्कराया और उसने अपनी नज़रें बिन बुलाये मेहमानों पर गड़ा दीं...।

"मिस्टर मिखाइलोव?" कवालोव ने अपना हैट थोड़ा उठाकर कहना शुरू किया, "मैं आपको नमस्कार करता हूँ...मैंने और मेरी बीवी ने आपकी जागीर के बिक्री के बारे में प्रोपर्टी बैंक का इश्तहार पढ़ा। इसीलिए हम उसे देखने आये हैं। हो सकता

है हम उसे ख़रीद लें...मेहरबानी करके हमें अपनी जागीर दिखाएँ।"

मिखाइलोव ने एक बार फिर फीकी मुस्कान बिखेर दी। कुछ संशय में दिखा और अपनी आँखें मिचकाने लगा। इस सभ्रम में उसने अपने बाल और भी अस्त-व्यस्त कर दिये और उसके शेव किये चेहरे पर अजीब-सी शरम और पागलपन के भाव आ गये। कवालोवो ने एक-दूसरे को देखा और अपनी मुस्कान न रोक पाये।

"आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई", वह बुदबुदाया, "मैं आपकी सेवा में हाज़िर हूँ सर,...क्या आप काफी दूर से आये हैं?

"कनकोव से आये हैं...वहाँ हम दाचे में रहते हैं।"

"दाचे में...तो यह बात है...ताज्जुब है। माफ़ कीजिए! क्या आप लोग अभी-अभी सोकर उठे हैं। आपके चेहरे कुछ अस्त-व्यस्त लग रहे हैं।"

मिखाइलोव मुस्कराते और हाथों को मलते हुए मेहमानों को घर के दूसरी तरफ़ ले गया। कवालोव ने चश्मा पहना और एक ऐसे मँजे हुए टूरिस्ट का चेहरा बना लिया जो उस जगह की सारी खासियतों को जानता था, जागीर का मुआयना शुरू कर दिया। सबसे पहले उसने एक बहुत पुराना बड़ा-सा घर देखा, जिसका आर्कीटेक्चर बहुत ही पुराना था और जिसकी दीवारों पर हथियार और शेर बने हुए थे और कहीं-कहीं दीवारों से प्लास्टर उखड़ गया था। छत की कई बरसों से सफेदी नहीं की गयी थी, शीशे इन्द्रधनुषी हो गये थे और सीढ़ियों के बीच की दरारों में घास उग आई थी। सभी कुछ जीर्ण-शीर्ण हो चुका था और किसी किस्म की कोई देखभाल नहीं की जा रही थी, फिर भी घर पसन्द आया। घर किसी बूढ़ी कुँवारी आंटी की तरह बहुत ही काव्यात्मक, प्यारा और हसीन लग रहा था। मेन पोर्च के सामने कुछ ही कदमों पर एक तालाब चमक रहा था, जिसमें दो बतखें तैर रही थीं और तैर रही थी एक खिलौना नाव। तालाब के चारों तरफ़ एक ही उम्र के, एक ही मोटाई के भुर्ज (बर्च) के पेड़ थे।

"क्या बात है, तालाब भी है!" कवालोव ने सूरज की किरणों की वजह से आँखें मिचमिचाते हुए कहा, "यह बहुत ही खूबसूरत है। इसके अन्दर कार्पस हैं?"

"हाँ,...कभी हुआ करते थे, पर जब तालाब को साफ करना बन्द कर दिया, तो सारे कार्पस मर गये।

"यूँ ही, बेकार में", कवालोव ने उदास लहजों में कहा, "तालाब को जितनी बार हो सके साफ करना चाहिए और यह इसलिए भी ज़रूरी है, क्योंकि गाद (सिल्ट) और वाटर प्लांट्स खेती के लिए अच्छी खाद का काम करते हैं। जानती हो वेरा, जब हम इस जागीर को ख़रीद लेंगे, तो तालाब के किनारे उन बल्लियों पर एक समर हाउस बनायेंगे और उसके साथ ही एक छोटा-सा पुल बनायेंगे। ऐसा समर हाउस मैंने प्रिन्स अफरोन्तोव के यहाँ देखा था।"

"समर हाउस में बैठ कर चाय...।" वेराचकाने लम्बी साँस ली।

"हाँ,...वह वहाँ घर के साथ मीनार कैसी है?"

"यह मेहमानों के लिए आउट-हाउस है।" मिखाइलोव ने जवाब दिया।

"वह काफ़ी हिल रही है। हम उसे तोड़ देंगे। सच कहें, तो काफ़ी कुछ तोड़ना पड़ेगा। काफ़ी कुछ।"

तभी अचानक किसी औरत के रोने की आवाज़ बहुत साफ़-साफ़ सुनाई पड़ी। कवालोव ने घर के अन्दर झाँककर देखा, तभी एक खिड़की बन्द होने की आवाज़ आई और इन्द्रधनुषी पुराने शीशे में एक पल के लिए दो रोई हुई आँखें चमक गयीं। रोनेवाला ज़ाहिर है अपने रोने से शर्मिन्दा था और खिड़की बन्द करके अपने आप पर्दे के पीछे छिप गया था।

"क्या आप बग़ीचा और बग़ीचे में घर को देखना पसन्द करेंगे?" मिखाइलोव ने अपने चेहरे को सिकोड़ते और फीका-सा मुस्कराते हुए जल्दी-जल्दी कहा, "चलिए सर,...सबसे अहम घर नहीं, घर के साथ जो कुछ है, वह ज़्यादा अहम है...।"

कवालोव मवेशी घर और सराय देखने चल पड़े। वकील ने हर सराय का घूमकर मुआयना किया, ग़ौर से देखा, अच्छी तरह से सूँघा और अपने ज्ञान द्वारा उनको दोबारा से बनाया। उसने पूछा कि जागीर में कितने दिस्यातीन (एक दिस्यातीन = 2.7 एकड़) हैं? मवेशी घर में कितने मवेशी हैं? फिर सारे रूस को गाली दी कि बेवजह जंगल काटते रहते हैं और मिखाइलोव को कोसा कि वह यूँ ही इतनी खाद बर्बाद कर रहा है वग़ैरह-वग़ैरह। वह यह सब कह रहा था और साथ-साथ अपनी वेरचका को भी देख रहा था और वह भी सारे समय उसे ही देख रही थी, अपनी आँखें उस पर से हटाती ही नहीं थी और सोच रही थी, तुम कितने समझदार हो।

मवेशी घर देखते वक़्त एक बार फिर रोने की आवाज़ सुनाई दी।

"सुनिए यह कौन रो रहा है?" वेराचका ने पूछा।

मिखाइलोव ने ऐसे ही हवा में हाथ फेंके और मुड़ गया।

"अजीब बात है", वेराचका बुदबुदायी, जब हिचकियाँ न खत्म होने वाले हिस्टीरियाई रोने में बदल गयीं...," मुझे यकीन है, या तो किसी की पिटाई की जा रही है या किसी को मारा जा रहा है।"

"मेरी बीवी, भगवान उसे ठीक रखे...।" मिखाइलोव ने बताया।

"वह रो क्यों रही है?"

"कमज़ोर इन्सान है, औरत है सर, वह बर्दाश्त नहीं कर पा रही है कि हम अपनी यह जागीर बेच रहे हैं।"

"फिर आप क्यों बेच रहे हैं?" वेराचका ने पूछा।

"मेम साहब, हम नहीं बेच रहे हैं, बैंक...।"

"अजीब बात है, आप इसकी इजाज़त कैसे दे रहे हैं?"

मिखाइलोव ने आश्चर्य से वेराचका के गुलाबी चेहरे को देखा और फिर अपने

कन्धे उचका दिये।

"सूद तो देना पड़ता है,..." उसने कहा, "हर साल 2100 रूबल! कहाँ से लाऊँ इतने रूबल? चाहो न चाहो, कुछ तो करना ही पड़ता है। औरतें तो सबको मालूम है, कमज़ोर होती हैं। इसलिए उसे इस जागीर के बिकने का अफसोस है। अफसोस तो मुझे और मेरे बच्चों को भी है...नौकरों के सामने शरम आती है...। आपने अभी-अभी तालाब के पास कहा था न कि कुछ तो तोड़ना पड़ेगा और कुछ तो नया बनाना पड़ेगा। उसके लिए तो यह सीने में छुरी घोंपने के समान है।"

घर के करीब वापस आते हुए कवालोव ने देखा, एक कटे हुए बाल वाला स्कूली लड़का और दो लड़कियाँ, मतलब मिखाइलोव के बच्चे। ख़रीददारों की तरफ़ देखते हुए ये बच्चे क्या सोच रहे होंगे? वेराचका शायद उनके ख़्यालों को समझ गयी थी...जब वह घोड़ागाड़ी में अपने घर वापस जाने के लिए बैठी, उसके लिए तब तक सारी ख़ूबसूरती खो चुकी थी। वह ताज़ी हवा और उस काव्यात्मक घर के सपने सब उसके लिए बेमानी और निरर्थक हो चुके थे।

"यह सब कितना खराब और बेमजा है! उसने अपने शौहर से कहा, "सच, उन्हें 2100 रूबल दे देने चाहिए। वे अपनी जागीर में ही रहें।"

"तुम कितनी समझदार हो!" कवालोव हँस पड़ा, "सच, इन पर तरस आता है, पर ये ख़ुद ही क़सूरवार हैं। उन्हें किसने कहा था जागीर खड़ी करने को? क्यों उन्होंने जागीर की देखभाल नहीं की? सच में तो उन पर तरस भी नहीं खाना चाहिए। अगर समझदारी से इस जागीर का इस्तेमाल करें, वैज्ञानिक तरीके से खेती करें...पशुपालन को बढ़ायें तो यहाँ बड़े आराम से रहा जा सकता है...पर उन सुअरों ने कुछ नहीं किया...वह शायद शराबी और जुआरी है,...तुमने उसकी शक्ल देखी थी? और बीवी फैशनेबल और खर्चीली थी। मैं ऐसे इन्सानों को अच्छी तरह जानता हूँ।"

"स्तेपा, तुम इन्हें कैसे जानते हो?"

"जानता हूँ। शिकायत है कि सूद नहीं दे सकते। मैं नहीं समझ पा रहा हूँ, क्या 2100 रूबल निकालने इतने मुश्किल हैं? अगर वैज्ञानिक तरीके से खेती करें, ज़मीन में खाद डालें और पशुपालन को बढ़ायें...अगर यहाँ के मौसम और इनकी माली हालात को ध्यान में रखें, तो एक दिस्यातीन में ज़िन्दगी बसर हो सकती है!" स्तेपा घर पहुँचने तक यही सब कहता रहा और बीवी ध्यान से सुनती रही। उसके हर शब्द पर विश्वास करती रही, फिर भी पहले जैसा मूड वापस नहीं आया। मिखाइलोव की फीकी मुस्कान और रोती हुई आँखें उसके दिमाग़ से बाहर ही नहीं जा रही थीं। जब दो बार स्तेपा भाव-ताव करने के लिए गया था और जब उसने यह जागीर उसको गिफ्ट की, तो यह सब उसे बहुत ही नीरस और ऊबाऊ लगा...उसके मन में एक ही तस्वीर बार-बार उभरती, कैसे मिखाइलोव सपरिवार घोड़ागाड़ी में बैठ रहा है और रोते-रोते बरसों तक रह चुके अपने घर से निकल रहा है। जितना भी मन

ज़्यादा उदास और भावुक होता, उतना ही ज़्यादा स्तेपा इठलाता हुआ दिखाई देता। वह और भी ज़्यादा कटुता के साथ वैज्ञानिक रीति से खेती की बात करता, खोई हुई किताबों और पत्रिकाओं के नाम लिस्ट में से काटता, मिखाइलोव पर हँसता और आख़ीर में उसके वैज्ञानिक रीति से खेती करने के सपने निहायत ही बेहया शेखी बघारने की बात में तब्दील हो जाते...।

"तुम देखना," उसने कहा, "मैं मिखाइलोव नहीं हूँ। मैं दिखा दूँगा, काम कैसे किया जाता है। हाँ, दिखा दूँगा।"

जब कवालोव खाली पड़े मिखाइलोव के परिसर में आये, तो वेराचका की नजर सबसे पहले रहने वालों द्वारा छोड़े गये अवशेषों पर पड़ी--छोटे बच्चों के हाथों द्वारा लिखा उनकी स्टडी का टाइमटेबल, बिना सिर की एक गुड़िया, भीगे हुए निवाले के पीछे उड़ता हुआ एक नीला घाघरा और दीवार पर लिखे ये शब्द—नताशा बेवकूफ़ है। इसी तरह की बहुत-सी चीज़ें, इसी तरह के बहुत सारे अवशेष, जो रहने वालों की याद दिला रहे थे। मुख़्तसर में गैर के दुख को भुलाने के लिए बहुत-सा ऐसा था, जिसे पेंट करना था, रंगना था, फिर से जोड़ना था और तोड़ना था।

प्रेम

रात के तीन बजे हैं। ख़ामोश अप्रैल की रात मेरी खिड़कियों में से झाँक रही है और अपने सितारों से मुझे प्यार से सहेज रही है। मैं सो नहीं रहा हूँ। मैं जाग रहा हूँ। मैं बहुत खुश हूँ।

सिर से पैर तक मेरे अन्दर एक अजीब और अनजाना अहसास फटा पड़ रहा है। मैं उसका विश्लेषण नहीं कर पा रहा हूँ। वक़्त ही नहीं है। सुस्ती! और फिर भाड़ में जाये यह विश्लेषण! कौन इन्सान अपने अहसास या ख़्यालों का कोई विश्लेषण कर सकता है या विचार ढूँढ़ सकता है, जब वह एकतरफ़ा विश्लेषण कर रहा हो या फिर जब उसे पता लगे कि वह दो सौ हज़ार रूबल जीत गया है?

क़रीब-क़रीब इसी तरह शुरू हुआ था मेरा प्रेम-पत्र उन्नीस साल की लड़की साशा के लिए जिसे मैं बेइन्तहा प्यार करता था। मैंने उसे पाँच बार शुरू किया और उतनी ही बार मैंने काग़ज़ को फाड़ा। पूरे-पूरे पन्नों को अंडर लाइन किया और फिर उन्हें दोबारा लिखा। मैं इस खत को देर तक लिखता रहा, जैसा कि किसी ऑर्डर वाला नॉवल लिखने के साथ होता है और वह कतई इसलिए नहीं कि ख़त लम्बा, जबर्दस्त और दिल को छूने वाला हो बल्कि इसलिए कि मैं चाहता था कि यह ख़त लिखने की प्रक्रिया अन्तहीन और शाश्वत बनी रहे, ख़ासकर जब मैं अपने कमरे की खामोशी में बैठा हुआ हूँ, जिसमें बसन्त की रात झाँक रही है या फिर अपने खुद के सपनों से बतिया रहा हूँ। मैं इन लाइनों के बीच में एक बड़ा प्यारा चेहरा देखा करता था और मुझे ऐसा लगता कि मेरे साथ मेरी मेज़ पर मेरी जैसी ही सीधी-सादी, खुशगवार और बेवकूफ़ आत्माएँ बैठी थीं और इतमीनान से मुस्करा रही थीं और मेरी तरह ही लिखे जा रही थीं। मैं लिख रहा था और साथ-साथ अपने हाथ को निहार रहा था। उस हाथ को, जो अभी-अभी हाथ मिलाने से अभी तक दुख रहा था और अगर मुझे दूसरी तरफ़ देखना पड़ता, तो हरे विकट गेट की जाली नज़र आती थी। इस जाली के उस पार से ही साशा ने मुझे देखा था, जब मैंने उससे विदा ली थी। जब मैं साशा से विदा ले रहा था, तो किसी भी चीज़ के बारे में नहीं सोच रहा था। मैं किसी भी आम इन्सान की तरह उसकी सुन्दरता पर मोहित था।

जाली के उस पार दो आँखें देखने के बाद मुझे सहज ही महसूस हुआ कि उससे प्यार हो गया है। हमारे दोनों के बीच सब कुछ तय हो चुका है और यह भी कि मुझे सिर्फ़ कुछ औपचारिकताओं और लोकाचारों को पूरा भर करना है।

अपने प्रेम-पत्र को टाइप करने में, आराम से कपड़े पहनने में, फिर आहिस्ता से घर से बाहर जाने में और इस खजाने को लेटरबॉक्स तक ले जाने में भी बहुत मज़ा है। आसमान में तारे अब नहीं हैं, उनकी जगह अलसाये घरों की छतों पर पूर्व में असीम क्षितिज सफेद हो रहा है और कहीं-कहीं बादल क्षितिज की असीमता को तोड़ रहे हैं, इस क्षितिज से सारे आसमान पर पीला रंग फैल रहा है। शहर सो रहा है, लेकिन पानी ढोने वाले अपने-अपने घरों से बाहर आ गये हैं और कहीं दूर किसी फैक्ट्री में सायरन कामगारों को जगा रहा है। लेटरबॉक्स ओस से ढका हुआ है। उसके पास ही एक घंटेनुमा तुर्रे की टोपी पहने और हाथ में लकड़ी लिये एक बेढब चौकीदार खड़ा है। वह हमेशा एक खम्भे की तरह खड़ा रहता है। न तो सोता हुआ और न ही जागा हुआ, कहीं तो इन दोनों के बीच...।

अगर लेटरबॉक्सों को पता लग जाये कि कितनी बार आदमी उनके पास अपनी किस्मत के फैसलों के लिए आते हैं, तो वे इतने संजीदा और शान्त कभी न दिखते। कम से-कम जहाँ तक मेरी बात है, तो मैंने इस अपने लेटरबॉक्स को अभी-अभी चूमा है और जब भी मैं इसे देखता हूँ, तो याद आता है कि डाक आज का सबसे बड़ा वरदान है।

उन सबों को जो कभी तो प्रेम करते थे, मैं चाहता हूँ याद करें कि कैसे लेटरबॉक्स में खत डालने के बाद वे जल्दी-जल्दी घर लौटा करते थे, फौरन बिस्तर में घुस जाया करते थे और पूरे इतमीनान और यकीन से अपने आपको कम्बल से ढक लिया करते थे। मैं चाहता हूँ, वे याद करें कि अगले दिन जब सुबह उठते थे, तो शाम की यादें ताज़ा हो जाया करती थीं और तब वे पर्दों की चुन्नटों में से झाँकती सुबह की रोशनी को बड़े आश्चर्य से देखा करते थे...।

खैर, चलिए अपनी बात जारी रखता हूँ। अगले दिन दोपहर में साशा की नौकरानी यह जवाब लेकर आयी—मुझे बहुत खुशी हुई। मेहरबानी करके आज शाम हमारे यहाँ ज़रूर आइए। मैं आपका इन्तज़ार करूँगी। आपकी सा।...एक भी कॉमा, अल्पविराम नहीं था। इस पंक्चुएशन मार्क की अनुपस्थिति, इसी तरह से ज़रूर में छोटे 'उ' की मात्रा की अनुपस्थिति, सारा-का-सारा ख़त और यहाँ तक कि लम्बा और सँकरा लिफ़ाफ़ा, जिसमें वह ख़त रखा था; यह सब मेरे मन को छू गये। बड़ी ही मोटी, पर नर्वस लिखाई में मैं साशा की चाल, हँसते हुए मेवे उठाने के तरीके और उसके होठों के हिलने को साफ-साफ देख सकता था, पर ख़त के सार ने मुझे बिलकुल भी सन्तुष्ट नहीं किया। पहली बात तो काव्यात्मक ख़तों का इस तरह जवाब नहीं दिया जाता और दूसरी बात क्यों मैं साशा के घर जाऊँ और तब तक इन्तज़ार

करूँ, जब तक उसकी मोटी माँ, उसके भाई और दूसरे ऐरे-गैरे लोग हम दोनों को अकेला न छोड़ दें? और वे अकेला छोड़ने की सोचेंगे ही नहीं और इसमें कोई ग़लत या ख़राब बात भी नहीं है। अपने असमंजस, आश्चर्य को काबू में रखता सिर्फ़ इसलिए कि आपके इर्द-गिर्द कोई जीता-जागता इन्सान मँडरा रहा है, वैसे ही, जैसे कोई अधबहरी बुढ़िया या कोई छोटी बच्ची अपने सवालों के साथ! मैंने नौकरानी के हाथ साशा को जवाब भेज दिया, जिसमें कहा कि कोई बगीचा या कोई बूलेवार मुलाक़ात के लिए चुने। मेरा सुझाव फौरन मान लिया गया, मतलब मेरी मुराद पूरी हुई।

शाम के पाँच बजे मैं शहर के बगीचे के सबसे दूर और घने कोने में पहुँच गया। बगीचे में एक भी इन्सान नहीं था। यह मुलाक़ात कहीं पास के ही बूलेवार था समर हाउस में भी हो सकती थी, पर औरतें अधूरा इश्क पसन्द नहीं करतीं। अगर शहद खाना है, तो चम्मच वैसा ही होना चाहिए। अगर मुलाक़ात करनी है तो सबसे दूर और दुर्गम जगह होनी चाहिए जहाँ गुंडों-मवालियों से टकराने का डर हो या नाचते-गाते ज़मींदार हों।

जब मैं साशा के करीब पहुँचा, तो उसकी कमर मेरी तरफ़ थी। उस कमर में मैंने बहुत-सा कुछ रहस्मय पढ़ा। मुझे लगा, कमर, गर्दन और उसकी फ्रॉक पर काले पोलका धब्बे कह रहे थे, ख़ामोश! साशा ने सादे काटन की फ्रॉक पहनी हुई थी, जिसके ऊपर एक हलका-सा लबादा डाला हुआ था। रहस्यमयता को बढ़ाने के लिए उसने अपना चेहरा एक सफेद लेसीदार घूँघट से ढका हुआ था। इस ख़ामोशी को महफ़ूज रखने के लिए मुझे दबे पाँव जाना चाहिए और मन्द आवाज़ में बात करनी चाहिए।

जितना मैं अब समझ पाया हूँ, इस मुलाक़ात का केन्द्र मैं नहीं था, बल्कि मैं था सिर्फ़ एक विस्तार। साशा के लिए यह मुलाक़ात इतनी अहम नहीं थी, जितनी कि इसकी रूमानियत, इसकी रहस्यमयता, बोसे, उदास पेड़ों की ख़ामोशी और मेरी क़समें...। एक पल भी ऐसा नहीं था, जब वह कहीं खो गयी हो या सर्द हो गयी हो या फिर अपने चेहरे से रहस्यमयता के भाव हटाये हों और यह भी सच है कि अगर मेरी जगह कोई ईवान सिदरिच या सिदर ईवानविच होता, तो भी वह वैसी ही खुश होती और इतना ही अच्छा लगता। अब आप ही बताइये भला इन हालात में कोई पूछ सकता है कि आप मुझसे प्यार करती हैं या नहीं? और अगर करती हैं, तो सच में या यूँ ही?

बगीचे से मैं साशा को अपने घर ले आया। एक कुँवारे के घर में उसकी प्रेयसी की उपस्थिति संगीत और शराब का असर रखती है। फ़ौरन आदमी अपने भविष्य के बारे में बातें शुरू कर देता है और जानते हैं, ऐसे में आत्मविश्वास और स्वाभिमान की तो कोई सीमा ही नहीं रहती। आप तरह-तरह की योजनाएँ बनाते हैं, मामूली चीज़ों के बारे में बातें करते हैं और इतनी मीठी नानसेन्स बातें करते

हैं कि सुनने वाली को आपसे सहमत होने के लिए बहुत प्रेम और ज़िन्दगी का कोई तजुर्बा नहीं होना चाहिए। यह तो हम आदमियों की खुशक़िस्मती है कि प्रेम करने वाली औरतें हमेशा प्यार में अन्धी होती हैं और कभी भी ज़िन्दगी को नहीं समझ पातीं। उनका सहमत होना और हाँ कर देना ही काफ़ी नहीं होता, बल्कि वह भगवान के डर से पीली हो जाती हैं और इस अपने पागल के हर शब्द को वह बहुत श्रद्धा और सम्मान से सुनती हैं। साशा मेरा हर शब्द बड़े ध्यान से सुन रही थी। थोड़ी ही देर में उसके चेहरे पर अनमनापन साफ़ नज़र आने लगा। अब वह मेरी बात बिलकुल नहीं सुन रही थी। अपने भविष्य के बारे में जो मैं उसे बता रहा था, वह उसे बिलकुल सतही तौर पर छू रहा था और मैं यूँ ही बेकार में अपनी योजनाएँ उसे बताएँ जा रहा था। उसे सिर्फ़ एक ही सवाल में रस था, उसका कमरा कहाँ होगा, इस कमरे में वालपेपर कैसे होंगे और मेरे पास छोटा खड़ा पिआनो क्यों है और क्यों बड़ा पिआनो नहीं है वग़ैरह-वग़ैरह? उसने बड़े गौर से मेरी मेज़ पर पड़ी चीज़ों को, फोटोग्राफ्स को देखा, बोतलों को सूँघा, लिफ़ाफ़ों से पुराने टिकट उतारे, जो उसे जाने क्यों चाहिए थे?

"मेरे लिए पुराने टिकट इकट्ठे करो," उसने अपने चेहरे को संजीदा बनाते हुए कहा, "प्लीज़, इकट्ठे करोगे ना?"

फिर उसे कहीं से खिड़की पर एक अखरोट मिल गया। उसने उसे ज़ोर से दबाया और खा गयी।

"तुम अपनी किताबों पर लेबल क्यों नहीं लगाते?" उसने किताबों के शेल्फ पर नज़र डालते हुए पूछा।

"किसलिए?"

"इसलिए कि हर किताब का अपना नम्बर हो...फिर मैं अपनी किताबें कहाँ रखूँगी? मेरे पास भी तो किताबें हैं।"

"तुम्हारे पास कौन-सी किताबें हैं?" मैंने पूछा।

साशा ने अपनी भौंहें उठायीं, थोड़ी देर कुछ सोचा और फिर कहा, "तरह-तरह की... ।"

अगर मैं उससे पूछने की सोचता कि वह क्या सोचती है, उसके कैसे विचार हैं, उसकी धारणाएँ क्या हैं, उसके लक्ष्य और उद्देश्य क्या हैं, तो शायद वह इसी तरह अपनी भौंहें उठाती, थोड़ी देर कुछ सोचती और फिर कहती, तरह-तरह की... ।

उसके बाद मैं साशा को घर छोड़ आया और जब तक हमारी सगाई नहीं हो गयी, मैं उसके लिए सिर्फ़ एक मंगेतर ही बना रहा। अगर पाठक मुझे सिर्फ़ अपने एक तजुर्बे की बिना पर बताने दें, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मंगेतर बने रहना बहुत ही नीरस स्थिति है, शौहर बनने या कुछ न बनने से कहीं ज़्यादा नीरस स्थिति। मंगेतर कहीं का नहीं होता, वैसे ही, जैसे धोबी का कुत्ता शादीशुदा

नहीं होता और न ही अपने आपको कुँवारा कह सकता है। मतलब उसी चौकीदार की तरह, जिसके बारे में मैंने आपको अभी थोड़ी देर पहले बताया था।

हर रोज़ जैसे ही मेरे पास वक़्त होता, मैं अपनी मंगेतर के पास भागता। अकसर उसके पास जाते हुए मैं अपने साथ ले जाता था अनगिनत हज़ारों उम्मीदें, सपने इच्छाएँ और बातें। मुझे हर बार लगता कि जैसे ही नौकरानी दरवाज़ा खोलेगी, मैं फौरन साशा से लिपट जाऊँगा, पर हर बार मैं जब भी अपनी मंगेतर के घर गया, मैंने उसके सारे परिवार को घर पर उसके दहेज के कपड़ों को सीते हुए पाया (वे दो महीने लगातार सिलाई करते रहे और सिर्फ़ सौ रूबल जितने के ही सी पाये)। सारा घर प्रेस और चारकोल से महकता था। पैरों के नीचे बकल्स चरमराते थे। दो बड़े कमरे चादरों, सूती छपे हुए मोटे कपड़े और वे ऊन के ढेरों से ठसाठस भरे हुए थे और इन ढेरों के बीच में से साशा का दाँतों में धागा दबाए हुए चेहरा झाँका करता था। सब सीने वाले मेरा खुशी से स्वागत किया करते थे, पर फौरन ही मुझे डाइनिंग हॉल में भेज दिया करते थे, जहाँ मैं किसी को डिस्टर्ब नहीं कर सकता था और वह सब देख सकता था, जो मर्दों को देखना चाहिए था। मुझे मन मार के अनिच्छा से डाइनिंगरूम में बैठना पड़ता था और उस निठल्ली पमिनोवना से बतियाना पड़ता था। साशा बहुत ही उत्तेजित और बिज़ी हुआ करती थी और कभी-कभी वे ऊन का गोला या कोई रिंग या कोई ऐसी ही नीरस चीज़ लिये मेरे पास से भागते हुए गुज़रा करती।

"बस, थोड़ी देर और इन्तज़ार करो.. मैं अभी आयी।" वह कहा करती, जब भी मैं अपनी विनतीभरी आँखों से उसे देखा करता, "जानते हो, बेवकूफ़ सतीपानीदा ने उस ड्रेस के मोती ख़राब कर दिये हैं।"

और मैं उसका इन्तज़ार किये बिना ही गुस्से में बाहर चला जाया करता था और बगीचे की पगडंडियों पर अपनी मंगेतर के घर के आस-पास के बाँस के पेड़ों के जंगल में थोड़ा घूम आया करता था। ऐसा भी होता था कि कभी अगर अपनी मंगेतर के साथ घूमने का दिल किया या घोड़ागाड़ी में सैर करने का मन किया, तो जब उसके यहाँ जाता, तो वह आउटहाउस में अपनी माँ के साथ कहीं जाने के लिए हाथ में छतरी लिये तैयार खड़ी मिलती थी।

"हम बाज़ार जा रहे हैं।" वह कहती, "कश्मीरी शॉल खरीदनी है और हैट बदलवाना है।"

बस, सारी सैर चौपट। मैं बैरोनस के साथ हो जाता और उनके साथ बाज़ार जाता। यह सुनना और देखना निहायत ही बोरिंग और नीरस होता है, कैसे औरतें ख़रीददारी करती हैं, भाव-ताव करती हैं और कैसे दुकानदार से ज़्यादा चतुर होने की कोशिश करती हैं। तब मुझे बहुत शरम आयी, जब ढेर सारा सामान खुलवाने और देखने के बाद साशा ने बहुत कम कीमत लगायी और बिना कुछ लिये यहाँ

तक कि 40-50 कोपेक तक का कपड़ा काटने के लिए बिना कहे दुकान से बाहर निकल आयी। दुकान से बाहर आने के बाद साशा और उसकी माँ बड़े ही परेशान और डरे हुए चेहरों में बात कर रही थीं और कह रही थीं कि उन्हें जो चाहिए था, उसे न ख़रीदकर उन्होंने ग़लती की थी और यह भी कि कॉटन के कपड़े पर बहुत ही गहरे रंग के फूल बने हुए थे।

नहीं, सच बात तो यह है कि मंगेतर होना ही बड़ी बोरिंग और नीरस बात है। भगवान उसका भला करें!

अब मैं शादीशुदा हूँ। इस वक़्त शाम हो गयी है। मैं अपने कमरे में बैठा पढ़ रहा हूँ। मेरे पीछे सोफे पर साशा बैठी है और ज़ोर-ज़ोर से कुछ चबा रही है। मेरा मन बीयर पीने को कर रहा है।

"ज़रा ढूँढ़ो तो साशा, स्टोपर..." मैं कहता हूँ, "वह यहीं कहीं पड़ा होगा।"

साशा झटके से उठती है, लापरवाही से काग़ज़ों के दो-तीन ढेरों में ढूँढ़ती है, माचिस गिरा देती है और स्टोपर को न ढूँढ़ पाने के बाद फिर खामोशी से बैठ जाती है...पाँच मिनट गुज़र जाते हैं, दस...मुझे ओपनर का कीड़ा खाये जा रहा है, प्यास और उदासी...।

"साशा, ज़रा ओपनर ढूँढ़ो तो!" मैं फिर कहता हूँ।

साशा फिर झटके से उठती है। मेरे पास के काग़ज़ों के ढेर में ढूँढ़ती है। उसके चबाने की आवाज़ और काग़ज़ों की सरसराहट मुझे बेचैन, परेशान कर देती है, वैसे ही, जैसे दो चाकुओं को एक-दूसरे से रगड़ कर साफ करने की आवाज़...। मैं खड़ा हो जाता हूँ और खुद ओपनर ढूँढ़ना शुरू कर देता हूँ। आख़ीर में वह मिल ही जाता है और बीयर की बोतल खुल जाती है। साशा मेज़ के पास खड़ी हो जाती है और किसी चीज़ के बारे में देर तक बताती रहती है।

"कुछ पढ़ लिया करो, साशा...।" मैं कहता हूँ।

वह एक किताब उठाती है। मेरे सामने बैठ जाती है और पढ़ते-पढ़ते अपने होंठ हिलाने लगती है...मैं उसके छोटे माथे, हिलते हुए होठों को देख रहा हूँ और सोच रहा हूँ।

उसे बीसवाँ साल चल रहा है...मैं सोच रहा हूँ। अगर किसी समझदार लड़के को लें और उसके साथ इसकी तुलना करें, तो कितना फर्क़ है। इसकी उम्र के किसी भी लड़के के पास अपना ज़हन, ज्ञान, फ़लसफ़ा और राय होगी।

लेकिन मैं उस फर्क़ को माफ़ कर देता हूँ, वैसे ही, जैसे मैंने छोटे माथे और हिलते हुए होठों को माफ़ कर दिया है...। ऐसा भी हुआ था, मुझे अब तक याद है, मेरी जवानी और इश्क़ फ़रमाने के दिन, जब मैंने औरतों को सिर्फ़ इसलिए छोड़

दिया था, क्योंकि उनकी जुर्राबों में दाग पड़े हुए थे या फिर किसी ने एक बेवक़ूफ़ाना बात की थी या फिर उसके दाँत गन्दे थे पर साशा को मैं सब माफ़ करता हूँ, उसका चबाना, ओपनर ढूँढ़ने में लापरवाही, उसका बड़बड़ाना, उसका फूहड़पन और उसकी लम्बी बेकार की बातें। मैं उसे सहज ही माफ़ कर देता हूँ। अपनी इच्छाशक्ति का इस्तेमाल नहीं करता हूँ। साशा की ग़लतियाँ, मानो मेरी ग़लतियाँ हैं और बहुत कुछ, जो मुझे पहले कचोटता था, काटता था, अब वही सब मुझे भावुक बना देता है। कभी-कभी तो उत्तेजित भी कर देता है। इस समग्र माफ़ी की एक ही वजह है, वह है, साशा के प्रति मेरा प्रेम, पर इस प्रेम की वजह क्या है, कहाँ है, सच कहता हूँ, नहीं जानता।

सुन्दरता

मुझे याद है, तब मैं शायद पाँचवीं या छठी क्लास में पढ़ता था। मैं अपने दादा के साथ दनस्कोई मंडल के बलशोई क्रेयकोई गाँव से रस्तोव-ना दनू जा रहा था। अगस्त का बहुत ही ऊबा और थका देने वाला दिन था। गर्म लू हमारे चेहरों पर गर्द के बादल फेंक रही थी, हमें अन्धा बना रही थी। गर्मी से हलक सूख गया था। न कुछ देखने, न कोई बात करने और न ही कुछ सोचने को मन कर रहा था। जब ऊँघते हुए कोचवान कारपो ने घोड़े को चाबुक मारने की धमकी देते हुए मेरे चोगे पर चाबुक मारा, तो मैंने कोई विरोध नहीं किया। चूँ तक नहीं की और आधी नींद से जागते हुए मैंने बहुत ही उदासी और विनम्रता से दूर तक अपने सामने के रास्ते को देखा, गर्द के बीच में से कहीं कोई गाँव तो नज़र नहीं आ रहा, घोड़ों को चारा खिलाने के लिए हम अरमीनिया के एक बड़े गाँव बाख्वी-सलाख में दादाजी के बड़े रईस अरमीनियन मित्र के यहाँ रुके। मैंने जीवन में इससे पहले कभी इतना भौंडा और कुरूप अरमीनियन नहीं देखा था। ज़रा अन्दाज लगाइए एक छोटा घुटा हुआ सिर, उस पर घनी नीचे लटकती हुई भौंहें, तोते की सी नाक, चौड़े मुँह पर लम्बी सफेद मूँछें, मुँह के नीचे लम्बी चेरी सी लटकती ठोढ़ी, यह चेहरा बड़े ही अजीब ढंग से मोटे और कुबड़े शरीर से चिपकाया गया था और शरीर बड़े ही अद्भुत कपड़ों से ढका हुआ था, छोटे लाल बास्कट और गहरे आसमानी रंग की चौड़ी सलवार में। यह शरीर अपने पैरों को चौड़ा करते हुए और चप्पलों को घसीटते हुए चला करता था, चिबुक को मुँह में दबाये ही बोला करता था और एक अरमीनियन के गुणों से परिपूर्ण था। मुस्कराता नहीं था, अपनी आँखें नीची रखा करता था और अपने मेहमानों की तरफ़ कम-से-कम तवज्जो देने की कोशिश किया करता था।

अरमीनियन के कमरों में न तो लू थी, न ही गर्द, पर वातावरण स्तेप और रास्ते जैसा ही उबाऊ, अप्रिय और घुटन भरा था। मुझे याद है, धूल से लिपटा और गर्मी से काला हुआ मैं एक कोने में हरे सन्दूक पर बैठा था। बिना वारनिश की हुई दीवारें, फर्नीचर और गन्दे फर्श, धूप में सूखी हुई लकड़ी की खुशबू फैला रहे थे। जिधर भी देखो, हर तरफ़ मक्खियाँ, मक्खियाँ और मक्खियाँ ही भिनभिना रही

थीं...दादाजी और अरमीनियन हल्की आवाज़ में जई के आटे और सब्ज़ियों के बारे में बातें कर रहे थे...। मैं जानता था, पूरा एक घंटा सामावार (चाय बनाने का ब्राँड़ा का बर्तन जिसके नीचे कोयले रखे जाते थे) लगाने में लगा देंगे। दादाजी फिर पूरा एक घंटा चाय पियेंगे और फिर दो-तीन घंटे सोयेंगे, एक चौथाई दिन मेरा इन्तज़ार में कट जायेगा। उसके बाद फिर वही गर्मी, वही धूल और वही ऊबड़-खाबड़ रास्ते। मैं दो आवाज़ों की खुसुर-फुसुर सुन रहा था। मुझे लगने लगा कि इस अरमीनियन को, क्रॉकरी से भरी अलमारी को, मक्खियों को और इन खिड़कियों को जिन पर गर्म सूरज की किरणें पड़ रही थीं, बहुत मुद्दत से जानता था और लम्बे भविष्य में ही इनसे अलग हो जाऊँगा और उसी पल मुझे स्तेप, सूरज और मक्खियों के प्रति नफरत ने जकड़ लिया...।

शॉल में ओढ़े एक नौकरानी क्रॉकरी की ट्रे ले आई और उसके बाद सामावार अरमीनियन बड़े आराम से आँगन में गया और चिल्लाया, "माशया, आ और चाय डाल! तू कहाँ है, माशया?"

तेज़ कदमों की आवाज़ सुनाई पड़ी और कमरे में एक सोलह साल की लड़की सूती कपड़े पहने और सफेद चुन्नी ओढ़े दाखिल हुई। प्यालों को धोते हुए वह मेरी तरफ़ पीठ किये खड़ी रही और मैं इतना ही देख पाया कि उसकी कमर पतली थी, वह नंगे पैर थी और उसकी नीची बँधी सलवार उसकी छोटी और नंगी एड़ियाँ ढक रही थीं।

मेज़बान ने मुझे चाय पीने का न्यौता दिया। मेज़ पर बैठते हुए मैंने चाय का प्याला देती हुई लड़की के चेहरे को देखा और अचानक महसूस किया कि भीनी हवा का एक झोंका मेरे अन्तर्मन को छू गया और अपने साथ सारे दिन की धूल और ऊब को उड़ा ले गया। मैंने उसके चेहरे के सम्मोहित कर देने वाले ख़ूबसूरत नयन-नक्श को देखा, वैसे ही नयन-नक्श, जो मैंने कभी अपने होशो-हवाश में देखे थे और जो मुझे सपनों में पागल बना दिया करते थे। मेरे सामने सबसे ख़ूबसूरत लड़की खड़ी थी और यह मैं पहली ही नज़र में समझ गया था, वैसे ही, जैसे बिजली की चमक समझ जाता था।

मैं कसम खाकर कह सकता हूँ कि माशा या जैसा कि उसके पिता उसे पुकारते थे माशया, सचमुच बहुत सुन्दर थी, पर मैं उसको साबित नहीं कर सकता। कभी ऐसा भी होता है कि बादल ऐसे ही क्षितिज पर एक झुंड में मँडराते रहते हैं और उनके पीछे छिपा सूरज उनको रंग देता है और आसमान में सब तरह के रंग बिखर जाते हैं, जामनी, नारंगी, सुनहरे, नीलम और धूसर गुलाबी कोई बादल किसी पादरी की शक्ल लिये होता है, तो कोई मछली की, तो तीसरा घूँघट के अन्दर किसी तुर्की सुन्दरी का चेहरा। एक चमक ने तिहाई आसमान ढक लिया है, चर्च के क्रॉस और येशू के घर के सारे शीशों को चमका रहा है, नदी और घाटियों को चमका रहा

है, वही चमक पेड़ों पर काँप रही है और कहीं दूर—बहुत दूर शाम के झुटपुटे में जंगली बतखों का झुंड कहीं तो रात बिताने के लिए उड़ा जा रहा है...गायों को हाँकता हुआ गड़रिया, नहर के उस पार जाता हुआ सर्वेयर और घूमते हुए लोग सब सूरज को डूबते हुए देख रहे हैं और सभी एक ही नतीजे पर पहुँचते हैं कि वह गजब का ख़ूबसूरत है, पर न ही कोई जानता है और न ही बता सकता है कि यह सुन्दरता किसमें निहित है।

मैं ही अकेला नहीं था, जिसने अरमीनियन लड़की को ख़ूबसूरत पाया था। मेरे अस्सी साल के दादाजी, जो एक बहुत सख़्त इन्सान हैं, नारियों और प्रकृति की सुन्दरता के प्रति पूर्णतया उदासीन हैं, उन तक ने माशा को पूरे एक मिनट अपलक देखा और पूछा, "यह तुम्हारी बेटी है, अवेत नज़ारिच?"

"बेटी, हाँ, यह मेरी बेटी है..." मेज़बान ने जवाब दिया।

कोई भी चित्रकार उस अरमीनियन लड़की की सुन्दरता को उत्कृष्ट और अनलंकृत सुन्दरता का नाम देता। यह वह सुन्दरता थी, भगवान ही जानता है कहाँ से आई थी, जिसका ध्यानमात्र आपमें विश्वास प्रेरित करता था और आप देखते हैं सलीके से जड़े नयन-नक्श, बाल, आँखें, नाक, मुँह, गर्दन और छातियाँ सभी सलीके से जुड़े हुए थे और इस जवान और सुडौल शरीर की चाल मुकम्मल और मस्तानी थी और प्रकृति ने कहीं भी बारीक से-बारीक जगह में भी कोई एक भी गलती नहीं की थी। उसको देखकर लगता था कि एक आदर्श सुन्दर नारी की नाक बिलकुल माशा की नाक जैसी होनी चाहिए, रोमन जैसी लम्बी, उसके जैसी ही बड़ी काली आँखें, वैसी ही घनी पलकें, वैसी ही गहरी निगाह, वैसे ही गोरे कन्धे पर झूलते लम्बे घुँघराले काले बाल और गोरे माथे पर काली घनी भौंहें वैसी ही खूबसूरत लगती थीं, जैसे खामोश नदी में हरे रंग के नरकट। माशा की गोरी गर्दन और छोटी-छोटी उभरती छातियाँ बहुत ही खूबसूरत थीं और इनको बनाने के लिए लगता था कि बहुत ही प्रतिभा और निपुणता की आवश्यकता है। आप माशा को देख रहे हैं और धीरे-धीरे आपके मन में कुछ बहुत ही प्यारा, असामान्य और उतना ही खूबसूरत, जितनी ख़ुद माशा है, कहने की इच्छा प्रबल होती जाती है।

शुरू में तो मुझे बहुत ही अपमानजनक लगा कि माशा मेरी तरफ़ कोई ध्यान नहीं दे रही है और सारा समय नीचे ज़मीन ही देखे जा रही है, फिर मुझे लगा कि एक अभिमान और सुखभरी हवा मेरे और उसके बीच में थी और बड़ी ही ईर्ष्या से उसे मेरी नज़रों से बचा रही थी।

मैंने सोचा कि मैं पूरा का-पूरा धूल से सना हूँ, धूप की तरह तांबई रंग का हो गया हूँ और अभी बच्चा हूँ, इसी वजह से वह मेरी तरफ़ कोई ध्यान नहीं दे रही है।

थोड़ी देर बाद मैं धीरे-धीरे अपने आपके बारे में भूल गया और मैंने अपने

आपको इस सुन्दरता की अनुभूति को पूरी तरह समर्पित कर दिया। मैं स्तेप के उबाऊपन और रास्ते की धूल को भूल गया। मुझे मक्खियों की भनभन सुनाई नहीं पड़ रही थी, मैं चाय के स्वाद को महसूस नहीं कर पा रहा था, सिर्फ़ इतना महसूस कर पा रहा था कि मेरी मेज़ के उस पार एक ख़ूबसूरत लड़की खड़ी है।

मैंने सुन्दरता को अज़ीब तरह से महसूस किया। माशा ने मेरे मन में किसी किस्म की इच्छा, उत्तेजना और सुख को नहीं, एक गहन, पर सुखदायी उदासी को जन्म दिया। यह उदासी एक सपने की तरह मधुर और अस्पष्ट थी। जाने क्यों मुझे अपने आप पर, दादाजी, अरमीनियन और इस अरमीनियन लड़की पर तरस आया और महसूस हुआ कि हम चारों ने जीवन में कुछ विशेष और आवश्यक खो दिया है और उसे कभी दोबारा हासिल नहीं कर पायेंगे। दादाजी भी उदास हो गये थे। अब वह जई के आटे और भेड़ों के बारे में बात नहीं कर रहे थे। वह खामोश थे और विचारमग्न मुद्रा में माशा को देखे जा रहे थे।

चाय पीने के बाद दादाजी सो गये। मैं घर से बाहर आ गया और पोर्च में बैठ गया। घर बाख्वी-सलाख के और सभी घरों की तरह धूप में खड़ा था, न कोई पेड़ था, न कोई शेड और न ही कोई छाया। अरमीनियन का आँगन बतखों और कलाच (एक किस्म की रोटी) से भरा हुआ था और गर्मी के बावजूद जीवन्त और खुशी से भरा था। बड़े आँगन के चारों तरफ़ छोटे-छोटे बाड़ों में से एक के उस पार गाहना चल रहा था। गाहना के लिए पाटी गयी ज़मीन में खम्भे के चारों तरफ़ एक बड़े घेरे में जुते हुए घोड़े भाग रहे थे। लम्बे कुर्ते और चौड़ी सलवार पहने एक नौकर उनके साथ-साथ चाबुक हिलाता चल रहा था और इस तर्ज में कुछ चिल्ला रहा था, जैसे घोड़ों को चिढ़ाना चाहता हो और उन पर अपनी शक्ति की शेखी बघार रहा हो।

"ओ, शापितो! तुम्हें हैजा नहीं हुआ है! डरते हो?"

नीले, लाल, सफेद घोड़े बिना जाने कि क्यों उन्हें एक ही घेरे में घूमने और गेहूँ की बालियों को पैरों तले कुचलने को मजबूर किया जा रहा था, झिझकते-झिझकते जबर्दस्ती भाग रहे थे और गुस्से में अपनी दुमें हिला रहे थे। उनके खुरों के नीचे से सुनहरे रंग की धूल का गुबार उठ रहा था और बाड़े के उस पार कहीं दूर उड़ा जा रहा था। बड़े-बड़े और ऊँचे ताज़े गड्ढों के पास बहुत सारी औरतें मटके लिये खड़ी थीं और ठेलागाड़ियाँ आ-जा रही थीं। उन गड्ढों के पीछे दूसरे आँगन में एक खम्भे के चारों तरफ़ वैसे ही घोड़ों का बेड़ा भाग रहा था, वैसा ही नौकर चाबुक हिला रहा था और घोड़ों का मज़ाक़ उड़ा रहा था।

जिन सीढ़ियों पर मैं बैठा था, वे गर्म थीं। सीढ़ियों के हत्थों और खिड़कियों की चौखटों में गर्मी की वजह से कहीं-कहीं लकड़ी की गोंद निकल आई थी। सीढ़ियों और दीवारों के सायों के बीच कहीं-कहीं लाल चींटियाँ चल रही थीं। सूरज की गर्मी

ने मेरे सिर, सीने और कमर को भून दिया था, पर मैं उसकी गर्मी महसूस नहीं कर रहा था, मैं महसूस कर रहा था अपने पीछे के कमरों और लॉबियों में नंगे पैरों के चलने की आवाज़। चाय के बर्तनों को उठा, माशया हवा की महक की तरह मेरे पास से सीढ़ियों पर चढ़ती चली गयी और किसी परिन्दे की तरह एक स्याह और छोटे से कमरे के अन्दर जा पहुँची। ज़रूर रसोई ही होगी, जहाँ से भैंसे के मांस के भुनने की खुशबू आ रही थी और आ रही थीं, अरमीनियन में गुस्से में बातें करने की आवाज़ें। वह काले स्याह दरवाजों के पीछे गायब हो गयी और उसकी जगह एक कुबड़ी हरे रंग की सलवार पहने तमतमाये चेहरे वाली अरमीनियन औरत बाहर दरवाज़े पर दिखाई दी। बुढ़िया गुस्से में थी और किसी को डाँट रही थी। तुरन्त बाद रसोई की गर्मी से लाल ब्राउन ब्रेड कन्धे पर रखे माशया बाहर आयी। रोटी के बोझ से बहुत ही खूबसूरती से झुकी आँगन से खलिहान की तरफ़ भागी, बाड़े को फाँदा और सुनहरी धूल के बादलों को पारकर बैलगाड़ियों के पीछे गुम हो गयी। घोड़ों को हाँकते हुए नौकर ने चाबुक ज़मीन पर रख दिया, खामोश हो गया और एक मिनट खामोशी में बैलगाड़ियों की तरफ़ देखा और जब अरमीनियन लड़की घोड़ों के पास दोबारा नज़र आई और जब वह बाड़ को फाँदकर भागकर जा रही थी, तो वह उसे देर तक देखता रहा और फिर घोड़ों पर इस तरह चिल्लाया, जैसे मानो वह बहुत निराश था, "अरे, बेशर्मो, तुम मर क्यों नहीं जाते!"

और इसके बाद देर तक मैं लगातार उसके नंगे पैरों की आवाज़ सुनता रहा। उसका संजीदा और परेशान चेहरा फिर एक बार नज़र आया। वह फिर आँगन में जा रही थी। वह फिर सीढ़ियों से भागकर वैसी ही महकती हवा फैलाती हुई कभी रसोई में जाती, तो कभी खलिहान में, तो कभी घर के पीछे। मैं बड़ी मुश्किल से मुड़कर देख ही पाता था कि वह कहीं गायब हो जाया करती थी।

जितनी ज़्यादा बार वह अपनी खूबसूरती मेरे सामने चमकाती, उतनी ही ज़्यादा मेरी उदासी गहरा जाती। मुझे अपने आप पर, उस पर, नौकर पर अफसोस हो रहा था। हर बार वह उदासी से उसको सुनहरी धूल के बादलों के बीच में से बैलगाड़ियों के पीछे गायब होते देखा करता। उसकी सुन्दरता के प्रति यह मेरी गुलामी थी या मुझे इस बात का अफसोस था कि यह लड़की मेरी नहीं है और न ही कभी मेरी होगी और मैं उसके लिए हमेशा एक अनजान और अजनबी ही बना रहूँगा या फिर मैं साफ-साफ महसूस कर रहा था कि उसकी यह अद्भुत और असाधारण सुन्दरता महज़ एक इत्तफाक थी और इस संसार में हर चीज़ की तरह यह भी अनावश्यक, क्षणभंगुर और नश्वर है या हो सकता है मेरी यह उदासी एक ऐसी विशेष अनुभूति थी, जो किसी इन्सान में असली सुन्दरता का अवलोकन करने से पैदा होती है, भगवान ही जानता था, यह सब क्या था?

तीन घंटे पलक झपकते ही गुज़र गये। मुझे लगा, मैं अभी पूरी तरह से माशा

को देख भी नहीं पाया हूँ। इन तीन घंटों के दौरान कारपो नदी पर घोड़ों को नहला कर ले आया था और उनको गाड़ी में जोत रहा था। एक गीला घोड़ा बड़े ही सन्तोष में हिनहिना रहा था और अपने खुरों से बल्ली को हिला रहा था। कारपो ने चिल्ला कर कहा "पी...छे...ह...ट!" दादाजी जाग गये थे। माशया ने चर्र की आवाज़ में दरवाज़ा खोला, हम अपनी घोड़ागाड़ी में बैठ गये और अहाते से बाहर निकल गये। हम खामोश चले जा रहे थे मानो एक-दूसरे पर गुस्सा हों।

जब दो या तीन घंटे के बाद दूर रस्तोव और नाखेचिवान दिखाई देने लगे, तो कारपो ने जो सारे रास्ते खामोश था, पीछे मुड़कर देखा और कहा, "अरमीनियन की लड़की वास्तव में बहुत सुन्दर है!"

और घोड़ों को चाबुका दिया।

दूसरी बार, तब मैं विश्वविद्यालय का छात्र था, मैं रेलगाड़ी से दक्षिण जा रहा था। मई का महीना था। एक स्टेशन पर शायद बेलगोरद और खारकोव के बीच में अपने डिब्बे से प्लेटफार्म पर घूमने के लिए बाहर आया।

स्टेशन के बगीचे में, प्लेटफार्म पर और खेतों में शाम का साया पड़ना शुरू हो गया था। स्टेशन की इमारत शाम पर हावी थी, पर इंजन से निकलते हुए धुएँ की सबसे ऊँची हलके गुलाबी रंग में रंगी लपट बता रही थी कि सूरज अभी तक पूरी तरह डूबा नहीं था।

प्लेटफार्म पर घूमते हुए मैंने देखा कि प्लेटफार्म पर घूमने वाले मुसाफिर ज़्यादातर सेकिंड क्लास के सिर्फ़ एक डिब्बे तक जाते और उसके पास जाकर खड़े हो जाते और ऐसे देखते, मानो इस डिब्बे में कोई बड़ा मशहूर आदमी बैठा हो। इन जिज्ञासुओं के बीच छोटे कद का अक्लमन्द, नम्र और विनीत मेरा हमसफर, जिससे मेरी जान-पहचान रास्ते में इत्तफाक से हुई थी, तोपची अफसर भी इसी डिब्बे के पास खड़ा था।

"आप वहाँ क्या देख रहे हैं?" मैंने उससे पूछा।

उसने कोई जवाब नहीं दिया, केवल अपनी आँखों से मुझे एक लड़की के शरीर को दिखाया। यह लड़की जवान थी, सत्रह-अठारह साल की होगी, रूसी लिबास पहने हुए थी, सिर ढका हुआ नहीं था और ओढ़नी को बड़ी ही लापरवाही से एक कन्धे पर डाले हुए थी। वह मुसाफिर नहीं थी। शायद स्टेशन मास्टर की बेटी या बहन थी। वह डिब्बे की खिड़की के पास खड़ी थी और किसी अधेड़ औरत से बात कर रही थी। इससे पहले कि मैं समझ पाता कि मैं क्या देख रहा हूँ, अचानक वही अनुभूति मुझ पर हावी हो गयी, जो मैंने कभी बचपन में उस अरमीनियन गाँव में महसूस की थी।

लड़की वास्तव में बहुत सुन्दर थी और इसमें न मुझे और न ही उन सबको, जो उसे देख रहे थे कोई किसी तरह का शक था।

जैसा कि हमेशा होता है, अगर उसके शरीर के हर अंग का बखान किया जाये, तो सच तो यह था कि सिर्फ़ उसके घुँघराले, घने भूरे बाल, जो उसके कन्धे पर बिखरे हुए थे और काले रिबन से जूड़े में नहीं बँधे थे, बहुत ही खूबसूरत थे, बाकी सब अंग या तो बहुत ही सामान्य थे या बेढब और बेतरतीब थे। वह अपनी आँखें बार-बार मिचमिचा रही थी। पता नहीं यह उसके चुलबुले अन्दाज़ की वजह से था या फिर वह निकटदर्शी (मायोपिक) थी। उसकी नाक टेढ़ी-मेढ़ी और ऊपर की तरफ़ मुड़ी हुई थी। मुँह छोटा था, शरीर पतला और उसकी रूपरेखा बेतरतीब थी। कन्धे छोटे और गोल थे, जो उम्र के मुताबिक कम लग रहे थे। इस सबके बावजूद लड़की बहुत ही सुन्दर होने का आभास दे रही थी और उसको देखने के बाद मैं इस बात का कायल हो गया था कि रूसी औरत को सुन्दर होने के लिए उसके सारे अंगों या शरीर का तरतीब से जड़ा होना ज़रूरी नहीं है और तो और अगर इस लड़की की टेढ़ी-मेढ़ी और ऊपर मुड़ी हुई नाक को प्लास्टिक सर्जरी से उस अरमीनियन लड़की जैसी सीधी और तीखी नाक बना भी दी जाती, तो मुझे लगता है, वह सीधी नाक इसके चेहरे की सुन्दरता खो देती।

खिड़की के पास खड़ी शाम की नमी से परेशान वह लड़की कभी हमें देखती, कभी अपने हाथ अपने कूल्हों पर रखती, तो कभी अपने हाथों से अपने बालों को ठीक करती, वह बात कर रही थी, हँस रही थी और ऐसा करते हुए उसके चेहरे पर कभी असमंजस, तो कभी डर के भाव आ रहे थे। मुझे ऐसा एक भी पल याद नहीं है, जब उसका शरीर या चेहरा शान्त या गतिहीन हुआ हो। उसकी सुन्दरता का राज़ इन्हीं बारीक, अन्तहीन, सुन्दर क्रियाओं में निहित था, अर्थात् उसकी मुस्कान में, उसके चेहरे के हाव-भावों में और उसकी उड़ती हुई हमारे चेहरों पर पड़ती नज़रों में। इन सब क्रियाओं का उसके यौवन से, उसकी ताज़गी से और उसकी ईमानदार अन्तरात्मा से एक अप्रतिम समन्वय था, जो उसकी हँसी और आवाज़ में साफ झलक रहा था और इस सबमें एक ऐसी सुलभता थी, जो हम छोटे बच्चों, परिन्दों, जवान मोरों और नये पेड़ों में पाते हैं और उन सबसे बेइन्तहा प्रेम करते हैं।

"उफ़्फ़..." जब हम दूसरी घंटी के बाद अपने डिब्बे की तरफ़ जा रहे थे, तो सर्द आह भरते हुए फौजी अफसर बुदबुदाया।

इस उफ़्फ़ का क्या मतलब था? मैं इस पर कोई फैसला नहीं देना चाहता।

हो सकता है, वह बहुत उदास हो गया था और इस सुन्दर लड़की और बसन्ती साँझ से दूर अपने घुटन भरे डिब्बे में नहीं जाना चाहता था या फिर हो सकता है, वह मेरी ही तरह इस सुन्दर लड़की पर अपने आप पर, मेरे पर और सब यात्रियों पर अफसोस कर रहा था, जो सब बेमन और अनचाहेपन से अपने-अपने डिब्बों

की तरफ़ जा रहे थे। स्टेशन की खिड़की के पास से, जिसमें एक कमज़ोर भूरे घुँघराले बालों और पिचके मुँह वाला तारबाबू बैठा था, गुज़रते हुए फौजी अफसर ने सर्द आह भरी और कहा, "मैं शर्त लगाने को तैयार हूँ कि यह तारबाबू उस सुन्दर लड़की से प्रेम करता है। यूँ भी इन खेतों और इस सुन्दरता के साथ रहना और इनसे प्रेम न करना, यह किसी भी इन्सान के बस के बाहर है। मेरे दोस्त, यह कैसा दुर्भाग्य है, कैसा मज़ाक़ है कि एक तो बूढ़ा और कुबड़ा होना और उस पर से ऐसी सुन्दर और चुलबुली लड़की से प्यार करना, जो आप पर बिलकुल ध्यान नहीं देती। आपको देखती तक नहीं। या इससे भी बदतर है, ज़रा सोचकर देखिए कि यह तारबाबू इस सुन्दर लड़की से प्यार करता है और साथ ही शादीशुदा भी है और इसकी बीवी भी इस लड़की की तरह चुलबुली, सुन्दर, लापरवाह और अक्लमन्द है...बिलकुल वैसी ही, जैसा यह ख़ुद है...भाग्यशाली है।

हमारे डिब्बे के पास की रेलिंग पर कोहनी टिकाये झुका एक कंडक्टर खड़ा था और उसी तरफ़ देख रहा था, जहाँ वह सुन्दर लड़की खड़ी थी। रातों में नींद न आने और गाड़ी के डिब्बे के हिचकोलों ने उसके चेहरे को थका, रूखा, असन्तुष्ट और बेहद उदास बना दिया था और उसके चेहरे के भाव दिखा रहे थे, मानो इस सुन्दर लड़की में वह अपनी जवानी, खुशी, अपनी संजीदगी अपनी बीवी और बच्चे देख रहा था। ऐसा लग रहा था कि वह पछता रहा है कि यह सुन्दर लड़की उसकी नहीं है और उसके उम्र से पहले बुढ़ापे, अस्त-व्यस्त जीवन और चर्बीले चेहरे की वजह से उससे उतनी ही दूर थी, जितना कि ऊपर का आसमान।

तीसरी घंटी बज चुकी थी। इंजन ने सीटी दी और रेलगाड़ी आहिस्ता-आहिस्ता रेंगने लगी। हमारी खिड़कियों में पहले कंडक्टर, फिर स्टेशन मास्टर झलके और फिर बग़ीचा और वह चुलबुली बालसुलभ मुस्कान वाली सुन्दर लड़की झलकी...।

खिड़की से मुँह बाहर किये और पीछे देखते हुए मैंने देखा, उसकी आँखें गाड़ी को विदा कर रही थीं, फिर वह प्लेटफार्म पर स्टेशन की खिड़की के पास से जहाँ तारबाबू बैठा था, गुज़री। चलते-चलते उसने अपने बाल ठीक किये और बग़ीचे में भाग गयी। स्टेशन की इमारत अब पश्चिम को नहीं छुपा रही थी, खेत भी सामने सपाट दिख रहे थे, पर सूरज डूब चुका था और इंजन के काले धुएँ के गोले सर्दी की हरी मखमली फसल पर पड़ रहे थे। बसन्ती हवा, काले स्याह आसमान और डिब्बे में उदासी पसर गयी थी।

तभी जाना-पहचाना कंडक्टर कूपे में आया और मोमबत्ती जलाने लगा।

पहला प्रेमी

इवगेनी अलेक्सेविच पदझारव 'पहला प्रेमी', जो बहुत ही नाजुक, ख़ूबसूरत और पतला-दुबला था और जिसके अंडाकार चेहरे पर आँखों के नीचे छोटी-छोटी थैलियाँ लटक रही थीं, अपने थियेटर ग्रुप के साथ सीज़न में एक दक्खिनी शहर में आया हुआ था। उसने आते ही पहला काम जो किया, वह था, शहर के कुछ प्रतिष्ठित परिवारों से जान-पहचान।

"हाँ, सीनीयोर," वह बार-बार अपने पैर को बड़ी ही नज़ाकत से हिलाते हुए और लाल रंग के मोज़े दिखाते हुए कह रहा था, "कलाकार को अपरोक्ष और परोक्ष दोनों तरह से ही अपने दर्शकों से संवाद और सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए। अपरोक्ष मंच पर अभिनय करने से होता है और परोक्ष अपने दर्शकों से जान-पहचान के माध्यम से। सच कहता हूँ (पारोल डे होनएर), मैं कभी नहीं समझ पाता हूँ, क्यों यह हमारा कलाकार भाई परिवारों से जान-पहचान करने में कतराता है? किसलिए? क्यों? दावतों, केकस, खूबसूरत शामों और फार्म हाउस की बातें जाने दीजिए और जाने दीजिए वे और सब मन बहलाने और खुश करने के तरीके। सबसे बड़ी बात है, कलाकार समाज पर कितना नैतिक प्रभाव रख सकता है। क्या यह एक दिलकश और ख़ूबसूरत अहसास नहीं है कि तुमने एक बेवकूफ़ और मूर्ख में एक चिन्गारी जगा दी? ये 'नमूने'। और ये औरतें! ख़ुदा कसम, औरतें भी कैसी-कैसी! सिर चकरा जाये। किसी सौदागर के घर में जाइए, उसके तहख़ाने में एक ताज़े, सुर्ख और जवान सेब को चुनिए यही स्वर्ग है। सच कहता हूँ!"

इस दक्खिनी शहर में उसकी जान-पहचान एक फैक्टरी-मालिक परिवार ज़ीबायेव से हो गयी। इस जान-पहचान को याद कर वह आज भी हर बार बड़े ही तिरस्करणीय तरीके से अपने चेहरे को सिकोड़ता है, अपनी आँखें मिचकाता है और बड़ी ही घबराहट से अपनी चेन को बार-बार खींचता है।

एक बार यह ज़ीबायेव के फार्महाउस पर घटा था। कलाकार अपने नये परिचितों के ड्राइंगरूम में बैठा हुआ था और आदत के मुताबिक बहुत बातें कर रहा था। उसके चारों तरफ़ कुर्सियों और सोफों पर वे तमाम नमूने बैठे थे और मजे से उसकी

बातें सुन रहे थे। साथ के कमरे से औरतों की हँसी और शाम की चाय पीने की आवाज़ें आ रही थीं...पैर-पर-पैर रखे, हर वाक्य को रम मिली चाय के साथ पीते हुए और अपने चेहरे को बड़े ही उदासीन और लापरवाही के भाव देने की कोशिश करते हुए, वह मंच की अपनी कामयाबियों के बारे में बता रहा था।

"मैं असल में तो एक कस्बाई कलाकार हूँ", वह मुस्कराते हुए कह रहा था, "पर मुझे राजधानियों में भी अभिनय करने के मौके मिले हैं... बात में से बात निकली है, तो मैं आपको एक घटना के बारे में बताता हूँ जो आज की बौद्धिक मनोदशा को साफ-साफ चरितार्थ करती है। मास्को में मेरे सम्मान में युवक इतनी सारी मालाएँ लाये कि बता नहीं सकता। क़सम से मुझे समझ नहीं आ रहा था, उन्हें कहाँ रखूँ। सच कहता हूँ (पारोल डे होनएर), बाद में तंगी के दिनों में उन मालाओं को मैं दुकान में ले गया और...जानते हैं कितना वज़न था उन सबका? दो पौंड और आठ औंस! हाँ-हाँ, वह पैसा बहुत काम आया। अकसर कलाकार ग़रीब होता है। आज मेरे पास सौ या हज़ारों रूबल हैं और कल फूटी कौड़ी भी नहीं...आज रोटी का एक टुकड़ा नहीं है, कल भरपूर सीप का गोश्त और हैरिंग मछली है। खुदा की मार है।"

सब लोग बड़े ही औपचारिक तरीके से अपने-अपने गिलासों से शराब पी रहे थे और सुन रहे थे। पूरी तरह सन्तुष्ट घर-मालिक अपनी इस सोच में फँसा था, कैसे अपने इस पढ़े-लिखे और मशहूर मेहमान की ख़ातिर की जाये। तभी उसने अपने दूर के एक चालीस साल के मोटे, लम्बे कोट और चौड़े पायचों की पैंट पहने अपने कज़िन पावेल इगनानेविच क्लिमव से उसका परिचय करवाया।

"मैं चाहता हूँ आप इनसे दोस्ती करें", ज़ीबायेव ने क्लिमव से परिचय करवाते हुए कहा, "इन्हें थियेटर अच्छा लगता है और कभी अभिनय भी करते थे। तूला के ज़मींदार हैं।"

पदझारव और क्लिमव बातें करने लगे। दोनों खुश हुए, यह जानकर कि तूला का ज़मींदार उसी शहर में रहता था, जिसमें 'पहले प्रेमी' ने लगातार दो सीज़न मंच पर अभिनय किया था। शहर, पुराने परिचितों और थियेटर के बारे में पूछताछ शुरू हो गयी...।

"जानते हैं, मुझे यह शहर बेइन्तहा पसन्द है।" पहले प्रेमी ने अपने लाल मोज़े दिखाते हुए कहा, "कितनी ख़ूबसूरत सड़कें हैं, कितना प्यारा बग़ीचा है और कितनी अच्छी जैन्ट्री है! बहुत प्यारी सोसायटी है!"

"आप ठीक कहते हैं, सोसायटी बहुत ही प्यारी है।" ज़मींदार सहमत हुआ।

"यूँ तो शहर व्यापार का है, पर बहुत ही बौद्धिक है।...मिसाल के तौर पर...हाँ,...हाँ,...स्कूल का डायरेक्टर, पब्लिक प्रोसीक्यूटर... प्रशासक...और अफ़सर... डिस्ट्रिक्ट पुलिस अफ़सर भी वैसे बेवकूफ़ नहीं है...जैसा कि फ्रेंच कहते हैं 'एनशान्ते'

प्यारा इन्सान है और औरतें! ख़ुदा क़सम, क्या औरतें हैं इस शहर में!"

"हाँ, औरतें...तो सच में... ।"

"शायद, मैं एक भावुक इन्सान हूँ। बात यह है कि आपके शहर में जाने क्यों मेरे साथ बहुत सारे प्रेम-प्रकरण घटे। दस तो बाक़ायदा याद हैं। मिसाल के तौर पर इस प्रेम-प्रकरण को लें...मैं इगारोवस्की सड़क पर उसी घर में रहता था, जिसमें ट्रेज़री थी.. ।"

"वह लाल ईंटों का बिना प्लास्टर वाला ?"

"हाँ-हाँ...बिना प्लास्टर का। मेरे पड़ोस में जैसा कि मुझे अब याद पड़ता है कोशशिव के घर में ही रहती थी, शहर की सबसे .ख़ूबसूरत लड़की वारेन्का... ।"

"कहीं वारवेरा निकोलयवना तो नहीं?" खुश होकर क्लिमव ने पूछा, "वह वाकई ख़ूबसूरत थी...शहर की सबसे .ख़ूबसूरत लड़की... ।"

"हाँ, शहर की सबसे ख़ूबसूरत लड़की। बड़ा ही अभिजात्य (क्लासिकल) प्रोफाइल था उसका...लम्बे घने काले बाल और कमर तक लटकती हुई उसकी चोटी। उसने 'हेमलेट' में मुझे देखा था...पूशकिन की तात्याना की तर्ज़ में मुझे ख़त लिखने लगी...और मैं, ज़ाहिर है, जवाब देने लगा... ।"

पदझारव ने इधर-उधर देखा। जब तसल्ली हो गयी कि ड्राइंगरूम में कोई महिला नहीं है, तो उसने अपनी आँखें मूँदीं, उदासी से मुस्कराया और एक लम्बी साँस ली।

"एक बार मैं शो करके घर आया", वह आहिस्ता से बुदबुदाया, "तो देखता हूँ, वह मेरे दीवान पर बैठी है। बस, आँसू बहने शुरू हो गये, इज़हारे इश्क हो गया और...शुरू हो गये बोसे पर-बोसे... । ओह! क्या कहूँ, वह बहुत ही हसीन और प्यारी रात थी। हमारा वह प्रेम करीब दो महीने तक चला, पर यह रात कभी दोहरा नहीं पाये। क्या हसीन रात थी, सच कह रहा हूँ, कसम से!"

"माफ़ कीजिए, ऐसा कैसे हो सकता है?" गुस्से में आगबबूला क्लिमव कलाकार की आँखों में झाँकते हुए बुदबुदाया," मैं वारवेरा निकोलयवना को अच्छी तरह जानता हूँ...वह मेरी भतीजी है।"

पदझारव घबरा गया और अपनी आँखें मिचकाने लगा।

"ऐसा कैसे हो सकता है?" अपने हाथों को झटकाते हुए क्लिमव कह रहा था, "मैं इस लड़की को अच्छी तरह से जानता हूँ और...और...मुझे ताज्जुब है... ।"

"अफसोस की बात है कि यह सब ऐसे ही घटा..." सोफ़े से उठते हुए और छोटी उँगली से अपनी बायीं आँख साफ़ करते हुए कलाकार ने कहा, "हालाँकि, देखा जाये, तो...वास्तव में...आप उसके चाचा की हैसियत से... ।"

मेहमान, जो अब तक बड़े आराम से सुन रहे थे और कलाकार को बीच-बीच में अपनी मुस्कानों से नवाज़ रहे थे, बेचैन हो गये। सबने अपनी आँखें झुका लीं।

"नहीं, आप मेहरबानी करके अपने शब्द वापस ले लें..." क्लिमव ने बड़े ही उत्तेजित स्वर में कहा, "मैं आपसे दरख़्वास्त करता हूँ, अपने शब्द वापस ले लें।"

"अगर इस बात ने आपकी बेइज़्ज़ती की है, आपको ठेस पहुँचायी है, तो माफ़ी चाहता हूँ!" कलाकार ने अपने हाथों से एक अजीब-सी हरकत करते हुए जवाब दिया।

"और यह भी मानिए कि आपने झूठ बोला था।"

"मैंने? नहीं...न—हीं...मैंने झूठ नहीं बोला, पर...मुझे बेहद अफसोस है कि मैं कुछ ज़्यादा ही बड़बड़ कर गया..और फिर...आपका यह बात करने का अन्दाज़ मुझे बिलकुल गवारा नहीं है।"

सोच में या अनिश्चितता में क्लिमव एक कोने से दूसरे कोने में आ-जा रहा था। उसका मोटा चेहरा पूरी तरह से सुर्ख़ हो गया था और गर्दन की नसें उभर आई थीं। दो मिनट ऐसे ही चलने के बाद वह कलाकार के पास आया और रोती हुई आवाज़ में कहा, "नहीं, मेहरबानी करके मान जाइये कि आपने वारेन्का के बारे में झूठ कहा है। मेहरबानी कीजिए।"

"अजीब बात है," कलाकार ने ज़बर्दस्ती मुस्कराते हुए और पैर हिलाते हुए अपने कन्धे उचकाये," यह तो...यह तो सरासर बेइज़्ज़ती है।"

"मतलब साफ़ है, आप नहीं मानना चाहते?"

"मेरी कुछ समझ में नहीं आ रहा है।"

"नहीं मानना चाहते? तो इस सूरत में माफ कीजिए, मुझे सख़्त कदम उठाने होंगे...या तो हुज़ूरे अनवर, मैं यहीं इसी वक़्त आपको बेइज़्ज़त करूँगा...या फिर...अगर आप एक ईमानदार इन्सान हैं, तो मेरे साथ ड्यूल का चैलेंज कुबूल करें...गोली चलायेंगे हम दोनों।"

"कुबूल है, अगर इसी में आप ख़ुश हैं।" पहले प्रेमी ने अवहेलना और नफ़रतभरी हरकत करते हुए कहा, "जैसा आप ठीक समझें।"

परेशान और बेचैन मेहमान और मेज़बान दोनों समझ नहीं पा रहे थे कि उन्हें क्या करना चाहिए। वे क्लिमव को एक तरफ़ ले गये और उससे विनती करने लगे कि अब इस बात को और न बढ़ाये, कोई स्कैंडल खड़ा न करे।" बाहर कुछ औरतों के अक्स हिलते-डुलते नज़र आने लगे...पहला प्रेमी फौरन मुड़ा और इस तरह से बातें करने लगा, मानो वह उस घर में जिसमें उसको बेइज़्ज़त किया गया हो और नहीं रुक सकता । उसने अपना हैट उठाया और बिना विदा लिये घर से बाहर चला गया।

घर लौटते हुए पहला प्रेमी रास्ते-भर अवहेलना और नफ़रत से मुस्कराता रहा और अपने कन्धे उचकाता रहा, पर अपने घर में दीवान पर लेटे-लेटे बड़ी बेचैनी

महसूस करता रहा।

"भाड़ में जाये वह," वह सोच रहा था, "ड्यूल कोई परेशानी की बात नहीं है, वह मुझे नहीं मारेगा, पर परेशानी और बदकिस्मती तो यह है कि सब दोस्तों को पता लग जायेगा और उनको तो पता है कि मैंने झूठ बोला है। यह तो नाकाबिले बर्दाश्त है, घृणित है! मैं सारे रूस में बदनाम हो जाऊँगा..।"

पदझारव सोच रहा था और सिगरेट पी रहा था, फिर वह अपने मन को शान्त करने के लिए बाहर सड़क पर आ गया।

"इस बेवकूफ़ से बात क्यों न की जाये", वह सोच रहा था, "इस पागल को यह समझा देना चाहिए कि वह निरा बेवकूफ़ है...और यह भी कि मैं उससे बिलकुल नहीं डरता...।"

पहला प्रेमी ज़ीबायेव के घर के सामने रुका और उसकी खिड़की को देखा। रेशमी मलमल के पर्दों के पीछे अभी तक बत्तियाँ जल रही थीं और कुछ आकार हिल-डुल रहे थे।

"थोड़ा इन्तज़ार करना चाहिए।" कलाकार ने तय किया।

अँधेरा हो गया था और ठंड बढ़ गयी थी। साथ ही छलनी में से छनती हुई-सी पतझड़ की सता देने वाली बारिश पड़ रही थी...। पदझारव बिजली के खम्भे से अपनी कोहनी टिका वहीं खड़ा हो गया और अपने आपको उसी बेचैनी के अहसास के हवाले कर दिया।

वह बिलकुल भीग गया था और पूरी तरह थक चुका था।

रात के दो बजे ज़ीबायेव के घर से मेहमान बाहर आने लगे। सबसे आख़ीर में तूला का ज़मींदार आया। उसने सड़क पर आकर एक लम्बी साँस ली और फिर अपने भारी गमबूटों को पगडंडी पर खुरचने लगा।

"माफ़ कीजिए, "पहले प्रेमी ने उसके पास आते हुए कहा, "सिर्फ़ एक मिनट।"

क्लिमव रुक गया। कलाकार मुस्कराया, थोड़ा झुका और हकलाते हुए कहने लगा, "मैं...मैं मानता हूँ...मैंने झूठ बोला था...।"

"नहीं, आपको यह सबके सामने कुबूल करना होगा," क्लिमव ने कहा और दोबारा गुस्से में तमतमा उठा, "मैं इस बात को ऐसे ही नहीं छोड़ दूँगा...।"

"पर देखिए, मैं माफी माँग रहा हूँ। मुझे अफ़सोस है। मैं आपसे विनती करता हूँ...आप समझ रहे हैं, आपसे विनती करता हूँ। आप तो जानते ही हैं कि ड्येल से बेकार की बेबुनियाद अफवाहें फैलेंगी और मैं नौकरीशुदा हूँ...मेरे दोस्त हैं, साथी हैं...वे क्या सोचेंगे...।"

पहला प्रेमी यह कहते हुए अपने को विरक्त दिखाने की कोशिश कर रहा

था, मुस्कराने की कोशिश कर रहा था और कोशिश कर रहा था, अपने को सन्तुलित और शान्त दिखाने की, पर उसके स्वभाव ने उसका साथ नहीं दिया। उसकी आवाज़ काँप रही थी, आँखें एक क़सूरवार की तरह मिचमिचा रही थीं और सिर झुका हुआ था। देर तक वह कुछ तो बुदबुदाता रहा। क्लिमव ने उसकी बात सुनी, थोड़ा सोचा और फिर एक लम्बी साँस ली।

"ठीक है, "उसने कहा," भगवान आपको माफ़ करेगा। सिर्फ़ फिर दोबारा झूठ न बोलिए। इन्सान को ज़िन्दगी में कोई चीज़ इतना अपमानित नहीं करती, जितना कि झूठ...हाँ..आप जवान हैं और पढ़े-लिखे भी...।"

ज़मींदार माँ-बाप और बड़े-बूढ़ों के अन्दाज़ में उसे उपदेश दे रहा था और पहला प्रेमी सुन रहा था और विनम्रता से मुस्करा रहा था... जब उसने अपना उपदेश खत्म किया, तो वह थोड़ा मुस्कराया, थोड़ा झुका और एक क़सूरवार की चाल में अपने सारे शरीर को हिलाते हुए अपने होटल की तरफ़ चला गया।

आधा घंटा लेटे रहने के बाद वह अब अपने आपको ख़तरे से बाहर महसूस कर रहा था। उसका मूड अब बहुत अच्छा हो गया था। अपने आप में शान्त और सन्तुष्ट था कि एक ग़लतफ़हमी का इस तरह से सुखदायी अन्त हुआ। उसने कम्बल ढका और फौरन सो गया। सुबह दस बजे तक वह ऐसे ही गहरी नींद में सोता रहा।

पत्नी

मुझे यह ख़त मिला–

हुज़ूरे अनवर, पावल अन्द्रेयविच, आपके पड़ोस यानी पेस्तरोव गाँव में बहुत ही खेदजनक घटनाएँ घट रही हैं, जिनके बारे में आपको सूचित करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। इस गाँव के सारे किसानों ने अपनी झोंपड़ियाँ और अपना सारा सामान बेच दिया है और तोमस्की ज़िले में रहने का तय कर लिया है, पर वहाँ पहुँचने से पहले ही ये लोग वापस लौट आये हैं। ज़ाहिर है, यहाँ उनके पास अब अपना कुछ नहीं है, सभी कुछ पराया है। अब ये तीन-चार परिवार एक झोंपड़ी में रहते हैं और इसलिए हर झोंपड़ी में कई बच्चे-बच्चियों के अलावा पन्द्रह आदमी और औरतें हैं। खाने के लिए उनके पास कुछ नहीं है, भूख ही-भूख है। सभी झोंपड़ियों में टायफाइड और भूख की महामारी फैली हुई है। सभी बीमार हैं। नर्स कह रही थी, झोंपड़ी में जाने पर क्या नज़र आता है? सब बीमार हैं, बेहोश हैं, कोई खाँस रहा है, तो कोई दीवार से सटकर लेटा है। झोंपड़ियों में बदबू भरी है, पानी देने वाला कोई नहीं है, पानी लाने वाला कोई नहीं है और खाने के नाम पर हैं सिर्फ़ सड़े-भुसे आलू। नर्स और सोबल (हमारे ज़िले का डॉक्टर) क्या कर सकते हैं? जबकि दवाई से पहले उन्हें रोटी चाहिए। रोटी उनके पास है नहीं? ज़िले के अधिकारी मदद करने से इनकार कर रहे हैं, क्योंकि इस गाँव से उनके नाम काट दिये गये हैं और तोमस्की में रजिस्टर कर दिये गये हैं और हाँ इनके पास पैसा भी नहीं है। आपको ये सूचित करते हुए और आपकी सहृदयता जानते हुए आपसे विनती करता हूँ कि इनकी मदद करने से इनकार न करें। आपका हितैषी।

ज़ाहिर है यह ख़त या तो खुद नर्स ने या फिर डॉक्टर ने जिसका कुलनाम एक जानवर का था, लिखा था। ज़िले के डॉक्टर और नर्सें बरसों से हर रोज़ यही समझाते रहे थे कि वे कुछ नहीं कर सकते। इसके बावजूद लोग उनके पास अपनी फरियाद लेकर आते थे, वे लोग जो सिर्फ़ सड़े-भुसे आलू खाते थे। नर्स और डॉक्टर जाने क्या अपना अधिकार समझते थे, यह बताने के लिए कि मैं सहृदय और दयालु हूँ कि नहीं।

इस बनाम ख़त से परेशान इसलिए भी था कि हर रोज़ कुछ आदमी राशन की सरकारी दुकान पर आते और घुटने टेक कर बैठ जाते और कल तो रात में दीवार तोड़ कर बीस बोरी जौ की निकाल कर ले गये। मैं सारे उदास माहौल से भी परेशान था। इस उदास और भारी माहौल के बारे में बहुत अफवाहें थीं, अखबारों में लिखा जा रहा था। मैं परेशान था इस ख़राब मौसम से। इन सब बातों से परेशान मैं कुछ नहीं कर पा रहा था। मैं 'रेलगाड़ी का इतिहास' लिख रहा था। इसलिए रूसी और विदेशी भाषाओं में बहुत से ब्रोशर, पत्र-पत्रिकाओं में लेख पढ़ने थे। कई आँकड़े बनाने थे, इसलिए बार-बार लागेरिथम के टेबल देखने पड़ते थे, सोचना पड़ता था, फिर लिखना पड़ता था, फिर नया पढ़ना चाहता था, सोचना पड़ता था और लिखना पड़ता था, पर जैसे ही मैं किताब पढ़ना शुरू करता या सोचना शुरू करता, तो दूसरे ही ख़्याल मुझे परेशान कर देते, मेरी आँखें मिंच जातीं, मैं एक लम्बी साँस लेकर मेज़ से उठ जाया करता और फिर देर तक अपने लकड़ी के बड़े घर के कमरों में घूमा करता। जब घूमने से तंग आ जाता, तो मैं अपने कमरे की खिड़की पर खड़ा हो जाया करता था और चौड़े आँगन और तालाब के उस पार खड़े नंगे बर्च के पेड़ देखा करता था और देखा करता था, अभी ताज़ी पड़ी और पिघली बर्फ़ से ढका बड़ा खेत। मैं देखा करता था, दूर कुछ झोंपड़ियों का झुंड, जिनके पास से सफ़ेद खेत के साथ-साथ एक काली गन्दी और टेढ़ी-मेढ़ी सड़क पहाड़ी से नीचे की ओर आती हुई। यही वह पेस्तरोव गाँव है, जिसके बारे में गुमनाम लेखक ने मुझे वह पत्र लिखा था। अगर कौए आने वाली बारिश और गिरने वाली बर्फ़ के लिए अपनी काँव-काँव करते हुए खेत और तालाब पर न उड़ा करते और अगर पास की सराय से आवाज़ें न आया करतीं, तो यह गाँव एक मरी हुई झील की तरह हो जाता, यहाँ इतनी खामोशी, निर्जीवता और उदासी है।

एक चिन्ता और उद्विग्नता मुझे काम नहीं करने दे रही थी, मेरी एकाग्रता भंग कर रही थी। मुझे समझ में नहीं आ रहा था, यह कैसी चिन्ता थी। मैं सोचना चाहता था कि यह सिर्फ़ निराशा थी। सच कहूँ, तो मैंने संचार-संसाधान मन्त्रालय की नौकरी से इस्तीफा दे दिया था और यहाँ गाँव में शान्ति से रहने और सामाजिक कार्य करने के लिए आ गया था। यह मेरा बहुत पुराना और मनचाहा सपना था और अब शान्ति, साहित्य और सामाजिक कार्यों से विदा लेनी पड़ेगी। सब कुछ छोड़ना पड़ेगा और सिर्फ़ किसानों को देखना पड़ेगा। यह अपरिहार्य हो गया था, क्योंकि मेरे सिवा, ऐसा मेरा मानना था, इस ज़िले में कोई भी, भूखों और ग़रीबों की मदद नहीं करना चाहता था। अनपढ़, गँवार, उदासीन और बहुत हद तक बेईमान, कुछ ईमानदार, कुछ संवेदनशील और कुछ सनकी, जैसे मिसाल के तौर पर मेरी पत्नी, ऐसे ही आदमी मेरे चारों तरफ़ जमा थे। इन पर भरोसा करना नामुमकिन था, ग़रीब और भूखे किसानों को भाग्य के सहारे छोड़ना भी नामुमकिन था। मतलब सिवा ज़रूरत

की अधीनता स्वीकारने के अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं था। मतलब मुझे ही ग़रीब और भूखे किसानों के लिए रोटी मुहैया करानी है।

मैंने यह काम शुरू किया। पाँच हज़ार रूबल भूखों की रोटी के लिए दान करने का फैसला लेकर, पर इसने मेरी चिन्ता और उद्विग्नता कम करने की बजाय और बढ़ा दी। जब मैं खिड़की पर खड़ा होता या कमरों में इधर-उधर घूमा करता, तो मुझे एक ही सवाल परेशान किया करता था, जो पहले कभी मेरे ज़हन में नहीं आया कि इस पैसे को कैसे बाँटा जाये? रोटी खरीदने का ऑर्डर दिया जाये या हर एक झोंपड़ी में जाकर परिवार को दिया जाये। यह काम कोई एक अकेले आदमी के बस में नहीं था, फिर जल्दी में पेट भरे कुलीन और समृद्ध को भूखे से दो गुना ज़्यादा दे दिये जाने का भी ख़तरा था। प्रशासन पर मुझे भरोसा नहीं था। ज़िले के सब अधिकारी और राशन इंस्पेक्टर सभी जवान थे और मुझे इन पर भरोसा नहीं था। वैसे ही जैसे आज के नवयुवकों के सामने कोई आदर्श नहीं है। सब के-सब पैसे के पीछे पागल हैं, वैसे ही सब अधिकारी और इंस्पेक्टर हैं। खंड प्रशासन और उसके सारे कार्यालय भी मेरे भरोसे के लायक नहीं थे और मेरी रत्ती भर भी इच्छा नहीं थी कि उनसे कोई मदद माँगूँ। मैं जानता था, ये सारे कार्यालय ज़िले और गाँव के बजट को खाये जा रहे थे और हर रोज़ एक और तीसरा खंड खाने के लिए अपने मुँह चौड़े खोले रखते थे।

मैंने सोचा, क्यों न पड़ोसी ज़मींदारों को बुलाया जाये और मेरे घर में एक किस्म की कमेटी या कार्यालय बनाया जाये, जिसमें सारा दान जमा हो और जहाँ से सब मदद गाँव को बाँटी जाये। इस तरह की कमेटी और ऑफ़िस काफ़ी आज़ादी देता था, गैरसरकारी भी था और मेरे नज़रिए के पूरी तरह माफ़िक़ भी था। पर मैं इसके साथ-साथ देख रहा था, पार्टियाँ, दावतें, बड़े खाने, त्यौहारों का सा शोर, अफवाहों का ज़ोर, बेवकूफ़ीभरी बातें और ये बातूनी पड़ोसी-ज़मींदार, जो मेरे घर का अभिन्न हिस्सा बन जायेंगे और इसीलिए मैंने यह ख़्याल फौरन छोड़ दिया।

रही मेरे घरवालों की बात, तो मुझे उनसे किसी किस्म की मदद या समर्थन की उम्मीद नहीं थी। कभी तो बहुत बड़े और चहल-पहल से भरपूर मेरे पिता के परिवार में सिर्फ़ एक गवर्नेस मादाम मारिया या जैसा कि आजकल उसे पुकारते हैं मारिया गिरासिमोवना, एक भिखारी ही बच गयी थी। यह औरत अच्छी गवर्नेस अब सत्तर साल की बूढ़ी थी, जो एक चीनी मिट्टी की गुड़िया की तरह हमेशा चमकीले कपड़े और सफ़ेद लेस लगा हैट पहने ड्राइंगरूम में बैठी कोई किताब पढ़ा करती थी। जब मैं उसके पास से गुज़रा करता, तो मेरी फ़िकर की वजह जानते हुए हर बार कहा करती, "पाशा, आख़िर आप चाहते क्या हैं? मैं तो पहले भी कहा करती थी कि यह सब ऐसे ही होगा। आप हमारी नौकरानी को तो जानते ही हैं।"

मेरा दूसरा परिवार यानी कि मेरी पत्नी नतालिया गवरीलोवा नीचे की मंज़िल

में रहती थी और सारे कमरे उसके पास थे। वह वहीं खाना खाया करती थी, वहीं सोया करती थी और मेहमानों से भी वहीं मिला करती थी। उसे इस बात में कोई रस नहीं था कि मैं क्या खाता हूँ, कैसे सोता हूँ और किस दोस्त को बुलाता हूँ। हमारा रिश्ता सहज और तनावरहित था, पर ठंडा, बेजान, बेमानी और बोरियत भरा था। वैसा ही, जैसे उन इन्सानों के बीच होता है, जो बहुत पहले एक-दूसरे से दूर हो चुके होते हैं और उनके जीवन में किसी क़िस्म की कोई करीबी बची नहीं रह गयी है। वह प्यार, वह आवेश, वह बेचैनी, रिश्तों में वह मिठास और खटास, जो मैं कभी पहले नतालिया के ताल्लुक़ से अफसन्तीन की तरह महसूस किया करता था, अब नहीं रह गया था, न ही रह गये थे हमारे बीच वे झगड़े, कोसना, शिकायतें, ज़ोर-ज़ोर की बहसें और नफ़रतभरे वे जुमले और वे जो हमेशा पत्नी की तरफ़ से आख़िरी हुआ करता था। उसकी विदेश यात्रा या फिर अपने माँ-बाप के घर जाना और मेरी तरफ़ से थोड़ा पैसा लगातार भेजना, जिससे कि मैं अपनी पत्नी के स्वाभिमान को ठेस पहुँचा सकूँ। (मेरी स्वाभिमानी और गर्वीली पत्नी और उसके माता-पिता मेरे पैसे पर ज़िन्दा रहते हैं और मेरी पत्नी चाहने के बावजूद मेरे पैसों को नकार नहीं सकती थी), यह मुझे बहुत सुख और सन्तोष दिया करता था और था मेरे दुख निवारण का एकमेव साधन। आज जब हम अचानक नीचे की मंज़िल में आँगन या कॉरीडोर में मिले, तो मैंने झुककर नमस्कार किया, वह उत्तर में मुस्करायी। हमने मौसम के बारे में बातें कीं और कहा कि दो-दो चौखटें लगानी चाहिए और यह भी कि कोई तो घंटियाँ बजाता हुआ बाढ़ के पास से गुज़रा था, यह कहते हुए मैं उसके चेहरे पर आते भावों को पढ़ रहा था, "मैं पूरी तरह बेवफ़ा हूँ और मैं आपके नाम को, जिसे आप बेहद प्यार करते हैं, बदनाम नहीं करूँगी। आप समझदार हैं, मुझे परेशान मत कीजिए, हम दोनों एक-दूसरे से मुक्त हैं।"

मैं अपने आपको समझा रहा था। प्यार तो मेरे अन्दर का कब का मर चुका है और मेरा काम, जो मुझ पर पूरी तरह हावी हो चुका है, मेरी और पत्नी के बीच के रिश्तों के बारे में संजीदगी से सोचने का वक़्त ही नहीं देता है। नहीं, सच तो यह है कि मैं सिर्फ़ ऐसा सोचता था। जब मेरी पत्नी नीचे ज़ोर से बोला करती थी, तो मैं बड़े ध्यान से उसकी आवाज़ सुना करता था, हालाँकि एक शब्द भी समझ में नहीं आता था। जब वह पिआनो बजाया करती थी, मैं खड़ा होकर सुना करता था। जब उसे घोड़े, घोड़ागाड़ी और कोचवान के आने की ख़बर दी जाती, तो मैं खिड़की के पास आकर खड़ा हो जाया करता था। उसके बाहर आने का इन्तज़ार किया करता था। उसे घोड़े पर या घोड़ागाड़ी में बैठ घर से बाहर जाता देखा करता था। मैं उस वक़्त अजीब-सी बेचैनी महसूस किया करता था और डरा करता था, कहीं मेरे चेहरे के भाव सब बता न दे। मैं अपनी पत्नी को आँखों ही-आँखों से विदा किया करता था और उसकी वापसी का इन्तज़ार किया करता था, जिससे कि मैं

फिर खिड़की में से उसका चेहरा, उसके कन्धे, उसका फरकोट और हैट देख सकूँ। जाने क्यों मुझे अजीब-सी बेचैनी, उदासी और रहम जकड़ लेते थे और उसके कमरों में जाने की चाह होती और चाह होती थी कि जो सवाल हमारे अलग-अलग स्वभाव होने की वजह से तय हो गया था, वह अपने आप प्राकृतिक रूप से तय हो जाये, कहने का मतलब, मैं चाहता था कि मेरी सत्ताईससाला पत्नी जल्दी बूढ़ी हो जाये और मेरा सिर सफ़ेद और गंजा हो जाये।

एक दिन नाश्ते के वक़्त मेरे नौकर वालादीमीर प्रारवोरिच ने मुझे बताया कि पेस्तरोव के किसानों ने अपने घरों की लकड़ी की छतों को अपने जानवरों को खिलाने के लिए तोड़ना शुरू कर दिया है, तब मारिया गिरासिमोवना ने बड़े ही डर और अविश्वास से मेरी तरफ़ देखा।

"मैं कर भी क्या सकता हूँ?" मैंने उससे कहा, "एक अकेला तो जंग नहीं लड़ सकता। मैंने अपने आपको कभी भी इतना अकेला महसूस नहीं किया, जितना आज कर रहा हूँ। अगर एक भी ऐसा इन्सान ढूँढ़ पाता, जिस पर मैं भरोसा कर सकता, मैं अपना सब कुछ दे देता।"

"आप इवान इवानिच को बुलाइए।" मारिया गिरासिमोवना ने कहा।

"आप ठीक कह रही हैं," मुझे याद आया और मैं बहुत खुश हुआ, "यह ठीक है। समझदारी की बात है।" मैं अपने ऑफ़िस की तरफ़ इवान इवानिच को ख़त लिखने के लिए जाते हुए गा उठा, "समझदारी की बात है, समझदारी की बात है..."

2

बहुत सारे परिचितों और मित्रों में से जो पच्चीस-पैंतीस साल पहले इस घर में शराब पीते और जी भरकर खाते थे, किसी औरत से मोहब्बत करते थे, शादी की और अपने घोड़ों और चाबुकों की बातों से बोर किया करते थे, उनमें से सिर्फ़ एक इवान इवानिच ब्राग़िन ही बचा था। कभी तो वह बहुत ही चुलबुला, बातूनी, शोर मचाने वाला आशिक़, अपने उग्रवादी विचारों के लिए और चेहरे पर अजीब से विशेष तरह के भावों के लिए जाना जाता था और जो न सिर्फ़ औरतों से ही निराश हो चुका था, बल्कि आदमियों से भी उतना ही निराश हो चुका था। अब वह बिलकुल बूढ़ा हो गया है, मुटा गया है और अपनी ज़िन्दगी बिना किन्हीं विचारों और अर्थ के जी रहा है। एक दिन मेरा खत पाकर वह मेरे घर आया था। उस वक़्त डाइनिंग हॉल में तभी गर्म समोवार रखी थी और छोटी-सी मारिया गिरासिमोवना नींबू काट रही थी।

"दोस्त, तुमसे मिलकर बहुत खुशी हो रही है", मैंने उसे गले लगाते हुए कहा था, "तुम हो कि मुटियाए जा रहे हो।"

"यह मोटापा नहीं, बल्कि सूजन है", उसने जवाब दिया, "मुझे मधुमक्खियों ने क़ाट लिया है।"

ऐसा आदमी, जो अपने मोटापे पर खुद हँस सकता है, वह मुझसे लिपट गया और अच्छे से कंघी किया हुआ अपना बड़ा और हलका सिर मेरे सीने पर रख दिया और एक बूढ़ी हँसी में कहा, "और तुम हो कि दिन पर-दिन जवान हुए जा रहे हो," हँसते हुए उसने कहा, "पता नहीं कौन सी डाई से तुम अपने बाल और दाढ़ी रंगते हो। मुझे भी बताओ।" हाँफते हुए वह मुझसे एक बार फिर लिपट गया और मेरे गाल को चूमा, "मुझे भी बताओ...।" उसने दोहराया, और हाँ, अभी तो तुम चालीस के ही हो।"

"ओफ़्फ़ो छियालीस का हो चुका हूँ।" मैं हँसा।

इवान इवानिच में से सूअर की चर्बी और रसोई के धुएँ की बास आ रही थी और यह उसे खूब माफ़िक़ आती थी। उसका बड़ा, चौड़ा, फूला हुआ और बिना अकड़ा हुआ शरीर एक कोचवान के लम्बे ओवरकोट की तरह एक लम्बी बास्कट में फ़िट था। बड़ा अजीब लगता अगर उसमें से यूडीकॉलोन की खुशबू आती। बहुत दिन से न बनायी गयी मुर्ग़े की गर्दन की तरह मटमैली दाढ़ी, सूजी हुई आँखें, अस्त-व्यस्त गन्दे कपड़े, उसका हाँफना, उसकी आवाज़, उसकी हँसी और उसके बात करने का अन्दाज़, इन सब में वह उग्र विचारों वाला मनमोहक, रोचक, खूबसूरत और जवान इन्सान, जिससे सबकी बीवियाँ ईर्ष्या किया करती थीं, कहीं भी नज़र नहीं आ रहा था।

"मुझे तुम्हारी सख़्त ज़रूरत है, दोस्त", मैंने चाय पीते हुए कहा, "मैं भूखे और अकालपीड़ितों के लिए कोई मदद का आयोजन करना चाहता हूँ, पर नहीं जानता कैसे शुरू करूँ। हो सकता है तुम्हें कुछ सूझ जाये, इसलिए सलाह लेने के लिए तुम्हें बुलाया है।"

"हाँ-हाँ, ठीक है...," लम्बी साँस लेते हुए इवान इवानिच ने कहा, "तो यह बात है...।"

"मैं तुम्हें तकलीफ़ देना तो नहीं चाहता था, पर सच तो यह है कि तुम्हारे सिवा मैं किसी और से सलाह भी नहीं माँग सका। तुम तो जानते ही हो आजकल के लोग कैसे हैं।"

"हाँ, वह तो है...। ठीक है...।"

मैंने सोचा, इस वक़्त बहुत ही संजीदा और काम की बात होनी है, जिसमें हर कोई हिस्सा ले सकता है, इसलिए क्यों न नतानिया गवरीलोवा को भी बुला लिया जाये?

"तीन तो पंच हो जाते हैं," मैंने बड़ी खुशी में कहा, "अगर नतालियो गवरीलोवा

को भी बुला लें, तो कैसा रहेगा? क्या ख़्याल है तुम्हारा? फेनया'', मैंने बावर्ची की तरफ़ मुखातिब होते हुए कहा, ''नतालिया गवरीलोवना को ऊपर आने के लिए कहें, हो सके तो फौरन। कहिए बहुत ज़रूरी काम है।''

थोड़ी ही देर में नतालिया गवरीलोवना आ गयी। मैं उसके अभिवादन के लिए उठा और कहा, ''माफ़ कीजिए, नतालिया, हमने आपको तकलीफ़ दी। हम एक बहुत ही ज़रूरी बात कर रहे हैं तभी हमारे दिमाग़ में यह खुशगवार ख़्याल आया कि आपकी मूल्यवान राय भी ले लें, जिसको देने में आप मना नहीं करेंगी। मेहरबानी करके बैठिए।''

इवान इवानिच ने उठकर नतालिया गवरलिवोना का हाथ चूमा और उसने उनका माथा और जब सब मेज़ पर बैठ गये, तो वह बड़े ही अदब से आँसूभरी आँखें लिये उठा और एक बार फिर उसने उनका हाथ चूमा। वह काले कपड़े पहने हुए थी और कसकर जूड़ा बाँधे हुए थी। उसमें से ताज़ा इत्रों की .ख़ुशबू आ रही थी। ज़ाहिर था, किसी के यहाँ जा रही थी या किसी का इन्तज़ार कर रही थी। डाइनिंग हॉल में अन्दर आने के बाद उसने बड़े ही दोस्ताना और सहज अंदाज में अपना हाथ मेरी तरफ़ बढ़ाया, अभिवादन में वैसे ही प्रेमपूर्ण तरीके से मुस्कराई, जैसे इवान इवानिच को देखकर मुस्कराई थी, यह मुझे बहुत अच्छा लगा। बात करते हुए वह बार-बार अपनी उँगलियाँ हिला रही थी, बार-बार अपना सिर कुर्सी की कमर से सटा रही थी और बहुत जल्दी-जल्दी बोल रही थी। उसके इस खास अन्दाज़ में बात करने और उसके बार-बार सिर हिलाने ने मुझे परेशान कर दिया। अचानक मुझे उसके शहर ओडेसा की याद आ गयी, जहाँ अकसर आदमी और औरतें इसी बेवक़ूफ़ाना अन्दाज़ में बात करते थे।

''मैं भूखे और अकालपीड़ितों के लिए कुछ करना चाहता हूँ'', मैंने कहना शुरू किया। थोड़ी देर चुप रहने के बाद फिर कहना शुरू किया, ''पैसा ज़ाहिर है, बहुत बड़ी ताक़त होती है। सिर्फ़ पैसे का दान करने भर से भूखों की भूख नहीं मिट जाती। पैसे से मदद करनी चाहिए, पर किसी ठीक और ईमानदार संस्था के माध्यम से। आइए मिलकर सोचें, क्या और कैसे करना चाहिए।''

नतालिया गवरीलोवना ने सवालिया आँखों से मुझे देखा और कन्धे उचकाए, मानो कहना चाह रही हो, मैं इसमें क्या कह सकती हूँ?

''हाँ-हाँ, जानती हैं...भूख...,'' इवान इवानिच बड़बड़ाया, ''सच है, भूख...।''

''हालात बहुत खराब हैं'', मैंने कहा, ''मदद फौरन पहुँचनी चाहिए। सबसे अहम है मदद का फौरन पहुँचना। तेज़ गति से। फौज में जैसा होता है, ठोस अन्दाज़, गति और असर।''

''हाँ, गति, फौरन...,'' इवान इवानिच ने कहा, मानो नींद से जगा हो, ''कुछ नहीं कर सकते। फसल नहीं हुई, तो ठोस अन्दाज़ और असर को सोच पाना नामुमकिन

है...प्रकृति के प्रकोप, ईश्वर और भाग्य का विरोध नहीं किया जा सकता...।''

''ठीक है, मगर इन्सान को प्रकृति से लड़ने के लिए दिमाग़ दिया गया है।''

''क्या? हाँ, यह बात तो है...।''

इवान इवानिच ने अपने रूमाल में छींक मारी, चेतन हो गया, मानो अभी-अभी नींद से उठा हो, फिर मेरी और पत्नी की तरफ़ देखा।

''मेरे यहाँ भी कुछ पैदा नहीं हुआ है,'' वह बड़ी बारीक आवाज़ में हँसा और बड़ी ही चालाकी से अपनी आँखें मिचकायीं मानो यह सब बहुत ही मज़ाक़िया था,'' पैसा नहीं है, अनाज नहीं है और मज़दूर भरपूर हैं, मानो राजा शिरमितोव का दरबार हो। जी में आता है, इन सबको भगा दूँ, पर तरस आता है।''

नतालिया गवरिलोवना हँसने लगी और इवान इवानिच से उनके परिवार के बारे में पूछने लगी। मेरी पत्नी की उपस्थिति मुझे बहुत सन्तोष दे रही थी। इस सन्तोष को मैंने काफ़ी दिनों से महसूस नहीं किया था। मुझे उसे देखने में डर लग रहा था, कहीं मेरी आँखें मेरी इस भावना को बता न दें। हमारे बीच रिश्ता ही ऐसा था कि इस भावना का ज़ाहिर होना बड़ा ही अप्रत्याशित और हास्यास्पद लगता। मेरी पत्नी इवान इवानिच से बातें कर रही थी और हँस रही थी। इस बात से बिलकुल बेख़बर कि वह मेरे कमरे में थी और मैं हँस नहीं रहा था।

''तो जनाबे वाला, हमें क्या करना चाहिए?'' थोड़ा रुककर मैंने पूछा, ''मैं समझता हूँ कि सबसे पहले हमें दान इकट्ठा करने की इत्तला देनी चाहिए। मैं और नतालिया अपने-अपने दोस्तों और परिचितों को राजधानी और ओडेसा में लिखेंगे और उनको दान देने के लिए राज़ी करेंगे। जब कुछ थोड़ा पैसा हमारे पास इकट्ठा हो जायेगा, तब हम भूखों के लिए रोटी और जानवरों के लिए चारा ख़रीदेंगे और आप इवान इवाविच, आप बर्तन बाँटेंगे। इसमें हम आपसे व्यवहारकुशल वितरण की अपेक्षा करेंगे और हम सिर्फ़ इतनी ही अपेक्षा करेंगे कि बर्तन बाँटने से पहले आप तफ़सील से गाँव और वहाँ की हालत पूरी तरह समझ लें और इस बात को भी पक्का कर लें कि रोटी सिर्फ़ असली ज़रूरतमन्दों को ही दी जाये, किसी भी हालत में शराबियों, फक्कड़ों और ज़मींदारों को न दी जाये।

''हाँ, ठीक है, समझ गया...।'' इवान इवानिच बुदबुदाया।

''इससे कोई उम्मीद नहीं करनी चाहिए'', इस सोच-भर से ही मैं काँप उठा।

''मैं तंग आ गया हूँ इन भूखों से। सब नाराज़ हैं, इवान इवानिच'', मैं नींबू की एक फाँक चूसते हुए कह रहा था, ''भूखे पेट-भरों से नाराज़ हैं और जिनके पेट भरे हैं, वे भूखों से नाराज़ हैं। हाँ, भूख इन्सान को बेवकूफ़ और पागल बना देती है। वह गालियाँ देता है, चोरी करता है और इससे भी ज़्यादा ख़राब काम कर सकता है...। यह समझना चाहिए।''

इवान इवानिच को चाय से फन्दा लग गया और बाद में ज़ोर की हँसी से उसका साँस चढ़ गया।

"अगर बात होती पलतावा की," अपनी हँसी और खाँसी रोकते हुए, जो उसे बोलने नहीं दे रहे थे, कहा, "अगर बात होती पलतावा की, तीन साल पहले जब उद्घाटन के बाद दो गाँवों में सूखा पड़ा था, तब स्वर्गीय फ्योदर फ्योदरिच आये थे और मुझे अपने साथ चलने को कह रहे थे। चलो, हमारे साथ चलो, ऐसे चिपक गये, जैसे गर्दन पर तेज़ धार का चाकू। क्या करता? मैंने कहा, चलेंगे और फिर चल पड़ा। हम दोनों साथ-साथ चल पड़े। शाम का वक़्त था, हलकी-हलकी बर्फ़ पड़ रही थी। रात में उसके गाँव में पहुँचे और तभी जंगल में से, धमाका, दूसरी बार फिर धमाका! मुझे बेवकूफ़ बना रहे हो...मैं स्लेज पर से कूदा, देखता हूँ, अँधेरे में घुटनों तक बर्फ़ में मेरी तरफ़ एक आदमी भागा आ रहा है। मैंने उसका हाथ पकड़ लिया और हाथ से बन्दूक छीन ली। तभी दूसरा मेरी तरफ़ मुड़ा। मैंने उसे गर्दन से पकड़ा। वह चीख पड़ा। मैंने उसकी नाक बर्फ़ में घुसा दी। तब, तब... तब मैं जवान था, हाथों में ताक़त थी। मैं उन दोनों से निबट रहा था कि देखा फ्योदर तीसरे के सीने पर बैठा था। हमने तीनों जवानों की पिटाई की, उनके हाथ कमर पर पीछे बाँधे, जिससे कि हमें या अपने आपको नुक़सान न पहुँचा सकें और इस तरह हम तीनों को अपनी रसोई में ले आये। उन्हें देखकर शरम आ गयी। भगवान उनका भला करें! किसान तो जाने-पहचाने थे, अच्छे थे, पर तरस आ रहा था। वह डर गये थे। एक रो रहा था और माफ़ी माँग रहा था, दूसरा पागल की तरह गालियाँ दे रहा था और तीसरा घुटनों के बल बैठा भगवान से प्रार्थना कर रहा था। मैंने फेद से कहा, गुस्सा मत होओ, छोड़ दो इनको। उसने उन्हें खाना खिलाया, एक भगोना आटा दिया और छोड़ दिया, जाओ और पागलपन की बातें करो! ऐसी बात थी...भगवान सबको ठीक रखे! मैं सब समझता था, इसलिए गुस्सा नहीं हुआ। ऐसे भी थे, जो गुस्सा हो जाया करते थे और कितने ही किसानों पर नाराज़ हो जाया करते।...एक झोंपड़ी में से ग्यारह भूखे निकले थे...और आज वैसे ही हालात हैं।...बृहस्पतिवार को मेरे यहाँ इंस्पेक्टर अनीसीन रात में रुका था...वह बता रहा था किसी ज़मींदार के बारे में ...हाँ, रात में किसी ने उसके गोदाम की एक दीवार तोड़ी और बीस बोरे जई के ले गये। जब सुबह ज़मींदार को पता लगा कि उसके यहाँ ऐसी चोरी हो गयी है, तो फौरन गवर्नर को तार दिया, दूसरा तार प्रोसीक्यूटर को, तीसरा इंस्पेक्टर को और चौथा पुलिस को...सभी षड्यन्त्रों से डरते हैं... । अधिकारी लोग एक्शन में आ गये। दो गाँव पूरी तरह छान डाले।"

"माफ़ कीजिए इवान इवानिच", मैंने कहा, "बीस बोरी जई मेरे यहाँ से चुराई गयी थी और मैंने ही गवर्नर को तार दिया था। मैंने ही पीटर्सबर्ग में तार दिया था, पर वह षड्यन्त्र नहीं था और न ही इसलिए कि मैं नाराज़ था, जैसा कि आपने अपनी बात से जताया है। मैं हर चीज़ को सबसे पहले सिद्धान्त के नज़रिए से देखता हूँ। चोरी चाहे कोई भूखा करे या सम्पन्न क़ानून की नज़रों में दोनों एक हैं।"

"हाँ-हाँ," इवान इवानिच घबराते हुए बुदबुदाया, "आप ठीक कहते हैं...।"

नतालिया गवरीलोवा का चेहरा सुर्ख हो गया।

"होते हैं ऐसे भी आदमी...।" उसने कहा और चुप हो गयी। उसने अपने आप से बहुत जबर्दस्ती की, यह दिखाने को कि वह तटस्थ है, पर अपने आप पर काबू नहीं रख सकी और अपनी आँखों से वह नफ़रत, जिससे मैं अच्छी तरह वाक़िफ़ था, दिखा ही दी, "होते हैं ऐसे भी आदमी", उसने कहा, "जिनके लिए इन्सान की भूख और दुख सिर्फ़ इसलिए होते हैं, जिनका इस्तेमाल करके अपना कमीनापन और ओछापन दिखा सकें।"

मैं थोड़ा परेशान हो गया और मैंने अपने कन्धे उचकाये।

"वैसे मैं यह कहना चाहती हूँ", उसने अपनी बात जारी रखते हुए कहा कि "कुछ लोग तटस्थ और उदासीन होते हैं, सहानुभूति की भावना से अलग होते हैं, पर कुछ ऐसे भी होते हैं, जो इन्सान के दुख को देखते हैं और डर के मारे उसमें अपना हाथ बँटाते हैं और सोचते हैं कि उनके बिना दुख दूर हो जायेंगे। उनके लिए स्वाभिमान जैसी कोई चीज़ होती ही नहीं।"

"ऐसे भी इन्सान होते हैं", मैंने आहिस्ता से कहा, "जो देवता स्वरूप होते हैं, पर अपने विचार इस तरह व्यक्त करते हैं, जिससे एक देवता और ओडेसा के बाज़ार के एक व्यापारी में फ़र्क़ करना मुश्किल हो जाता है।"

मैं मानता हूँ कि यह ठीक नहीं था। मेरी पत्नी ने मेरी तरफ़ ऐसे देखा, जैसे उसे चुप रहने के लिए बहुत कोशिश करनी पड़ी हो। उसके गुस्से का भड़क उठना और फिर भूखों की मदद करने के मेरे प्रस्ताव पर जो भी उसने कहा, वह निरर्थक था। जब मैंने उसे अपने यहाँ ऊपर की मंज़िल में बुलाया था, तब मैंने बिलकुल अलग राय की उम्मीद की थी। वैसे मैं ठीक से नहीं कह सकता कि मेरी क्या अपेक्षा थी पर अपेक्षा अच्छी थी। और अब मैं समझ गया था कि इस वक़्त भूखों की बात जारी रखना मुश्किल होगा या यूँ कहूँ, सरासर बेवकूफ़ी।

"हाँ", इवान इवानिच बुदबुदाया, "बुख़ महाजन के पास चौदह सौ इससे भी ज़्यादा हैं।"

मैंने उससे कहा, "अरे, भूखों को ग्यारह सौ या बारह सौ दे दो। वैसे भी एक दिन तो मरना ही है। वहाँ तो कोई अपने साथ कुछ नहीं ले जा पायेगा।" नाराज़ हो गया। "एक दिन तो मरना ही है। मौत कोई त्यौहार तो है नहीं।"

एक बार फिर खामोशी पसर गयी।

"तो इसका मतलब सिर्फ़ एक है, मुझे अकेले ही करना होगा", मैंने एक लम्बी साँस ली, "अकेला लड़ाई के मैदान में। ठीक है। अकेले ही लड़ने की कोशिश करूँगा। उदासीनता से लड़ाई लड़ने के बजाय भूख से लड़ाई लड़ना कहीं ज़्यादा कारगर होगा।"

"नीचे मेरे मेहमान मेरा इन्तज़ार कर रहे हैं," नतालिया गवरीलोवा ने कहा। वह उठ गयी और इवान इवानिच की तरफ़ देखते हुए बोली, "आप आ रहे हैं न नीचे एक मिनट के लिए? आपसे मैं विदा नहीं ले रही हूँ।"

और वह चली गयी।

इवान इवानिच लम्बा साँस लेते हुए, कभी अपने होठ चूसते हुए, कभी अपनी मूँछें मरोड़ते हुए तो कभी नींबू की फाँक चूसते हुए चाय का सातवाँ गिलास पी रहा था। उसने बहुत ही आहिस्ता और अलसायी आवाज़ में कुछ कहा, जो मैं सुन नहीं पाया और उसके जाने का इन्तज़ार करने लगा। आख़िरकार वह इस तरह उठा, मानो मेरे पास सिर्फ़ चाय पीने के लिए ही आया हो और मुझसे विदा लेने लगा। उसको बाहर तक छोड़ने आते हुए मैंने कहा, "तो आपने मुझे कोई सलाह नहीं दी।"

"क्या? मैं एक बूढ़ा इन्सान हूँ, सठिया गया हूँ...," उसने जवाब दिया, "मैं क्या सलाह दे सकता हूँ? आप यूँ ही परेशान हो रहे हैं...सच, नहीं जानता आपकी परेशानी का बायस? दोस्त फिक्र मत करो, ऐसा कुछ भी नहीं है..." उसने मुझे बच्चे की तरह तसल्ली देते हुए प्यार से थपथपाया, "सच में ऐसा कुछ भी नहीं है।"

"कैसे कुछ भी नहीं है? आदमी अपनी झोंपड़ियों की छतें तोड़ रहे हैं और कहीं-कहीं तो टायफाइड भी हो गया है।"

"फिर क्या हुआ? अगले साल फसल होगी, नयी छतें बन जायेंगी और अगर कुछ टायफाइड से मर भी गये, तो हमारे बाद भी तो कुछ ज़िन्दा रहेंगे। और फिर आज नहीं, तो कल मरना तो है ही। दोस्त, फिक्र मत करो, परेशान मत होओ।"

"परेशान हुए बिना मैं कैसे रह सकता हूँ।" मैंने काँपते हुए कहा।

हम हल्की रोशनी वाले बाहर के कमरे में खड़े थे। अचानक इवान इवानिच ने मेरी कोहनी पकड़ी, मानो कोई बहुत ज़रूरी बात मुझसे कहना चाह रहा हो और आधा मिनट मेरी तरफ़ एकटक खामोश देखता रहा।

"पावेल अन्द्रेइच," उसने आहिस्ता से कहा और तभी अचानक उसके मोटे और घने चेहरे पर वही भाव आ गये, जिनसे वह कभी तो जाना जाता था। सच में बहुत मनमोहक थे, "पावेल अन्द्रेइच, मैं एक दोस्त के नाते आपसे एक बात कहना चाहता हूँ, अपना स्वभाव बदल लीजिए। आपके साथ माहौल बहुत भारी हो जाता है। सच बहुत भारी हो जाता है, दोस्त।"

वह एकटक मेरे चेहरे को देखे जा रहा था। वे मनमोहक भाव गायब हो गये थे, आँखों का तेज़ गायब हो गया था और तब उसने उदास और अलसायी आवाज़ में कहा, "हाँ, हाँ,...माफ़ करो दोस्त,...सब बेकार है...।"

अपने दोनों हाथों से हत्थे पकड़े हुए वह बड़ी मुश्किल से सीढ़ियाँ उतर रहा था और उतरते हुए उसकी मोटी और भारी कमर और लाल गुद्दी दिख रही थी और इस सबने मेरे अन्दर एक खराब-सी भावना पैदा कर दी और मुझे लगा कि वह कोई एक केकड़ा है।

"हुज़ूरे अनवर, कहीं हो आइए," वह बुदबुदाया, "पीटर्सबर्ग या फिर कहीं विदेश...। आप क्यों यहाँ रह रहे हैं और अपना कीमती वक़्त बर्बाद कर रहे हैं? आप जवान हैं, सेहतयाफ्ता हैं, सम्पन्न और धनी हैं...उफ़, अगर मैं जवान होता, तो अब तक खरगोश की तरह कूदता-फाँदता भागता।"

3

मेरी पत्नी के गुस्से फट पड़ने ने मेरे पारिवारिक जीवन की याद ताज़ा कर दी। अकसर पहले इस गुस्से और लड़ाई के बाद हम एक-दूसरे की तरफ़ और ज़्यादा खिंचे चले आते थे और वह सब ज़हर और नफरत उगल देते थे, जो वक़्त के साथ हमारे मनों में इकट्ठा हो गयी होती थी और आज भी इवान इवानिच के जाने के बाद मेरा मन अपनी पत्नी की तरफ़ वैसे ही खिंच रहा है। नीचे जाना चाहता था और उससे कहना चाहता था कि चाय के वक़्त उसने मेरी बेइज़्ज़ती की थी, वह बड़ी जालिम और कमीनी थी और अपनी ज़मींदाराना परवरिश की वजह से वह कभी नहीं समझ पायेगी कि मैं क्या कह रहा हूँ और क्या कर रहा हूँ? मैं अपने कमरों में देर तक टहलता रहा, यह सब कहने की सोचता रहा और साथ-साथ यह अन्दाज़ भी लगाता रहा कि उसका जवाब क्या होगा?

वह बेचैनी, जिसने मुझे, इवान इवानिच के जाने के बाद, जकड़ लिया था, वह मुझे तंग कर रही थी। मैं न बैठ सकता था न खड़ा रह सकता था, बस, घूमता ही जा रहा था और तो और मैं सिर्फ़ रोशन कमरों में ही घूम रहा था और उस कमरे के आसपास, जिसमें मारिया गिरासीमोवना बैठी थी। बिलकुल वैसा ही अहसास हो रहा था, जैसा एक बार मैंने जर्मन समन्दर में तूफ़ान के वक़्त महसूस किया था, सब डर गये थे यह सुनकर कि जहाज़ में सामान और काठ-कबाड़ नहीं था और वह जल्दी ही उलट जायेगा और इस शाम मेरी समझ में आया कि यह मेरी बेचैनी कोई निराशा नहीं है, जैसे कि मैं पहले सोचा करता था, बल्कि कुछ और है, पर असल में क्या है? मैं नहीं समझ पा रहा था और यही मुझे और बेचैन कर रहा था।

"उसके पास जाऊँगा", मैंने तय किया, "बहाना तो सोचा जा सकता है। कह दूँगा, मैं इवान इवानिच से मिलना चाहता हूँ। बस।"

मैं नीचे उतर आया। गलीचों पर आहिस्ता-आहिस्ता चलते हुए मैं हॉल और कॉरीडोर पार कर गया। इवान इवानिच ड्राइंगरूम में सोफे पर बैठा था, फिर चाय पी रहा था और कुछ बुदबुदा रहा था। मेरी पत्नी आरामकुर्सी की कमर पकड़े उसके सामने खड़ी थी। उसके चेहरे पर पादरियों और जजों के चेहरे सी शान्ति और मिठास

झलक रहे थे, ख़ासकर जब वे गालियों में कोई छिपा अर्थ निकाल लिया करते थे। पत्नी के भावों और उसकी मुद्रा में मैंने एक किस्म का पागलपन और पादरीपन देखा, पुराने फर्नीचर से भरे उसके कमरे, पिंजरों में सो रहे परिन्दे, गर्म, छोटे और अधकाले जिरेनियम की महक मुझे स्वर्गीय फादर सुपिरियर या किसी स्वर्गीय बूढ़ी पुजारिन की याद दिला रहे थे।

मैं ड्राइंगरूम में घुसा। पत्नी ने इस पर न तो कोई आश्चर्य और न ही कोई सन्तोष ज़ाहिर किया और मेरी तरफ़ बहुत ही शान्ति से देखा, मानो जानती थी कि मैं आऊँगा।

"माफ़ कीजिए", मैंने आहिस्ता से कहा, "इवान इवानिच, मैं बहुत खुश हूँ कि आप अभी तक यहीं हैं। मैं ऊपर आपसे पूछना भूल गया, आप हमारे सरपंच का नाम और कुलनाम जानते हैं?"

"हाँ, आन्द्रेई स्तानिस्लाविच...।"

"शुक्रिया" मैंने कहा, अपनी जेब से नोटबुक निकाली और नाम लिख लिया।

ख़ामोशी पसर गयी और इस ख़ामोशी में पत्नी और इवान इवानिच इन्तज़ार कर रहे थे कि कब मैं जाऊँ। पत्नी को एतबार नहीं था कि मुझे वाकई सरपंच का नाम चाहिए था। यह उसकी आँखें मुझे बता रही थीं।

"ठीक है, प्यारी दोस्त, तो मैं चलता हूँ" इवान इवानिच बुदबुदाया। जब मैं ड्राइंगरूम में दूसरी बार घूमा और फिर आतिशदान के पास बैठ गया।

"नहीं," नतालिया गवरीलोवा ने जल्दी-जल्दी उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, "पन्द्रह मिनट और रुक जाइये। आपसे मेरा अनुरोध है।"

ज़ाहिर था वह मेरे साथ आमने-सामने बिना किसी गवाह के साथ अकेले नहीं रहना चाहती थी।

"तो क्या, मैं पन्द्रह मिनट इन्तज़ार कर लूँगा।" मैंने सोचा।

"अरे, बर्फ़ पड़ रही है।" मैंने उठते हुए और खिड़की से बाहर झाँकते हुए कहा, "बर्फ़ बहुत ही ख़ूबसूरत और मनमोहक लग रही है, इवान इवानिच," मैंने ड्राइंगरूम में घूमते हुए कहा, "मुझे अफसोस है कि मैं शिकारी नहीं हूँ। मैं सोच सकता हूँ, ऐसी बर्फ़ में खरगोशों और भेड़ियों के पीछे भागने में कितना मज़ा आता होगा।"

मेरी पत्नी एक ही जगह खड़े-खड़े बिना मुड़े सिर्फ़ कनखियों से मेरी गतिविधियों पर नज़र रख रही थी, मानो मैंने जेब में कोई तेज़ चाकू या कोई रिवॉल्वर छिपा रखा हो।

"इवान इवानिच, कैसे भी मुझे शिकार पर ले चलिए।" मैंने आहिस्ता से कहा, "मैं आपका बहुत ही शुक्रगुज़ार होऊँगा।"

इसी वक़्त ड्राइंगरूम में एक मेहमान आ गया। इन महोदय से मैं परिचित

नहीं था। यह महोदय लम्बे, मोटे, गंजे, लम्बी हलकी मेहँदी रंग की दाढ़ी वाले चालीस साल के थे। उनकी आँखें बहुत ही छोटी थीं।

उनके ढीले-ढाले बोरीनुमा कपड़ों और उनके व्यवहार से वह मुझे पादरी या शिक्षक लग रहे थे। पत्नी ने मेरा परिचय डॉ. सोबल कहकर कराया।

"आपसे मिलकर बहुत-बहुत खुश हूँ।" डॉक्टर ने ज़ोर से हाथ मिलाते हुए और मुस्कराते हुए ज़ोर से कहा, "बहुत खुश हूँ।"

वह मेज़ पर बैठ गया, चाय का गिलास उठाया और ज़ोर से कहने लगा, "बाइचान्स आपके पास रम या वोदका तो नहीं होगी?"

"मेहरबानी कीजिए", ओल्या बावर्ची की तरफ़ मुखातिब होते हुए उसने कहा, "अलमारी में टटोलिये वरना मैं तो मर ही जाऊँगा।"

मैं फिर आतिशदान के पास बैठ गया। मैं देखता रहा, सुनता रहा और सारी बातों में अपनी तरफ़ से एक शब्द भी नहीं बोला। पत्नी बहुत ही प्रेम से मेहमानों से मुस्करा-मुस्करा कर बातें कर रही थी और बड़ी चौकस होकर मेरी गतिविधियों को देख रही थी, वैसे ही, जैसे कोई किसी जानवर की गतिविधियाँ देखता है। मेरी मौजूदगी उसके लिए एक बोझ बन गयी थी और इस अहसास ने मेरे अन्दर जलन, उदासी और उसे दुख देने की ख्वाहिश पैदा कर दी। यह पत्नी, मैं सोच रहा था, ये ऐशोआराम वाले कमरे, यह आतिशदान के पास बैठने की जगह, यह सब कब से मेरे हैं, सिर्फ़ मेरे हैं, पर जाने क्यों एक पागल इवान इवानिच सोबल का इन सब पर मुझसे ज़्यादा अधिकार था। आज मैं पत्नी को अपने से दूर खिड़की पर नहीं, बल्कि अपने पास खड़ी देख रहा हूँ, उसी पुरानी सामान्य पारिवारिक स्थिति में, जो मेरे बुढ़ापे में मुझे अब मयस्सर नहीं है और उसकी मेरे लिए नफ़रत के बावजूद मैं उसका अभाव महसूस करता हूँ। वैसे ही जैसे बचपन में मैं माँ और नर्स का अभाव महसूस किया करता था। आज मैं महसूस कर रहा हूँ कि आज उसे पहले से कहीं ज़्यादा प्यार करता हूँ। इसीलिए मेरा मन उसके पास जाने, उसके पैरों में गिरने, अपना दर्द बताने और बताते हुए मुस्कराने को कर रहा है, "मोस-एनोत", मैं डॉक्टर की तरफ़ मुखातिब होकर बोला, "हमारे ज़िले में कितने हस्पताल हैं?"

"सोबल।" पत्नी ने मेरी ग़लती ठीक की।

"सर, दो।", सोबल ने जवाब दिया।

"और हर हस्पताल में कितनी मौतें होती हैं?"

"पावेल अन्द्रेइच, मुझे आपसे कुछ बात करनी है।" पत्नी ने मुझसे कहा।

उसने मेहमानों से माफी माँगी और साथ वाले कमरे में चली गयी। मैं उठा और उसके पीछे-पीछे चला गया।

"आप अभी, इसी पल ऊपर चले जाइए," उसने कहा।

"आप बदतमीज़ हैं", मैंने कहा, "आप बेशऊर हैं।"

"आप अभी इसी पल ऊपर चले जाइए", बड़ी सख़्ती से उसने दोहराया और नफरतभरी नज़रों से मुझे देखा।

वह मेरे इतने करीब खड़ी थी कि अगर मैं थोड़ा झुकता, तो मेरी दाढ़ी उसके चेहरे को छू लेती।

"यह क्या बदतमीज़ी है?" मैंने कहा, "मैंने ऐसी क्या ग़लती कर दी है?"

उसकी ठोढ़ी थोड़ी हिली। उसने जल्दी से अपने आँसू पोंछे। एक पल को उसने अपने आपको शीशे में देखा और फिर बुदबुदायी, "फिर वही इतिहास दोहराया जा रहा है। आप नहीं जायेंगे। आपकी मर्ज़ी। मैं ख़ुद चली जाऊँगी और आप अकेले रह जायेंगे।"

उसके चेहरे पर शरारत दिख रही थी। मैं अपने कन्धे उचकाते हुए व्यंग्यात्मक तरीके से मुस्कराने की कोशिश कर रहा था और इस तरह हम दोनों ड्राइंगरूम में वापस आ गये। वहाँ और भी नये मेहमान आ गये थे, एक अधेड़ महिला और चश्मा पहने एक नौजवान। नयों का अभिवादन किये बगैर और पुरानों को बिना नमस्कार किये मैं ऊपर चला गया।

जो मेरे यहाँ चाय पीते हुए और फिर जो नीचे हुआ था, उसके बाद मैं समझ गया था कि "हमारा पारिवारिक सुख, जिसको हम इन दो सालों में भूलने की कोशिश कर रहे थे, किन्हीं बहुत ही बचकानी और बेमानी कारणों से फिर पुनर्जीवित हो रहा था। न मैं और न मेरी पत्नी अपने आपको रोक पायेंगे और नफ़रत के इस दौर में मैं अपने पुराने तजुर्बे की बिना पर कह सकता था कि कल नहीं, तो परसों कुछ तो बहुत ही घिनौना और घृणास्पद घटेगा और वह हमारी ज़िन्दगियों के तौर-तरीके बदल देगा। मतलब इन दो सालों में मैं कमरों में घूमते हुए सोच रहा था, हम दोनों ज़्यादा समझदार, एक-दूसरे के प्रति उदासीन और शान्त नहीं बन पाये। मतलब फिर वही आँसू, चिल्लाना, कसमें, सामान फेंकना, विदेश यात्रा, वही ख़ौफ़ कि वह वहाँ विदेश में किसी फ्रेंच, इटेलियन या रूसी के साथ है और मुझे कोस रही है, फिर वही पासपोर्ट का नकारना, वही ख़त, अकेलापन, उसकी याद और फिर पाँच साल बाद, बुढ़ापा, सफ़ेद बाल...यही सब होगा। मैं घूम रहा था और सोच रहा था, क्या कुछ नहीं हो सकता? वह ख़ूबसूरत है, गदरायी हुई है और ऐसे आदमी से लिपट सकती है, जिसको मैं नहीं जानता...मुझे यकीन हो गया है कि यह ज़रूर होकर रहेगा। क्यों? मैं अपने आपसे उदासी में पूछता हूँ, क्यों, आख़िर क्यों मैंने किसी एक झगड़े के बाद उसे तलाक़ नहीं दिया? क्यों वह ख़ुद उस वक़्त मुझसे दूर नहीं चली गयी, हमेशा-हमेशा के लिए? आज उसका यह अभाव तो महसूस नहीं होता, उसके प्रति नफ़रत और बेचैनी तो महसूस न होती और इस तरह मैं आराम से नौकरी करते हुए और बिना कुछ सोचे हुए अपनी ज़िन्दगी तो जी लेता...।

आँगन में दो लालटेनों के साथ कोच अन्दर आ गया फिर अन्दर आया चौड़ी

स्लेज वाला त्रोइका। ज़ाहिर है, पत्नी के यहाँ दावत थी।

आधी रात तक नीचे सब कुछ ख़ामोश था। मैं कुछ सुन नहीं पा रहा था, पर आधी रात होते ही कुर्सियों के खिसकाने और प्लेटों के रखने की आवाज़ें आयीं। मतलब खाने की तैयारी हो रही थी। थोड़ी देर बाद कुर्सियाँ फिर खिसकाई गयीं और मुझे शोर सुनाई पड़ा। शायद हुर्रा-हुर्रा चिल्ला रहे थे सब। मारिया गिरासिमोवना सो गयी थी और पूरी ऊपर की मंज़िल में मैं अकेला था। ड्राइंगरूम में मेरे ज़ालिम और गरीब पुरखों के फ़ोटो दीवार से मुझे देख रहे थे और मेरे ऑफ़िस में मेरे लैम्प का साया खिड़की पर हिल-डुल रहा था। नीचे जो हो रहा था, उसके प्रति ईर्ष्या और एक किस्म की निर्भरता के भाव से मैं सब सुन रहा था और सोच रहा था, इस घर का मालिक तो मैं हूँ। अगर चाहूँ, तो एक पल में इन माननीय महोदयों को घर से निकाल सकता हूँ, पर मैं समझता था यह सब बकवास है। किसी को भी निकालना मुमकिन नहीं था और मालिक शब्द बेमानी था। अपने आपको कितना ही मालिक, सम्पन्न, शादीशुदा या अफ़सर समझूँ पर मैं यह भी जानता था कि ये सब बेमानी हैं।

खाने के बाद कोई तो ऊँची आवाज़ में गाने लगा।

कुछ खास नहीं घटा है, मैंने अपने आपको विश्वास दिलाया, मैं क्यों बेचैन हो रहा हूँ? कल उसके पास नीचे नहीं जाऊँगा। बस और क्या? हमारा झगड़ा खत्म।

रात के डेढ़ बजे मैं सोया।

"नीचे मेहमान जा चुके हैं?" अलेक्सेई से, जो मेरे कपड़े बदल रहा था, मैंने पूछा।

"जी हाँ, जा चुके हैं।"

"और ये हुर्रा क्यों चिल्ला रहे थे?"

"अलेक्सेई दीमीतरीच मखनोव ने एक हज़ार पौंड मैदा और एक हज़ार रूबल भूखों के लिए दान किये थे। एक बूढ़ी बैरोनेस ने, नहीं जानता उसका क्या नाम है, अपने गाँव में 1500 आदमियों के लिए डाइनिंग हॉल बनाने का वादा किया था। भगवान उन सबको बचाये रखे...नतालिया गवरीलोवना ने सुझाया कि वे सब हर शुक्रवार को इसी तरह से मिलें।"

"मतलब नीचे?"

"जी हाँ, खाना खाने से पहले रिपोर्ट पढ़ी गयी। अगस्त से आज तक नतालिया गवरिलोवना ने ब्रेड के अलावा एक हज़ार आठ रूबल इकट्ठे किये हैं। भगवान उन्हें महफूज़ रखे...मेरे ख़्याल से अगर बैरोनेस इन्सानों की जान बचाने के लिए इसी तरह मेहनत करती रहीं, तो काफ़ी इकट्ठा हो जायेगा। यहाँ रईस काफ़ी हैं ही।"

अलेक्सेई को जाने को कह मैंने रोशनी बुझा दी और सिर ढक कर लेट गया।

वैसे मैं क्यों बेचैन हो रहा हूँ? मैं सोच रहा था। यह कौन-सी ताक़त मुझे की तरफ़ खींच रही है। बिलकुल वैसे ही, जैसे पतंगा दीये की तरफ़ खिंचा

आता है? मैं उनको जानता नहीं हूँ, पहचानता नहीं हूँ, कभी मिला नहीं हूँ और उनसे प्यार भी नहीं करता, फिर यह बेचैनी क्यों?

अचानक मैंने कम्बल के अन्दर ही क्रॉस बनाया।

"यह कैसी औरत है?" पत्नी के बारे में सोचते हुए मैंने अपने आपसे कहा, "मुझसे छिपाकर इस घर में पूरी कमेटी की मीटिंग करती है। छिपाकर क्यों? षड्यन्त्र क्यों? मैंने उसका क्या बिगाड़ा है?"

इवान इवानिच ठीक कहता है, मुझे यहाँ से चले जाना चाहिए।"

अगले दिन मैं और भी पक्के इरादे से उठा। जितनी जल्दी हो सके यहाँ से चले जाना चाहिए। कल के विवरण, चाय पर की गयी बातें, पत्नी, सोबल, खाना, मेरे डर, इन सबने मुझे बहुत सताया था। मैं खुश था कि जल्दी ही सब कुछ याद दिलाने वाले इस माहौल से छुटकारा पा जाऊँगा। मैं जब कॉफी पी रहा था, तो चीफ अफ़सर ब्लादीमीर प्रखोविच मुझे हर बात के बारे में ब्रीफ़ कर रहा था और सबसे .खुश ख़बर उसने आख़ीर में दी।

"जिन चोरों ने जई चुराई थी उन्हें पकड़ लिया गया है", मुस्कराते हुए उसने बताया, "कल इंस्पेक्टर ने पेस्तरोव में तीन आदमी गिरफ्तार किये हैं।"

"दफ़ा हो जाओ यहाँ से!" मैं उस पर चिल्लाया और गुस्से में बिना किसी वजह के बिस्कुटों की टोकरी उठायी और ज़मीन पर फेंक दी।

4

नाश्ता करने के बाद मैंने हाथ धोये और सोचने लगा, पत्नी से मिलना चाहिए और अपने जाने की ख़बर बता देनी चाहिए, पर किसलिए? किसको इसकी ज़रूरत है? मैंने अपने आपको जवाब दिया, किसी को इसकी ज़रूरत नहीं है, पर क्यों न सिर्फ़ इसीलिए बताया जाये कि यह उसे सिवा एक तसल्ली के कुछ और नहीं देगा और कल रात के झगड़े के बाद एक शब्द भी कहे बिना जाना व्यावहारिक नहीं होगा। वह सोच सकती है कि मैं उससे डर गया या फिर यह ख़्याल कि वह मुझे मेरे ही घर से निकालने में कामयाब हो गयी, परेशान करेगा। यह ऐलान भी उसे परेशान नहीं करेगा कि मैं पाँच हज़ार रूबल दान कर रहा हूँ। यह मदद करने में उसे एक-दो सलाह दे सकूँगा, कुछ बातों से ख़बरदार भी कर सकूँगा, साथ ही यह भी बता सकूँगा कि उसका इस गम्भीर मामले में कोई तजुर्बा न होने की वजह से नतीजे खराब भी हो सकते हैं। मतलब यह कि पत्नी से मिलने की इच्छा ज़ोर पकड़ती जा रही थी और जब मैं उससे मिलने के तरह-तरह के बहाने ढूँढ़ रहा था, तो मेरे अन्दर एक यकीन गहराता जा रहा था कि मैं उससे ज़रूर मिलूँगा।

जब मैं उससे मिलने गया, अभी रात नहीं हुई थी। लैम्प नहीं जलाये गये थे। वह अपने ऑफ़िस में बैठी हुई थी, जो उसके ड्राइंगरूम और बेडरूम के बीच में था। वह मेज़ पर सिर झुकाये कुछ तो जल्दी-जल्दी लिख रही थी। मुझे देखते ही वह काँप उठी। कुर्सी से उठी और इस तरह खड़ी हो गयी कि अपने काग़ज़ों की मुझसे हिफ़ाज़त कर रही हो।

"सॉरी, मैं सिर्फ़ एक मिनट के लिए आया हूँ", मैंने कहा और जाने क्यों कहते-कहते घबरा गया," नतालिया, मुझे बाइचान्स यह पता लगा है कि तुम भूखों की मदद का आयोजन कर रही हो।"

"हाँ, कर रही हूँ, पर यह मेरा काम है।" उसने जवाब दिया।

"हाँ, तुम्हारा काम है", मैंने आहिस्ता से कहा, "मैं इस बात से खुश हूँ, क्योंकि मेरी भी यही इच्छा थी। मैं इसमें हिस्सा लेने की इजाज़त चाहता हूँ।"

"माफ़ करें, ऐसा मैं कभी नहीं करूँगी" उसने जवाब दिया और फिर दूसरी तरफ़ देखने लगी।

"आख़िर क्यों नहीं नतालिया", मैंने आहिस्ता से कहा, "क्यों नहीं? मैं भी सम्पन्न हूँ और मदद करना चाहता हूँ।"

"मुझे नहीं पता, क्यों तुम बीच में पड़ना चाहते हो?" एक कन्धा उचकाते हुए और ज़ोर से हँसते हुए उसने पूछा।

"किसी ने तुमसे विनती नहीं की है।"

"तुमसे भी किसी ने विनती नहीं की है और फिर तुमने मेरे घर में पूरी कमेटी की बैठक बुला ली।"

"मुझसे विनती की थी और तुमसे, मेरा यकीन मानो कोई भी कभी भी कोई विनती नहीं करेगा। जाओ और ऐसी जगह मदद करो जहाँ तुम्हें कोई न जानता हो।"

"भगवान के लिए, इस तरह से मुझसे बात मत करो।"

मैं विनम्र बनने की कोशिश कर रहा था और मन-ही-मन अपना धैर्य न खो देने की प्रार्थना कर रहा था। शुरू के कुछ पलों में मुझे मेरी पत्नी का सामीप्य बहुत अच्छा लगा। मैंने अपने अन्दर एक बहुत ही सुखद, प्रिय, घरेलू अनुभूति महसूस की, जो मुझे ऊपर मेरे हिस्से में कभी नहीं हुई। सच कहूँ, तो जीवन में अभी तक ऐसा महसूस नहीं किया। मेरी पत्नी ने गुलाबी फलैनेल का गाउन पहना हुआ था। वह उसे और भी जवान बना रहा था और उसकी तेज़ चाल को एक कोमलता प्रदान कर रहा था। उसके घने खूबसूरत काले बाल, जो कभी मुझे उत्तेजित कर देते थे, उसके देर तक झुके रहने की वजह से जूड़े में से निकल गये थे और खुल गये थे, आज मुझे और भी ज़्यादा ख़ूबसूरत और घने लग रहे थे। वैसे कहा जाये तो यह सब बहुत ही सहज और सामान्य था। मेरे सामने एक औसत महिला खड़ी थी, शायद बदसूरत भी, पर यह मेरी पत्नी थी, जिसके साथ मैं कभी रहता था और शायद आज

भी रहता, सिर्फ़ अगर उसका स्वभाव ऐसा खराब न होता। दुनिया में यह एकमात्र इन्सान थी, जिसे मैं बेइन्तहा प्यार करता था और जाने से पहले, जब मुझे पता था कि आज के बाद मैं उसे खिड़की में खड़ा नहीं देख पाऊँगा, आज उसकी बेरुखी, उसका घमंड के साथ मुझे जवाब देना, नफ़रतभरी हँसी हँसना, यह सब मुझे और भी ज़्यादा उत्तेजित कर रहा था, सम्मोहित कर रहा था। मैं उस पर गर्व कर रहा था और समझ गया था कि उसे छोड़कर उससे दूर जाना मेरे लिए नामुमकिन है।

"पावेल अन्द्रेइच," उसने थोड़ी देर ख़ामोश रहने के बाद कहा, "दो साल तक हमने एक-दूसरे को डिस्टर्ब नहीं किया और आराम से रहे हैं। अचानक आज आपको क्यों अपने गुज़रे हुए कल की तरफ़ लौटने की ज़रूरत महसूस हो रही है? कल आप सिर्फ़ मेरी बेइज़्ज़ती करने और मुझे नीचा दिखाने के लिए आये थे," वह ऊँची आवाज़ में कह रही थी। उसका चेहरा गुस्से से तमतमा गया था और उसकी आँखों में नफरत साफ दिख रही थी, "अपने आपको सँभालिए, यह सब मत करिए, पावेल अन्द्रेइच, कल मैं अपनी अर्जी दे दूँगी, मुझे पासपोर्ट मिल जायेगा और मैं चली जाऊँगी, चली जाऊँगी, चली जाऊँगी। मैं किसी मोनास्ट्री, विधवा आश्रम या भिखारी निकेतन में चली जाऊँगी...।"

"पागलख़ाने में।" अपने आपको कन्ट्रोल न कर पाते हुए मैं चिल्लाया।

"हाँ, पागलख़ाने में भी। वह बेहतर होगा। वह बेहतर होगा।" आँखों को चौड़ा करते हुए वह चिल्लाकर कह रही थी, "आज जब मैं पेस्तरोव में गयी, तो मुझे भूखी और बीमार औरतों से रश्क हो गया, क्योंकि वे आप जैसे इन्सानों के साथ नहीं रहतीं। वे ईमानदार और आज़ाद हैं और मैं आपकी मेहरबानियों पर ज़िन्दा, बेरोज़गार हूँ, बेकारी में मर रही हूँ, आपकी रोटी खा रही हूँ, आपके पैसे ख़र्च कर रही हूँ और इस सबका भुगतान मैं अपनी आज़ादी और ईमानदारी से कर रही हूँ, जिसकी किसी को ज़रूरत नहीं है। आप मुझे मेरा पासपोर्ट इसलिए नहीं देते, क्योंकि आप चाहते हैं, मैं आपके ईमानदार नाम की हिफ़ाज़त करूँ, जो आपका है ही नहीं।"

चुप रहना ही ठीक था। दाँत भींचकर मैं फौरन ड्राइंगरूम में चला आया, पर तभी वापस लौटा और मैंने कहा, "मैं आपसे दोनों हाथ जोड़कर विनती करता हूँ कि आज के बाद इस तरह की बैठकें और षड्यन्त्र मेरे घर में न हों। अपने घर में मैं सिर्फ़ उनको आने की इज़ाज़त देता हूँ, जिनको मैं जानता हूँ और ये सब आपके कुली-कबाड़ी अगर इनको कोई धर्मार्थ का काम करना है, तो कोई और घर ढूँढें। मैं नहीं चाहता कि रातों में मेरे घर में खुशी से 'हुर्रा' चिल्लाएँ और आप जैसे मनोरोगी का फ़ायदा उठाएँ।"

मेरी पीली पड़ गयी पत्नी, अपने हाथ झटकाते और ज़ोर से चिल्लाते हुए मानो उसके दाँत में दर्द हो, एक कोने से दूसरे कोने में जल्दी-जल्दी चक्कर लगा रही थी। मैंने अपने हाथ हिलाये और ड्राइंगरूम में चला गया। गुस्सा मेरा दम घोंट रहा था।

साथ ही मैं डर से काँप भी रहा था कि कहीं कुछ ऐसा न कर बैठूँ या कुछ ऐसा न कह दूँ कि बाद में सारी ज़िन्दगी पछताना पड़े। मैंने अपने हाथ कसकर बाँधे हुए थे, यह सोचते हुए कि यही मुझे कन्ट्रोल में रख सकेंगे।

थोड़ा शान्त होकर और पानी पीकर मैं फिर अपनी पत्नी के कमरे में गया। वह वैसे ही पहले वाले पोज़ में खड़ी थी, मानो मेज़ पर रखे काग़ज़ों को मुझसे छिपा रही हो। उसके सर्द और ज़र्द चेहरे पर आहिस्ता-आहिस्ता आँसू बह रहे थे। मैं थोड़ी देर खामोश रही, फिर बड़े प्यार से बिना किसी गुस्से के कहा, "तुम मुझे समझती क्यों नहीं हो? क्यों मुझ पर अन्याय कर रही हो? मैं कसम खाकर कहता हूँ कि मैं सच में तुम्हारी मदद करने आया था।"

"पावेल अन्द्रेइच", उसने अपने दोनों हाथ अपनी छाती पर रखकर कहा, यह कहते हुए उसके चेहरे पर यातना और विनती के भाव ऐसे झलक रहे थे, जैसे किसी डरे, सहमे और रोते हुए बच्चों के चेहरे पर होते हैं और वे विनती कर रहे होते हैं कि उन्हें सजा न दी जाये," मैं जानती हूँ आप नहीं मानेंगे, पर फिर भी विनती करती हूँ। अपने आपको मजबूत कीजिए। कम से-कम ज़िन्दगी में एक तो अच्छा काम कीजिए। मैं आपसे विनती करती हूँ, यहाँ से चले जाइए। भूखों के लिए आप इतना ही कर सकते हैं। चले जाइए, "मैं आपसे विनती करती हूँ। बस, और कुछ नहीं चाहती मैं आपसे।"

"आप बिना बात के मेरी बेइज़्ज़ती कर रही हैं नतालिया", मैंने एक लम्बी साँस लेते हुए और एक किस्म की नर्मी महसूस करते हुए कहा, "मैंने ख़ुद जाने का तय कर लिया है, पर मैं जब तक भूखों के लिए कुछ कर नहीं दूँगा, तब तक नहीं जाऊँगा। यह मेरा फर्ज़ है।"

"अच्छा," उसने आहिस्ता से कहा और बड़ी बेसब्री से अपना चेहरा सिकोड़ा, "आप एक बहुत अच्छा पुल बना सकते हैं, रेल की पटरी बिछा सकते हैं, पर भूखों के लिए आप कुछ नहीं कर सकते। आप यह समझ लीजिए।"

"हाँ, आपने कल मेरे ऊपर बेरुखा और उदासीन होने का इलज़ाम लगाया था और यह भी कहा था कि मेरे अन्दर दया या सहानुभूति की भावना नहीं है। आप मुझे कितनी अच्छी तरह से जानती हैं," मैं हँस पड़ा, "आप तो ईश्वर में विश्वास रखती हैं। भगवान गवाह है, मैं रात-दिन इस बात को लेकर परेशान हूँ...।"

"मैं देख रही हूँ, आप परेशान हैं, पर उसकी वजह भूख, सहानुभूति और दया नहीं है। आप परेशान हैं कि भूखे आपके बिना भी ज़िन्दा हैं और जो ज़िला अधिकारी मदद कर रहे हैं, वे आपके नेतृत्व और मार्ग-दर्शन की ज़रूरत महसूस नहीं करते।"

अपनी चिढ़ को बस में करने के लिए मैं थोड़ी देर चुप रहा, फिर मैंने कहा, "मैं आपसे काम की बात करने आया हूँ। बैठ जाइए, बैठ जाइए। आपसे विनती करता हूँ, बैठ जाइए।"

वह नहीं बैठी।

"बैठ जाइए, प्लीज़।" मैंने दोहराया और कुर्सी की तरफ़ इशारा किया।

वह बैठ गयी। मैं भी बैठ गया, फिर मैंने सोचा और कहा, "मेहरबानी करके जो मैं कह रहा हूँ, उसे गम्भीरता से लें। सुनिए...अपनों के प्यार की ख़ातिर आपने भूखों की मदद करने का बीड़ा उठाया है। मैं इसके ख़िलाफ़ नहीं हूँ। आपसे पूरी तरह सहमत हूँ और हमारे बीच के सम्बन्ध कैसे भी हों, इसके बावजूद आपके इस काम में आपका पूरा-पूरा साथ देने को भी तैयार हूँ। आपके विचार और भावना की मैं क़द्र करता हूँ...भावना की", मैंने दोहराया," मैं इसकी इजाज़त कभी नहीं दे सकता कि इतना मुश्किल और ज़िम्मेदारी का काम सिर्फ़ आपके हाथों में हो। आप एक महिला हैं, नातजुर्बेकार हैं, ज़िन्दगी से नावाक़िफ़ हैं, आसानी से भरोसा कर लेती हैं और फिर आप बहुत ही भावुक हैं। आप ऐसे मददगारों से घिरी हैं, जिन्हें आप बिलकुल नहीं जानतीं। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी, अगर मैं यह कहूँ कि आज के हालात में आपकी मदद के दो दुखदायी नतीजे हो सकते हैं। एक हमारा गाँव बिना मदद के रह जायेगा और दूसरा आपकी और आपके मददगारों की ग़लतियों की वजह से आपको अपनी जेब से पैसे भरने पड़ेंगे। साथ-साथ आपका नाम भी बदनाम होगा। जो पैसे कम पड़ेंगे, उनको तो मान लीजिए मैं भर दूँगा, पर आपका नाम कौन लौटाएगा? जब खराब कन्ट्रोल और मैनेजमेन्ट की वजह से अफवाह फैलेगी कि मैंने और आपने दो हज़ार रूबल हड़प लिये तो क्या आपके सहयोगी मददगार आपकी मदद के लिए आयेंगे?"

वह ख़ामोश रही।

"यह मैं अपने घमंड की वजह से नहीं कह रहा हूँ, जैसा कि आप हमेशा कहा करती हैं," मैं कह रहा था, "सिर्फ़ यह सोचकर कह रहा हूँ कि जिससे भूखे बिना मदद के न रह जायें और आपका नाम बदनाम न हो। इसलिए आपके इस काम में हाथ बँटाना मैं अपना फ़र्ज़ समझता हूँ।"

"आप जो भी कहना चाहते हैं, थोड़े में कहें", पत्नी ने कहा।

"मेहरबानी करके", मैंने कहा, "यह बताइए कि आज तक आपके पास कितना पैसा इकट्ठा हुआ और कितना खर्च हुआ। आज के बाद जो भी पैसा या सामान आये, उसका हिसाब आप मुझे हर रोज़ दिया करेंगी।...और नतालिया, इसी तरह आप अपने सहयोगी मददगारों की फेहरिस्त भी मुझे दें। हो सकता है, वे सब ईमानदार हों। मैं इसमें शक नहीं कर रहा हूँ, फिर भी फेहरिस्तें बनानी ज़रूरी हैं।"

वह खामोश रही। मैं कुर्सी से उठा और कमरे में घूमने लगा।

"आइए, फेहरिस्तें बनायें" मैंने कहा और उसकी मेज़ पर बैठ गया।

"क्या आप सीरियस हैं?" मुझे डर और अविश्वास से देखते हुए उसने पूछा।

"नतालिया, आप बात की गम्भीरता समझे, मैंने उसके चेहरे की तरफ़ देखते

हुए, जिस पर साफ लिखा था कि वह विरोध करना चाहती थी, विनती की, "मेहरबानी करके मेरे तजुर्बे और ईमानदारी पर भरोसा कीजिए।"

"मैं अभी भी नहीं समझ पाई हूँ, आप चाहते क्या हैं?"

"मुझे बताइए कितना पैसा इकट्ठा हुआ और कितना खर्च हुआ है?"

"मैं कुछ छिपाती नहीं हूँ। हर कोई हिसाब देख सकता है। लीजिए, देख लीजिए।"

मेज़ पर पाँच स्कूली नोटबुक्स पड़ी थीं। कुछ पोस्टऑफ़िस के काग़ज़ों की नक़ल, गाँव का नक्शा और हर साइज़ के काग़ज़ों के कुछ बंडल।

शाम हो गयी थी। मैंने मोमबत्ती जलायी।

"सॉरी, मैं तो यहाँ कुछ भी नहीं देख पा रहा हूँ।" नोटबुक के काग़ज़ों को उलटते-पलटते मैंने कहा, "जो पैसा आया है, उसका रजिस्टर कहाँ है?"

"वह दस्तखत की गयी रसीदों से मिल जायेगा।"

"वह तो ठीक है, पर रजिस्टर चाहिए," उसके भोलेपन पर मुस्कराते हुए मैंने कहा, "वे खत कहाँ हैं, जिनमें लिखा है, कितना पैसा और कितना सामान आया है? पार्दोन, नतालिया, यह बहुत छोटी, पर व्यावहारिक ज़रूरत है। नतालिया, इन ख़तों को सँभाल कर रखना चाहिए। आपको हर ख़त पर नम्बर डालना चाहिए और उसे अपने रजिस्टर में दर्ज करना चाहिए। जो ख़त आप लिखती हैं, उनके साथ भी ऐसा ही करना चाहिए। वैसे यह सब मैं खुद ही करूँगा।"

"करिए-करिए...।" उसने कहा।

मैं अपने आपसे बहुत ख़ुश था। छोटी-सी मेज़ पर बैठकर मैं एक अच्छा काम कर रहा था। मुझे अपनी पत्नी के सामीप्य में ये नोटबुक और काग़ज़ तरतीब में लगाने होंगे, यह काम सोचकर मैं खुश था, पर साथ ही डर रहा था कि मेरी पत्नी अभी मुझे डिस्टर्ब करेगी या कोई अन-अपेक्षित चाल चलेगी। इसीलिए मैं जल्दी-जल्दी काम कर रहा था और कोशिश कर रहा था कि उसके काँपते होठों पर कोई ध्यान न दूँ और न ही देखूँ उसकी डरी हुई और निराश आँखें, जो एक पिंजरे में बन्द जानवर की तरह, इधर-उधर देख रही थीं।

"जानती हैं, नतालिया", मैंने उसकी तरफ़ बिना देखे कहा, "मुझे ये नोटबुक और काग़ज़ ऊपर ले जाने की इजाज़त दें। मैं ऊपर आराम से सब काग़ज़ देख लूँगा और कल आपको अपनी राय बता दूँगा। कोई और काग़ज़ तो नहीं है?" मैंने नोटबुक और काग़ज़ों को एक लिफ़ाफ़े में रखते हुए कहा।

"ले जाइए, सब ले जाइए," मेरी पत्नी ने सब काग़ज़ और नोटबुक लिफ़ाफ़े में रखने में मदद करते हुए कहा। यह करते हुए उसके चेहरे पर मोटे-मोटे आँसू बह रहे थे, "सब ले जाइए, यही सब मेरी ज़िन्दगी में बचा है...यह आख़िरी चीज़ भी छीन लीजिए।"

"उफ, नतालिया, नतालिया।" मैंने उलाहना देते हुए लम्बी साँस ली।

उसने मेरी छाती पर कोहनी मारी, अपने खुले बालों से मेरे चेहरे को छूते हुए मेज़ की ड्रॉअर बाहर खींची और उसमें से काग़ज़ निकाल कर मेरे सामने मेज़ पर फेंकने लगी। ऐसा करते हुए उसमें रखे छोटे-छोटे सिक्के मेरे पैरों और फर्श पर गिर रहे थे।

"सब कुछ ले जाइए...।" उसने भर्राई आवाज़ में कहा।

काग़ज़ों को मेज़ पर फेंकने के बाद वह मेरे पास से हट गयी और दोनों हाथों से सिर पकड़े सोफे में धँस गयी। मैंने पैसे इकट्ठे किये, दोबारा से ड्रॉअर में रखे और ड्रॉअर बन्द कर दी, जिससे अपराध-बोध न होने लगे। मैंने सारे काग़ज़ अपनी बग़ल में दबाये और ऊपर जाने लगा। अपनी पत्नी के पास से गुज़रते हुए मैं थोड़ा रुका और सुबकती हुई पीठ और कन्धों को देखते हुए मैंने कहा, "आप भी बच्चों की तरह कर रही हैं, नतालिया, चुप हो जाइए। सुनिए, जब आपकी समझ में आयेगा कि यह काम कितना गम्भीर और ज़िम्मेदाराना है, तो आप पहली होंगी, जो मुझे शुक्रिया कहेंगी। आपकी क़सम।"

ऊपर आकर मैं आराम से काग़ज़ों को देखने लगा। नोटबुकों की जिल्द नहीं बाँधी गयी थी और पृष्ठों पर नम्बर नहीं डाले गये थे। नोटबुक में अलग-अलग लिखाई में लिखा गया था। ज़ाहिर है, जिसका मन किया वही नोटबुक लिख रहा था। सामान की फ़ेहरिस्त में हर सामान के आगे उसकी कीमत नहीं लिखी थी। सोचिए, जो जई आज एक रूबल पन्द्रह कोपेक की है, एक महीने बाद दो रूबल पन्द्रह कोपेक की हो जायेगी। ऐसे भी भला कोई काम होता है, फिर लिखा था सोबल को बत्तीस रूबल दिये। ....कब दिये? किसलिए दिये? वजह बताता हुआ दस्तावेज़ कहाँ है? कुछ नहीं है। कुछ समझ नहीं आ रहा। कोर्ट केस में ऐसे काग़ज़ और शक पैदा कर सकते हैं।

"वह कितनी भोली है।" मैं आश्चर्यचकित था, "वह अभी छोटी बच्ची है।"

मैं बड़ा निराश हुआ। साथ ही यह सब बहुत ही मज़ाकिया लगा।

5

पत्नी ने आठ हज़ार इकट्ठे कर लिये थे और उसमें मेरे पाँच हज़ार जोड़ दिये, तो कुल मिलाकर हो जाते हैं तेरह हज़ार। शुरू करने के लिए यह बहुत अच्छी रक़म थी। वह काम जो मुझे बहुत अच्छा लगता था और मुझे बेचैन कर रहा था, आख़िरकार मेरे हाथों में था। मैं अब वह सब कर सकता था, जो और दूसरे करना नहीं चाहते थे और न ही कर सकते थे। मैं अपना फर्ज़ पूरा कर पाऊँगा और इस तरह से

भूखों की ठीक से मदद कर पाऊँगा।

लगता था सभी कुछ मेरी मर्ज़ी के मुताबिक़ हो रहा था, पर फिर भी मेरी बेचैनी मेरा पीछा नहीं छोड़ रही थी। चार घंटों में मैंने अपनी पत्नी के काग़ज़ पूरी तरह देख लिये, उनका मतलब समझ गया और जहाँ कहीं ग़लतियाँ थीं, वे ठीक कर दीं, पर इसके बावजूद कि मैं तसल्ली महसूस करता था, मुझे लग रहा था, जैसे कोई बड़ा ही सख़्त और रूखा हाथ मेरी कमर पर घुमा रहा है। मुझे क्या कमी थी? कैसा अभाव था? मदद अब भरोसेमन्द हाथों में थी। भूखों के पेट भर जायेंगे और क्या चाहिए?

चार घंटे के आसान काम ने जाने क्यों मुझे इतना थका दिया कि मैं न तो झुककर बैठ सकता था, न ही लिख सकता था। नीचे से कभी-कभी ज़ोर से कराहने की आवाज़ें आ रही थीं। मेरी पत्नी रो रही थी। हमेशा की तरह मेरा आलसी, शान्त और पाखंडी नौकर मेरी मेज़ के पास मोमबत्तियों को ठीक करने के लिए आया। उसने बड़े ही अजीब ढंग से मेरी तरफ़ देखा।

"नहीं, मुझे चले जाना चाहिए," मैंने थककर आख़ीर में तय किया, "इन ख़्यालों से कहीं दूर। कल ही चला जाऊँगा।"

मैंने सारे काग़ज़ इकट्ठे किये और पत्नी के पास जाने के लिए तैयार हुआ। थकावट और टूटन की वजह से जब मैंने अपने दोनों हाथों से काग़ज़ों को अपने सीने से चिपकाया, तब बेडरूम के पास से गुज़रते हुए मैंने देखा कि मेरे बक्से बाहर रखे हुए थे..।

"आप क्या बादशाह के वज़ीर हैं?" किसी ने आहिस्ता से पूछा, "बहुत ख़ुशी हुई आपसे मिलकर, पर आप हैं बहुत कमीने।"

"यह सब बकवास है, बकवास है, बकवास..." मैं सीढ़ियाँ उतरते हुए बुदबुदा रहा था, "सब बकवास है...यह भी बकवास है कि मेरा घमंड मुझे चला रहा है...। ये कैसी छोटी बातें हैं? क्या भूखों की मदद करने के लिए मुझे कोई स्वर्ण पदक दे देगा या किसी डिपार्टमेन्ट का डायरेक्टर बना देगा? सब बकवास है! और फिर अपने ही गाँव में किसको अपना घमंड दिखा सकता हूँ?"

मैं थक गया था, बहुत थक गया, पर कोई मेरे कानों में कह रहा था, "बहुत ख़ुशी हुई, पर जो भी हो, आप हैं बहुत कमीने।" जाने क्यों मुझे एक पुरानी कविता की, जो कभी मैंने बचपन में पढ़ी थी, एक लाइन याद आ गयी—कितना अच्छा होता है, अच्छा इन्सान होना।

मेरी पत्नी उसी पोज़ में सोफे पर लेटी थी, चेहरा झुकाये हुए और सिर को दोनों हाथों में पकड़े हुए। वह रो रही थी। उसके पास डरी और सहमी हुई बावर्ची खड़ी थी। मैंने बावर्ची को बाहर भेजा, काग़ज़ों को मेज़ पर रखा, थोड़ी देर सोचा और कहा, "यह रही आपकी सारी ख़तो-ख़िताबत, नतालिया, सभी ठीक है और

मैं बहुत सन्तुष्ट हूँ। मैं कल चला जाऊँगा।"

वह रोती रही। मैं ड्राइंगरूम में आ गया और वहीं अँधेरे में बैठ गया। मेरी पत्नी का रोना, उसकी सुबकियाँ, उसकी लम्बी साँसें मुझे कहीं अपराधी ठहरा रही थीं, पर अपने आपको बेगुनाह साबित करने के लिए मैंने अपनी बहस के बारे में फिर से सोचा, शुरू से जब मेरे दिमाग़ में अपनी पत्नी को मीटिंग में बुलाने का दुखद ख़्याल आया, फिर नोटबुक लेने और उसके इस रोने तक। यह हमेशा की तरह एक नफ़रत, बेमानी और बेवजह की लड़ाइयों का, जोकि हमारी शादी के बाद बहुत हुआ करती थीं, एक ऐसा ही मिरगी के दौरे की तरह एक और दौरा था, फिर हमारे बीच में ये भूखे कहाँ से आ गये? ऐसा कैसे हो गया कि वे हमारी लड़ाई और बहस की वजह बन गये? यह वैसे ही था, जैसे हम दोनों एक-दूसरे के पीछे बलि की वेदी की तरफ़ भाग रहे थे और वहाँ पहुँचकर लड़ने लगे।

"नतालिया", ड्राइंगरूम में बैठे-बैठे मैंने आहिस्ता से कहा, "बहुत हो गया, बहुत हो गया।"

पत्नी की रुलाई रोकने के लिए और इस नाकाबिले बर्दाश्त हालात के लिए पत्नी के पास जाना, उसे तसल्ली देना, उसे चुप कराना, उसे पुचकारना या उससे माफ़ी माँगना ज़रूरी था, पर यह कैसे किया जाये कि वह मेरा एतबार कर ले? मैं इस सीधे-साधे जीते-जागते और मेरे प्रति नफरत से भरे इस इन्सान को कैसे भरोसा दिलाऊँ कि वह मुझे अच्छा लगता है और मुझे उससे हमदर्दी है? मैं अपनी पत्नी को कभी नहीं समझ पाया और इसलिए नहीं समझ पाया कि उससे क्या और कैसे बात करनी है? उसकी ख़ूबसूरती मुझे अच्छी लगती थी, पर उसके दिल, दिमाग़, उसके विचार, उसके तेज़ी से बदलते हुए मूड, उसकी नफ़रतभरी आँखें, उसका घमंड, उसकी विद्वता जिसने मुझे कभी बहुत प्रभावित किया था या फिर मिसाल के तौर पर एक पादरी जैसा भाव, जो कल उसके चेहरे पर था, यह सब मैं कभी नहीं समझ पाया। जब भी मैंने उसके साथ की गयी बहसों में यह समझने की कोशिश की कि वह कैसा इन्सान है, तो मैंने पाया कि वह बहुत मूडी, हलकी और दुखी इन्सान है और यह समझना मेरे लिए काफ़ी था कि हर औरत की तरह उसकी भी सोच एक सी है, पर आज जब वह रो रही है, तो मेरे अन्दर उसे और समझने की इच्छा प्रबल हो गयी।

रोना बन्द हो गया था। मैं पत्नी के पास गया। वह सोफ़े पर बैठी थी, अपने सिर को दोनों हाथों में पकड़े कुछ सोच में एकटक मोमबत्ती की लौ को देखे जा रही थी।

"मैं कल सुबह जा रहा हूँ।" मैंने कहा।

वह ख़ामोश रही। मैंने कमरे का एक चक्कर लगाया, एक लम्बी साँस ली और कहा, "नतालिया, जब आपने मुझे जाने के लिए कहा था, तो आपने कहा था,

मैंने तुम्हें माफ़ किया, सब माफ़ किया, सब...। मतलब आप मुझे कहीं अपना क़सूरवार मानती हैं। आपसे विनती करता हूँ, बेझिझक और थोड़े में मुझे मेरा क़सूर बतायें।"

"मैं बहुत थकी हुई हूँ। कभी, फिर कभी...।" पत्नी ने कहा।

"मेरा क़सूर क्या है?" मैंने कहा, "मैंने किया क्या है? ज़रा बताइए, आप जवान हैं, ख़ूबसूरत हैं, आप में जीने की लालसा है, पर मैं आपसे उम्र में दुगुना बड़ा हूँ और आप मुझसे नफ़रत करती हैं, पर क्या यह क़सूर है? मैंने आपसे जबर्दस्ती शादी नहीं की थी, फिर भी अगर आप आज़ादी से रहना चाहती हैं, तो जाइए, मैं आपको इजाज़त देता हूँ। जाइए, जिससे चाहे प्रेम करिए। मैं आपको तलाक़ तक दे दूँगा।"

"मुझे इसकी ज़रूरत नहीं है," उसने कहा, "आप जानते हैं, पहले मैंने आपसे प्यार किया था और अपने आपको आपसे बड़ा समझा था। ये सब बेकार की बातें हैं...आपका क़सूर यह नहीं है कि आप बड़े हैं और मैं छोटी हूँ या अगर मैं आज़ाद हो गयी तो किसी और से प्यार कर सकूँगी। क़सूर यह है कि आप एक उलझे हुए खुदगर्ज़ और नफरत करने वाले इन्सान हैं।"

"मैं नहीं जानता, हो सकता है" मैंने कहा।

"आप प्लीज़, चले जाइए। आप सुबह तक मेरा दिमाग़ खाना चाहते हैं, पर मैं कहे देती हूँ मैं बहुत कमज़ोर हो गयी हूँ और आपकी किसी बात का जवाब देने की हालत में नहीं हूँ। आपने जाने का वादा किया है। मैं आपकी बहुत शुक्रगुज़ार हूँ और इससे ज़्यादा मुझे कुछ भी नहीं चाहिए।"

पत्नी चाहती थी कि मैं चला जाऊँ, पर मेरे लिए जाना आसान नहीं था। मैं अपने को कमज़ोर महसूस कर रहा था और मुझे अपने बड़े, भारी, बीमार और असुविधाओं से पूर्ण कमरों में जाने से डर लग रहा था। बचपन में अक्सर ऐसा होता था कि जब मुझे कहीं दर्द हुआ करता था, तो माँ या अपनी आया से लिपट जाया करता था और उनके नर्म और गर्म कपड़ों की तहों में अपना मुँह छिपा लिया करता था, तब मुझे लगता कि मैं दर्द से छिप रहा हूँ। ऐसा ही मुझे आज भी लग रहा था कि मैं अपनी इस बेचैनी से अपनी पत्नी के सामीप्य में इसी छोटे से कमरे में छिप सकता हूँ। मैं बैठ गया और रोशनी की चौंध से बचने के लिए मैंने हाथ से अपनी आँखें ढक ली। सब ख़ामोश था।

"कौन सा क़सूर?" मेरी पत्नी ने देर तक ख़ामोश रहने के बाद और आँसुओं से सुर्ख और चमकती आँखों से मेरी तरफ़ देखते हुए कहा, "आप बहुत पढ़े-लिखे और शालीन हैं, बहुत ईमानदार, न्यायप्रिय और नियम-कानून के ज्ञाता हैं, पर आप कहीं भी जायें, यह सब आप में से ऐसे झलकता है कि हर किसी को घुटन होने लगती है। हर किसी को लगता है, आप उसकी बेइज़्ज़ती कर रहे हैं या फिर उसको नीचा दिखा रहे हैं। आपके विचार बड़े ईमानदार हैं, इसलिए आप सारी दुनिया से

नफ़रत करते हैं। आप आस्तिकों से नफ़रत करते हैं, क्योंकि आपके मुताबिक धर्म में विश्वास करना अज्ञान और पिछड़ापन अभिव्यक्त करता है। साथ ही आप नास्तिकों से भी नफ़रत करते हैं, क्योंकि वे आदर्शहीन और विश्वासविहीन होते हैं। आप व्यंग्यकार से नफ़रत करते हैं, उसके पिछड़ेपन और दकियानूसीपन की वजह से और युवा पीढ़ी से नफ़रत करते हैं, उसकी स्वच्छन्द विचारधारा की वजह से। आपको रूस और उसकी ग़रीब जनता के हित बहुत प्रिय हैं, इसलिए आप जनता से नफ़रत करते हैं क्योंकि हर गरीब में आपको एक चोर और लुटेरा नज़र आता है। आप हर किसी से नफ़रत करते हैं। .ख़ुद आप अकेले ही न्यायसंगत हैं और हमेशा क़ानून छाँटते हैं, इसलिए पड़ोसियों और ग़रीबों की आलोचना करते हैं। आपके बीस बोरे जई के चोरी हो गये, तो आपने क़ानून के प्रेम में आकर ग़रीबों की शिकायत गवर्नर और सारे प्रशासन से कर दी और यहाँ के प्रशासन की शिकायत आपने पीटर्सबर्ग में कर दी। यह है आपका क़ानूनीपन," पत्नी ने कहा और ज़ोर से हँसने लगी, "इसी क़ानून के आधार पर और नैतिकता के हित में आप मुझे मेरा पासपोर्ट नहीं दे रहे हैं। यह ऐसा क़ानून और ऐसी नैतिकता है, जिसके मुताबिक़ एक जवान, ख़ूबसूरत, सेहतमन्द और स्वाभिमानी महिला अपनी ज़िन्दगी क़ैद, उदासी और डर में बिताये और उसके बदले में पाये ये मेज़ और फ़्लैट, वह भी ऐसे इन्सान से, जिसे वह प्यार नहीं करती। आप सारे नियम और क़ानून बहुत अच्छी तरह से जानते हैं। आप ईमानदार, न्यायप्रिय हैं, आप शादी और परिवार की बुनियादों की इज़्ज़त करते हैं और इस सबका नतीजा यह किनला कि सारी ज़िन्दगी में आपने एक भी नेक काम नहीं किया। सब आपसे नफ़रत करते हैं। सबसे आप लड़ चुके हैं और शादी के इन सात सालों में आप सात महीने भी पत्नी के साथ नहीं रहे। आपकी पत्नी नहीं थी और मेरा पति नहीं था। आप जैसे इन्सान के साथ जीना नामुमकिन है। मुझ में तो ताक़त नहीं है। शुरू के सालों में मुझे डर लगता था आपके साथ रहने में और अब मुझे शरम आती है...। इस तरह मेरी ज़िन्दगी के सुनहरे साल बर्बाद हो गये। जब तक मैं अपने आपसे लड़ती रही, मैं अपना स्वभाव ख़राब करती रही। मैं दिन पर-दिन तेज़-तर्रार, बदतमीज़, डरपोक और शक्की होती गयी...। यह सब क्या बताता है? क्या आप सच में समझना चाहते हैं? शौक़ से चले जाइए।" पत्नी सोफ़े में लेट गयी और सोचने लगी।

"ज़िन्दगी कितनी हसीन और क़ाबिले रश्क हो सकती थी," आतिशदान की आग में देखते हुए उसने आहिस्ता से कहा, "कितनी हसीन हो सकती थी, पर अब लौट नहीं सकती।"

जो भी कभी सर्दियों में गाँव में रहा है, वह इन लम्बी, उदास और ख़ामोश शामों को अच्छी तरह समझ सकता है। जब कुत्ते बोर होकर भौंकते हैं, लगता है, घड़ियाल चलते-चलते थक गया है, तंग आ गया है और जिसे इन शामों में उसकी

आत्मा कचोटती है, जो कभी तो अपने अन्तर्मन को मारने, तो कभी समझाने की कोशिश में बेचैन एक कोने से दूसरे कोने में घूमता है, वही समझ सकता है कि इस छोटे और आरामदेह कमरे में गूँजती एक औरत की आवाज़, जो मुझे बेवकूफ़ कह रही थी, मुझे कितनी अच्छी और तसल्ली देने वाली लग रही थी। मैं नहीं जानता था, मेरा अन्तर्मन क्या चाहता था? मेरी पत्नी ने एक अनुवादक की तरह, एक औरत की तरह मेरी बेचैनी का मतलब मुझे समझा दिया। हमेशा की तरह अपनी इस बेचैनी के पलों में मैंने समझा कि सारी बात का सार भूखों में नहीं है, पर इसमें है कि मैं वैसा इन्सान नहीं हूँ, जैसा होना चाहिए था।

पत्नी बड़ी मुश्किल से उठी और मेरे पास आयी।

"पावेल अन्द्रेइच", उदासी में मुस्कराते हुए उसने कहा, "माफ़ कीजिए मैं आपका यकीन नहीं करती। आप कहीं नहीं जायेंगे, पर मैं आपसे एक बार फिर विनती करती हूँ। इसे आप कुछ भी नाम दें," अपने काग़ज़ों को दिखाते हुए उसने कहा, "अपने आपको धोखा, आत्मप्रवंचना, औरत का तर्क, ग़लती, जो चाहे नाम दें, पर आप मुझे परेशान न करें। यही है, जो कुछ मेरी ज़िन्दगी में बचा है।" इतना कहकर उसने मुँह फेर लिया और ख़ामोश हो गयी, "पहले मेरे पास कुछ भी नहीं था। सारी जवानी आपसे लड़ने और बहस करने में बर्बाद कर दी। आज मैंने यह काम हाथ में लिया है और मैं जीवन्त हो उठी हूँ। मैं बहुत खुश हूँ ...। मुझे लगता है, इसमें मुझे मेरे जीवन का अर्थ और लक्ष्य दोनों मिल गये हैं।"

"नतालिया, आप बहुत नेक और आदर्श महिला हैं", बेचैनी में अपनी पत्नी की तरफ़ देखते हुए मैंने कहा, "आप जो कर रही हैं, वह बहुत अच्छा और समझदारी का काम है।"

अपनी बेचैनी छिपाने के लिए मैंने कमरे का एक चक्कर लगाया।

"नतालिया", एक मिनट बाद मैंने कहा, "जाने से पहले आपसे एक विनती करता हूँ। एक मेहरबानी कर दीजिए। भूखों के लिए कुछ करने में मदद कीजिए।"

"मैं क्या कर सकती हूँ? पत्नी ने कहा और अपने कन्धे उचकाये, "क्या यही आपके दस्तख़त वाला काग़ज़ है?"

उसने अपने काग़ज़ों को ऊपर-नीचे किया और मेरे दस्तख़त वाला काग़ज़ ढूँढ़ निकाला।

"कुछ रूबल दान कर दीजिए", उसने कहा। उसके बात करने के अन्दाज़ से साफ़ ज़ाहिर था कि वह अपने दस्तख़त किये काग़ज़ को कोई अहमियत नहीं दे रही थी, "इसके बिना आप इस काम में हिस्सा नहीं ले सकते।"

मैंने काग़ज़ लिया और उस पर लिखा—अनाम, पाँच हज़ार रूबल।

इस अनाम में कुछ तो बनावटीपन, घमंड और घिनौना था और यह मैं तब समझा, जब मैंने देखा कि पत्नी का चेहरा सुर्ख हो गया था और बड़े इतमीनान से

उसने वह काग़ज़ काग़ज़ों के ढेर में घुसा दिया। हम दोनों को शरम आ रही थी। मुझे लगा किसी भी तरह फ़ौरन कुछ भी हो जाये, इस अहसास को ठीक करना है, वरना मुझे गाड़ी में और पीटर्सबर्ग में भी शरम सताती रहेगी, पर कैसे ठीक किया जाये? क्या कहा जाये?

"मैं आपके काम के लिए शुभकामना करता हूँ, नतालिया", मैंने ईमानदारी से कहा, "और आपकी सफलता की कामना भी करता हूँ, पर विदा लेते हुए एक सलाह देने की इजाज़त चाहता हूँ। नतालिया, अपने इस सोबल और आपके सभी मददगार सहयोगियों से होशियार रहिए और इन पर भरोसा मत कीजिए। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि वे ईमानदार नहीं हैं। नाक़ाबिले भरोसा हैं, यह बात भी नहीं है, पर ये इन्सान आदर्श, आस्था और विचारहीन हैं और इनकी ज़िन्दगी का कोई मक़सद नहीं है। ये लोग बेउसूल हैं और इनकी ज़िन्दगी का मक़सद है, सिर्फ़ पैसा। पैसा, पैसा और पैसा, "मैंने एक लम्बी साँस ली," ये सब आसानी से पैसा कमाना चाहते हैं और इसलिए जितने ज़्यादा पढ़े-लिखे हैं, उतने ही ज़्यादा ख़तरनाक हैं।"

पत्नी सोफ़े पर लेट गयी।

"विचार, आदर्श," उसने न चाहते हुए बड़े ही अलसाये ढंग से कहा, "आदर्श, नैतिकता, ज़िन्दगी का मक़सद, उसूल..., ये शब्द आप हमेशा बोलते रहे हैं, जब आप किसी को नीचा दिखाना या बेइज़्ज़त करना या गाली देना चाहते हैं। ऐसे ही हैं आप। अगर आपके नज़रिये और आपके इस काम के प्रति रुख देखते हुए आपको इस काम के करीब भी आने दिया गया तो इसका मतलब होगा, एक ही दिन में इस काम का सत्यानाश। वक़्त आ गया है, आप इसको जान लें।"

उसने एक लम्बी साँस ली और ख़ामोश हो गयी।

"ये नैतिक मूल्यों की अपरिष्कृतता है," पावेल अन्द्रेइच, "आप पढ़े-लिखे हैं, परवरिश आपकी अच्छी हुई है, पर असलियत में आप एक सीथीयन हैं, गँवार हैं, क्योंकि आप एक बन्द ज़िन्दगी जीते हैं, किसी से मिलते-जुलते नहीं हैं और सिवा अपनी इंजीनियरिंग की किताबों के कुछ और नहीं पढ़ते। आप तो जानते हैं, अच्छे आदमी भी होते हैं। अच्छी किताबें भी होती हैं। समझे...मैं थक गयी हूँ और अब और नहीं बोल सकती। मैं सोना चाहती हूँ।"

"ठीक है, मैं जा रहा हूँ, नतालिया" मैंने कहा।

"जाइए, जाइए...शुक्रिया...।"

मैं थोड़ी देर खड़ा रहा, फिर ऊपर चला गया। एक घंटे बाद, इस वक़्त डेढ़ बजा था, मैंने अपने हाथ में मोमबत्ती ली और अपनी पत्नी से बात करने के लिए फिर नीचे गया। मैं नहीं जानता था, उससे क्या बात करूँगी? पर मुझे लग रहा था कि कुछ तो बहुत ज़रूरी और अहम मैं उससे कहना चाहता हूँ। वह अपने ऑफ़िस में नहीं थी और बेडरूम का दरवाज़ा बन्द था।

"नतालिया, आप सो रही हैं?" मैंने आहिस्ता से पूछा।

कोई जवाब नहीं आया। मैं दरवाज़े के पास कुछ देर खड़ा रहा, एक लम्बी साँस ली और ड्राइंगरूम में चला गया। मैं वहाँ सोफ़े में बैठ गया, मोमबत्ती बुझा दी और सुबह होने तक वहीं अँधेरे में बैठा रहा।

6

सुबह दस बजे मैं स्टेशन के लिए निकला। ठंड नहीं थी, पर हलकी बर्फ पड़ रही थी और तेज़ चुभने वाली नम हवा चल रही थी।

पोखर पार किया, फिर बर्च का बाग़ और फिर हम सड़क पर पहाड़ की तरफ़ चढ़ने लगे। वही पहाड़, जो मेरी खिड़कियों से दिखा करता था। मैंने आख़िरी बार अपने घर को देखने के लिए मुड़कर देखा, पर बर्फ़ की वजह से कुछ नहीं देख पाया। थोड़ी देर बाद काली झोंपड़ियाँ मानो कोहरे में ढकी हों, दिखाई दीं। यही पेस्तरोव था।

"अगर मैं कभी पागल हुआ, तो इसका ज़िम्मेदार पेस्तरोव होगा", मैंने सोचा, "यह मुझे हॉन्ट करता है।"

हम अब सड़क पर आ गये थे। सब झोंपड़ियों की छतें ठीक थीं, एक की भी टूटी हुई नहीं थी, एक में भी छेद नहीं थे। मतलब मेरे बेलिफ़ ने झूठ बोला था। एक नौजवान हाथ वाली स्लेज पर एक लड़की को बच्चे के साथ खींचे लिये जा रहा था। दूसरा बच्चा कोई तीन साल का सिर पर गर्म टोपी लगाये और भारी कोट पहने अपनी जबान बाहर निकाले गिरती हुई बर्फ़ को खाने की कोशिश कर रहा था और हँस रहा था। सामने से झाड़-झंखाड़ से भरा एक ठेला आ रहा था। उसके साथ एक किसान चल रहा था और यह जान पाना मुश्किल हो रहा था कि वह बूढ़ा था या फिर उसकी दाढ़ी बर्फ़ से सफ़ेद हो गयी थी। वह मेरे कोचवान को पहचान गया। उसे देखकर मुस्कराया, कुछ तो कहा और यन्त्रवत टोपी उतार कर मेरा अभिवादन किया। कुत्ते घरों के बाहर आ गये थे और चकित से मेरे घोड़ों को देख रहे थे। सब कुछ ख़ामोश, सामान्य और सरल था। गाँव छोड़कर गये हुए वापस आ गये थे। रोटी नहीं थी और झोंपड़ियों पर जो चाहे कब्ज़ा कर रहा था। यह सब इतना स्वाभाविक लग रहा था कि यक़ीन नहीं हो रहा था कि यह सच है। न कोई उदास और निराश चेहरा, न मदद माँगती भर्रायी हुई आवाज़ें, न कोई रो रहा था, न कोई कोस रहा था, बल्कि सब तरफ़ शान्ति थी। ज़िन्दगी ढंग से गुज़र रही थी। बच्चे, स्लेज, सख़्त खड़ी दुमवाले कुत्ते यही सब नज़र आ रहा था। न बच्चे परेशान थे और न ही वह किसान, जो अभी मिला था, फिर मैं क्यों परेशान हूँ?

मुस्कराते हुए किसान, भारी कोट पहने बच्चे और झोंपड़ियों को देखते हुए अपनी पत्नी को याद करते हुए मेरी समझ में आया कि ऐसी कोई आपदा नहीं है, जो इन लोगों को अपने बस में कर सके। मुझे लगा कि हवा में एक जीत का आभास है। मैं इस पर गर्व कर उठा और इनसे ज़ोर से चिल्लाकर कहना चाहता था कि मैं भी इनके साथ हूँ, पर मेरे घोड़े मुझे गाँव से बाहर ले आये हैं। बर्फ़ पड़ रही थी, हवा साँय-साँय की आवाज़ कर रही थी और मैं अपने ख़्यालों के साथ अकेला रह गया। प्रशासन में रह लाखों लोगों की सेवा करने के बाद ज़िन्दगी ने मुझे ऐसे फेंक दिया, मानो मैं एक ग़ैरज़रूरी और बेवकूफ़ आदमी हूँ। मैं एक रुकावट और आपदा का हिस्सा बनकर रह गया था। लोगों ने मुझे अपने बस में कर लिया था, मुझे जीत लिया था और दूर फेंक दिया था और मैं था कि स्टेशन जा रहा था, जिससे कि मैं पीटर्सबर्ग में बड़े होटल बलशोइ मुरस्कोई में जाकर छिप सकूँ।

एक घंटे में मैं स्टेशन पहुँच गया। नम्बर लगे कुली और कोचवान वेटिंग रूम में मेरा सामान ले आये। कोचवान निकानर, जिसने कमर में बेल्ट बाँध रखी थी, बर्फ़ से पूरी तरह भीग गया था। बहुत सन्तुष्ट था कि मैं जा रहा हूँ। उसने बड़े ही दोस्ताना अन्दाज़ में मुस्करा कर कहा, "हुजूरे अनवर, शुभयात्रा, भगवान आपकी रक्षा करे!"

बाइदवे मुझे सब हुज़ूरे अनवर कहते हैं। हालाँकि मैं एक अदना-सा सरकारी अफ़सर हूँ। क़ुली ने कहा कि गाड़ी अभी तक पिछले स्टेशन से नहीं चली है। इन्तज़ार करना पड़ेगा। रात में सो न पाने की वजह से सिर में दर्द हो रहा था और थकान की वजह से चलना मुश्किल था, फिर भी मैं बाहर आया और बिना किसी मकसद के पम्प हाउस की तरफ़ गया। आसपास कोई नहीं था।

"मैं क्यों जा रहा हूँ?" मैंने अपने आपसे पूछा, "वहाँ मेरा कौन इन्तज़ार कर रहा है? परिचित, जिनसे मैं दूर चला आया, अकेलापन, रेस्ताराँओं का खाना, शोर, बिजली, जो मेरी आँखों में दर्द करती है...। मैं कहाँ और क्यों जा रहा हूँ? मैं क्यों जा रहा हूँ?"

और फिर जाने क्यों अजीब-सा लग रहा था कि मैं पत्नी से बिना बात किये जा रहा था। मुझे लग रहा था कि मैं उसे बिना बताये जा रहा हूँ। निकलते हुए उसे बताना चाहिए था कि वह ठीक थी। सच मैं एक बुरा इन्सान हूँ।

पम्प हाउस से लौटने के बाद मुझे सामने ही स्टेशन मास्टर दिख गया, जिसकी मैंने दो बार शिकायत की थी। अपने कोट का कॉलर उठाये बर्फ़ और हवा से बचते हुए वह मेरी तरफ़ ही आ रहा था। दो उँगलियाँ अपनी पीककैप पर रखे नफ़रतभरे चेहरे से उसने मुझे बताया कि गाड़ी बीस मिनट लेट है और क्या मैं गर्म कमरे में बैठकर इन्तज़ार करना चाहूँगा? "शुक्रिया", मैंने जवाब दिया, "पर मैं संभवतः नहीं जाऊँगा। मेरे कोचवान को कहला भेजिए कि वह इन्तज़ार करे। मैं अभी और सोच रहा हूँ।"

मैं प्लेटफार्म पर घूम रहा था और सोच रहा था, मुझे जाना चाहिए या नहीं? जब गाड़ी आयी, तो मैंने न जाने का तय किया। घर पर उलझनें, मेरी पत्नी के व्यंग्य, ऊपर की उदास मंज़िल और वही बेचैनी मेरा इन्तज़ार कर रही थी, पर इन सबको मेरी उम्र में बर्दाश्त करना आसान है, बजाय इसके कि दो दिन अजनबियों के साथ सफ़र करूँ और पीटर्सबर्ग पहुँच कर हर पल यह महसूस करूँ कि मेरी किसी को ज़रूरत नहीं है और मैं अपनी मौत के करीब पहुँच रहा हूँ। नहीं, घर में कुछ भी हो जाये, घर वापस जाना ही ठीक है..। मैं स्टेशन से बाहर आ गया। जहाँ मेरे जाने से सब खुश थे, उस घर में दिन की रोशनी में वापस जाना ठीक नहीं है। शाम तक का वक़्त किसी पड़ोसी के यहाँ गुज़ारा जा सकता है, पर किसके यहाँ ? कुछ के साथ मेरा रिश्ता तनावपूर्ण था और कुछ को मैं जानता तक नहीं था। मैंने बहुत सोचा, तब मुझे याद आया इवान इवानिच।

"ब्राग़िन के यहाँ चलें।" मैंने स्लेज में बैठते हुए कोचवान से कहा।

"काफ़ी दूर है", कोचवान ने लम्बी साँस लेकर कहा, "अट्ठाईस मील होगा या फिर तीस भी हो सकता है।"

"मेहरबानी करके चलो, मेरे दोस्त", मैंने इस अन्दाज़ से कहा, मानो कोचवान को मेरा हुक्म न मानने का हक़ है, "चलो, मेहरबानी करके।"

निकानोर ने शक में सिर हिलाया और कुछ ऐसे बुदबुदाया, जैसे वह जाना नहीं चाहता था और कुछ देर ऐसे बैठा रहा, मानो मैं अपना फ़ैसला रद्द कर दूँगा, फिर उसने लगाम हाथ में ली, खड़ा हुआ, थोड़ा सोचा और फिर चाबुक घुमा दिया।

मेरे सारे फ़ैसले परस्पर विरोधी हैं...। बर्फ़ से अपने को बचाते हुए मैं सोच रहा था। मैं ही पागल हो गया हूँ। ठीक है...।

एक जगह बड़ी ऊँचाई से नीचे उतरते हुए निकानोर ने घोड़ों को बहुत ही सावधानी से आधे पहाड़ तक उतारा, पर आधी उतराई में घोड़ों की लगाम ढीली हो गयी और बड़ी ही तेज़ी से स्लेज नीचे आ गयी। वह गुस्से से काँप उठा। उसने अपना हाथ उठाया और फिर बड़े ही जंगलीपन से ज़ोर से चिल्लाकर गाली दी, जो मैंने आज तक नहीं सुनी थी, "अरे, जनरल को सैर करा रहे हो। बेवकूफ़ो, नये ख़रीद लेंगे। अरे, ध्यान से भागो, किसी को कुचल देंगे।"

जब इस असामान्य गति की वजह से मेरी साँस सामान्य हुई, तो मैंने देखा कि वह तो नशे में धुत्त था। हो न-हो स्टेशन पर ही पी होगी। खड्ड की तल में बर्फ़ पिघल रही थी। बर्फ़ का एक बड़ा टुकड़ा सड़क से उचट कर मेरे चेहरे पर लगा। तेज़ी से भागते हुए घोड़े उतनी ही तेज़ी से पहाड़ी पर चढ़ गये, जितनी तेज़ी से उतराई पर उतरे थे और मैं निकानोर को नहीं कह पाया कि इनकी गति कम करे, उतनी ही जितनी सपाट सड़क पर होती है, जिससे सड़क के दोनों तरफ़ लगे क्रिसमिस पेड़ अपने सफ़ेद नर्म पत्तों को मुझ पर झुका सकें।

“मैं पागल हो गया हूँ और कोचवान नशे में धुत्त है...।” मैं सोच रहा था। क्या कमाल है?

इवान इवानिच घर पर ही मिल गया। वह हँसी से खाँस रहा था। मुझसे लिपट कर वह वही सब कुछ कह रहा था, जो हमेशा मुझसे मिलने पर कहा करता था, “तुम तो दिन पर-दिन जवान हो रहे हो। कौन सी डाई से अपने बाल और दाढ़ी रंगते हो। हमें भी दो।”

“इवान इवानिच, मैं आपके यहाँ रिटर्न विज़िट कर रहा हूँ”, मैंने झूठ बोला, “माफ़ करें, मैं ठहरा राजधानी का आदमी। विज़िट तो बराबर करता ही हूँ।”

“मैं बहुत खुश हूँ, मेरे दोस्त, मैं बहुत .खुश हूँ, ईमानदारी मुझे अच्छी लगती है...।”

उसकी आवाज़ और उसके मुस्कराते चेहरे की चमक देखकर मैं समझ गया कि वह मेरे आने से बहुत खुश था और अपने को कृतज्ञ समझ रहा था। बाहर के कमरे में दो महिलाओं ने मेरा ओवरकोट उतारा और लाल कमीज़ पहने एक नौकर ने उसे खूँटी पर टाँगा। जब मैं और इवान इवानिच उसके छोटे से कमरे में गये, तो मैंने देखा, दो लड़कियाँ नंगे पैर फ़र्श पर बैठी जिल्द बँधी पत्रिका ‘इलस्ट्रेशन’ देख रही थीं। हमें देखते ही वे वहाँ से भाग गयीं और तभी चश्मा पहने एक पतली-दुबली बुढ़िया अन्दर आयी। उसने झुककर मेरा अभिवादन किया। सोफ़े से तकिया और फर्श पर से ‘इलस्ट्रेशन’ उठा कर चली गयी। साथ के कमरों में से खुसर-पुसर और नंगे पैरों से चलने की आवाज़ें आ रही थीं।

“पर मैं डॉक्टर का लंच पर इन्तज़ार कर रहा हूँ”, इवानिच ने कहा, “उसने क्लिनिक से लौटते हुए आने का वादा किया है। हाँ, वह हर बुधवार को मेरे साथ लंच करता है। भगवान उसे ठीक रखे!” वह मेरे पास आया और मेरा गाल चूम लिया, “आप आ ही गये हैं, तो नाराज़ न हों”, वह सिगरेट का कश खींचते हुए बुदबुदाया, “नाराज़ मत होइए। शायद आपको अच्छा नहीं लग रहा है, मगर नाराज मत होइए। मैं तो भगवान से एक ही बात माँगता हूँ, मरने तक सबके साथ अमन और चैन से जीऊँ। सच कह रहा हूँ न!”

“माफ़ कीजिए, इवान इवानिच, मैं अपने पाँव कुर्सी पर रखना चाहता हूँ”, मैंने बहुत ज़्यादा थकान महसूस करते हुए कहा। मैं सोफ़े में थोड़ा और धँस गया और अपने पैर कुर्सी पर रख लिये। बर्फ़ और तेज़ चुभती हवा में बाहर रहने के बाद मेरा चेहरा तमतमा रहा था और लग रहा था मेरा शरीर सारी गर्मी को अपने अन्दर जज़्ब कर रहा है और इस वजह से थकान बढ़ गयी है, “आपके यहाँ सभी कुछ बहुत अच्छा है”, मैंने कहा, “नर्म-नर्म और आरामदेह है.. और इस पर बतखों के पर,” मैंने मेज़ पर रखी रेत घड़ी को देखते हुए कहा, “क्या? हाँ-हाँ...यह मेज़ और छोटा कपबर्ड मेरे लिए रोज़वुड से किले के जनरल के बढ़ई ग्लेब बुतीगा ने

बनाया था। हाँ, वह अपने आप में बहुत अच्छा कारीगर है।''

वह मुझे बड़े ही तटस्थ और बेरुखे अन्दाज़ में बढ़ई बुतीगा के बारे में बताने लगा मैं सुनता रहा, फिर इवान इवानिच मुझे रोज़वुड का कमोड दिखाने के लिए साथ वाले कमरे में ले गया। उसने कमोड को उँगली से ठकठकाया, फिर टाइलों से बनी और तस्वीर पेंट किया हुआ, जो आज कहीं नहीं बनता, आतिशदान दिखा। आतिशदान को भी वैसे ही उँगली से ठकठकाया। कमोड, टाइल से बना आतिशदान, कुर्सियाँ, गर्म कपड़े और सिल्क के बदसूरत फ्रेमों में जड़ी पेंटिंग, सभी में खुशी और सम्पन्नता दिखाई पड़ रही थी। जब मैं याद करता हूँ कि बचपन में माँ के साथ यहाँ आया करता था, तब ये सब चीज़ें इन्हीं जगहों में ऐसे ही रखी रहती थीं, तो यकीन नहीं होता कि आज तक ये वैसा ही हैं।

मैं सोच रहा था, मेरे और बुतीगो में कितना ज़्यादा फ़र्क़ है। बुतीगो ने जो बनाया, वह बहुत ही मज़बूत और मौलिक बनाया और इस तरह उसने मानवता को बड़ी उम्र तक रहने का अहसास दिलाया। उसने मौत के बारे में कभी नहीं सोचा और शायद वह मौत के होने में विश्वास ही नहीं करता था। उसके लिए सब कुछ चिर और शाश्वत था। मैं जब हज़ार साल तक टिकने वाले लोहे और पत्थर के पुल बना रहा था, तो इस ख़्याल ने मेरा साथ नहीं छोड़ा, ''यह कोई शाश्वत नहीं है. ..और फिर किसलिए।'' अगर कभी कोई कला-इतिहासज्ञ बुतीगो का बनाया कपबोर्ड और मेरा बनाया पुल देखेगा, तो वह कहेगा, यह दोनों इन्सान अपने-अपने में बहुत ही अच्छे थे। बुतीगो इन्सानों से प्यार करता था और यह कभी नहीं मानता था कि व मर सकते हैं, नष्ट हो सकते हैं और इसलिए फर्नीचर बनाते हुए वह सिर्फ़ अमर इन्सान को ही अपने मद्‌देनज़र रखता था। दूसरी तरफ़ इंजीनियर असोरिन न तो इन्सानों और न ही ज़िन्दगी से मोहब्बत करता था। यहाँ तक कि अपनी रचना के खुशगवार पलों में भी मौत और अन्त के ख़्याल उसका साथ नहीं छोड़ते थे और इसीलिए उसकी ज़िन्दगी में डर, बेरुखी और अन्त का अहसास हमेशा महफूज़ था...।

''मैं इन्हीं कमरों को गर्म करता हूँ'', इवान इवानिच अपने कमरे मुझे दिखाते हुए बुदबुदाया,'' जब से पत्नी का देहान्त हुआ है और बेटे को लड़ाई में मार दिया गया, तब से मैंने अच्छे कमरे बन्द कर दिये हैं। हाँ...ऐसा ही है...।''

उसने एक कमरा खोला। मैंने वह बड़ा कमरा देखा, उसमें चार खम्भे थे, पुराना पिआनो रखा था और फ़र्श पर मूँगफली का ढेर पड़ा था। कमरा ठंडा और नम था, ''दूसरे कमरे में गार्डन-चेयर्स रखी हैं...'', इवान इवानिच बुदबुदाया,'' माज़ुरका नाचने वाला कोई नहीं है...। ''और कमरा बन्द कर दिया।

तभी एक शोर सुनाई दिया। डॉ. सोबल आ गये थे। जब तक उसने अपने ठंडे हाथ एक-दूसरे में मल कर गर्म किये और अपनी गीली दाढ़ी को सुखाया, तब तक मैं समझ चुका था कि वह एक बोर ज़िन्दगी जी रहा था और इसलिए मुझसे

और इवान इवानिच से मिलकर बहुत .खुश हुआ था। दूसरी बात जो मेरी समझ में आई वह यह थी कि वह एक सीधा-सादा और सरल इन्सान था। वह मुझसे ऐसे मिला मानो मैं उससे मिलकर बहुत ख़ुश था और उसमें मेरी दिलचस्पी थी।

"दो रातों से नहीं सोया हूँ।" उसने मेरी तरफ़ बड़ी ही सरलता से देखते हुए और बालों में कंघी करते हुए कहा, "एक रात तो बच्चा पैदा करती जच्चा के साथ बीती और दूसरी रात खटमलों और मच्छरों ने नहीं सोने दिया। एक किसान के यहाँ रात गुज़ारनी पड़ी थी। भूत की तरह सोना चाहता हूँ।"

इस अन्दाज़ में वह मुझे हाथ पकड़कर डाइनिंग रूम में ले गया, मानो मुझसे मिलकर वह बहुत खुश था। उसकी सीधी-सादी आँखें, उसकी ढीली बास्कट, सस्ती टाई और आयोडिन की महक ने मुझ पर गन्दा प्रभाव डाला। मुझे लगा, मैं बेवकूफ़ों की सोहबत में हूँ। जब हम मेज़ पर बैठ गये, उसने मेरे लिए वोदका डाली और मैंने बड़े ही सरल तरीक़े से मुस्कराते हुए वह पैग पी लिया, फिर सूअर के मांस का एक टुकड़ा मेरी प्लेट में रखा और मैंने बड़े शौक से उसे खा लिया, "दोहराना ज्ञान बढ़ाता है", सोबल ने जल्दी-जल्दी दूसरा पैग पीते हुए कहा, "आप यकीन करेंगे, मैं अच्छे इन्सानों से मिलकर .खुश होता हूँ। ऐसा लगता है, सपना था। मैं एक किसान हूँ। गमबूट नहीं पहनता, बहुत ही रूखा बोलता हूँ, पर फिर भी महोदय, मैं एक समझदार आदमी हूँ और आपको एक सच बताता हूँ, समाज के बिना जीना नामुमकिन है।"

फिर मूली और मक्खन के साथ ठंडा सूअर का मांस दिया, उसके बाद चर्बी से भरे सूअर के साथ पत्ता गोभी का गर्म सूप और दलिया, जिसमें से अभी तक भाप उठ रही थी। डॉक्टर बोले जा रहा था। जल्दी ही मैं समझ गया कि वह एक कमज़ोर, सुस्त और दुखी इन्सान है। तीन पैग में ही वह नशे में आ गया। असाधारण तौर पर जीवन्त हो उठा। बहुत खा रहा था बीच-बीच में होठों को चूसते हुए और जबान से चटखारे लेते हुए मुझे इटेलियन में मेरे हुज़ूर कहे रहा था। वह मुझे ऐसे देख रहा था, मानो मैं उससे मिलकर बहुत .खुश था। उसकी बातें गौर से सुन रहा था। उसने मुझे बताया कि काफी अरसा हुआ उसने अपनी पत्नी से तलाक़ ले लिया है और उसे अपनी तनख़्वाह का तीन चौथाई हिस्सा देता है। उसने बताया कि वह उसके बच्चों के साथ, एक बेटा और एक बेटी, शहर में रहती है और वह ख़ुद एक समझदार विधवा ज़मींदारनी से प्यार करता है, पर उससे कभी-कभी ही मिल पाता है, क्योंकि वह सुबह से शाम तक अपने काम में व्यस्त रहता है और खाली वक़्त तो उसके पास होता ही नहीं है।

'सारा दिन या तो हस्पताल में या सफ़र में' वह बिता रहा था, और सच कहूँ, मेरे हुज़ूर, अपनी प्रेमिका से मिलने जाना तक तो दूर, अपनी किताब तक पढ़ने का वक़्त नहीं है मेरे पास। दस साल हो गये हैं कुछ पढ़े हुए। दस साल, मेरे हुज़ूर,

रही बात मेरी माली हालत की, तो इवान इवानिच से पूछ सकते हैं, कभी-कभी तो सिगरेट ख़रीदने तक के पैसे नहीं होते।"

"फिर भी आप नैतिक स्तर पर तो सन्तुष्ट हैं", मैंने कहा।

"क्या कहा?" उसने पूछा और एक आँख मारी, "नहीं, चलिए वोदका पियें।"

मैं डॉक्टर की बातें सुन रहा था और अपनी हमेशा की आदत के मुताबिक उस पर अपने मापदंड लागू कर रहा था, मैटिरिअलिस्ट आदर्शवादी, रूबल, एनीमल इंस्टिकिन्ट आदि-आदि, पर एक भी मापदंड दूर-दूर तक उस पर लागू नहीं हो रहा था। अजीब बात थी कि जब तक मैं उसकी बात सुनता रहा, उसे देखता रहा, तो बतौर इन्सान मैं उसे पूरी तरह समझ गया था, पर जैसे ही मैंने उस पर अपने मापदंड लगाने शुरू किये, तो अपनी ईमानदारी और सरलता के बावजूद वह असामान्य तौर पर जटिल, कन्फ्यूज्ड और समझ से परे वाली प्रकृति का इन्सान निकला। मैंने अपने आपसे पूछा कि क्या यह इन्सान दूसरों के पैसे कभी खर्च कर सकता है, क्या विश्वासघात कर सकता है और क्या ये दान में इकट्ठा किया गया गेहूँ खुद हड़प सकता है? और आज इस वक़्त ये सवाल, जो कभी मुझे काफ़ी ज़रूरी, संजीदा और अहम लगता था, बड़ा ही ग़ैरज़रूरी, अदना और बेवकूफ़ाना लगने लगा।

केक दे दिया गया, फिर मुझे याद है, बड़े अन्तरालों के बाद, जिनमें हम नालिवका (एक किस्म की वाइन) पीते रहे, कबूतर का मांस चटनी के साथ दिया गया और बाद में भुना हुआ मुर्ग़ा, बतख, बटेर, पत्ता गोभी, जैम, दूध के साथ पेस्ट्री, किसेल (मीठी जैली) और आख़ीर में जैम के साथ पैन केक दिये गये। शुरू-शुरू में मैंने दलिये के साथ पत्ता गोभी का सूप बड़े ही चाव से पिया, पर बाद में बड़े ही यन्त्रवत मैंने सब चबाया और निगला। बिना बात के मुस्कराता रहा और खाना बेमजा खाता रहा। गर्म सूप और कमरे की गर्मी की वजह से मेरा चेहरा तमतमा गया। इवान इवानिच और सोबल के चेहरे भी सुर्ख हो गये थे।

"आपकी पत्नी की सेहत के लिए", सोबल ने कहा, "उसे मैं अच्छा लगता हूँ। कहिए कि एक अदना डॉक्टर ने उसे सलाम भेजा है।"

"बहुत खुशकिस्मत है वह, भगवान कसम!" इवान इवानिच ने एक लम्बी साँस ली, "कोई मेहनत नहीं की, कोई परेशानी नहीं उठायी, कोई भाग-दौड़ नहीं की और संयोग की बात है कि आज वह सारे इलाके की सरपंच है, पहली नागरिक है। सारे काम या तो उसके हाथ में हैं या उसके इर्द-गिर्द घूमते हैं, चाहे डॉक्टर हों, या इलाके के प्रशासनिक अफसर या बैरन। ईमानदार इन्सानों के साथ सब कुछ अपने आप ठीक हो जाता है। जानते हैं...सेब का पेड़ यह सोचकर परेशान नहीं होता कि उस पर सेब आयेंगे, वो तो खुद-ब-खुद आ जाते हैं।"

"बेरुखे और उदासीन इन्सान कभी बेचैन नहीं होते।" मैंने कहा।

"क्या? ठीक कहते हैं...", इवान इवानिच बिना सुने बुदबुदाया, "यह सच

है...हमें बेरुखा और उदासीन होना चाहिए। ऐसे ही...ऐसे ही...। बिलकुल...ईश्वर और इन्सानों से ईमानदार होना चाहिए, बस, फिर चाहे एक पत्ता सम्मान से पूर्ण न उगे।"

"मेरे हुज़ूर", सोबल ने आवाज़ में कहा, "ज़रा अपने आसपास की प्रकृति को देखिए नाक या कान पर से कोट का कॉलर हटाकर देखिए, बर्फ़ काट लेगी। एक घंटा बाहर खेत में खड़े हो जाइए बर्फ़ से ढक जायेंगे। गाँव आज भी वैसा ही है, जैसा रयूरिक के ज़माने में था। बिलकुल नहीं बदला, वैसी ही छतें और वैसे ही फ़र्श हैं। इतना जानते हैं कि हम वैसे ही भूखे मर रहे हैं और प्रकृति से वैसे ही हर बात के लिए लड़ रहे हैं।...और क्या कहूँ? सच है।....और अगर इस सबको ग़ौर से सोचा और समझा जाये, तो इसे ज़िन्दगी नहीं कहा जा सकता, यह तो जैसे एक थियेटर में आग में फँसा-सा है। इसमें जो भी फँस जाये या डर के मारे चिल्लाने लगे और आग से लड़ने लगे, तो वह सिस्टम का पहला दुश्मन माना जाता है। सीधे खड़े रहना चाहिए और दोनों को सहना चाहिए, कोई हुज्जत नहीं करनी चाहिए। कुछ बिसरना नहीं चाहिए और छोटी-छोटी बातों पर ध्यान नहीं देना चाहिए। अगर भावनाओं से सरोकार हो, तो भावनाओं में ही जवाब देना चाहिए, पत्थर की तरह पक्का और अटल होना चाहिए। क्यों दादाजी मैं ठीक कह रहा हूँ न ? "वह इवान इवानिच की तरफ़ मुड़ा और हँसने लगा, "मैं खुद एक औरत हूँ। बहुत ही नीरस इन्सान हूँ, इसलिए नीरसता बर्दाश्त नहीं कर सकता। हीन भावनाएँ मुझे अच्छी नहीं लगतीं। एक उदास रहता है, दूसरा कायर है और तीसरा अभी आयेगा और कहेगा, उफ, तुम भी कैसे हो, दस तरह का खाना खा गये और भूखों की बातें करते रहे। बहुत ही अदना और अहमकाना है। चौथा मेरे हुज़ूर, आपको कोसेगा और कहेगा आप अमीर हैं। माफ़ कीजिए, मेरे हुज़ूर अपना हाथ सीने पर रखे वह ज़ोर-ज़ोर से कहे जा रहा था, पर आपने जो हमारे इंस्पेक्टर को काम दिया है, वह रात-दिन आपके चोरों को ढूँढ़ रहा है, माफ़ कीजिए, यह भी बहुत छोटापन है। मैं नशे में हूँ इसलिए यह सब इस वक़्त कह रहा हूँ। आप जानते हैं, यह आपका छोटापन है।"

"समझ में नहीं आ रहा है, किसने कहा है इसे परेशान होने के लिए?" मैंने उठते हुए कहा। अचानक मुझे बड़ी शरम महसूस हुई और मैं मेज़ के पास गया, "किसने कहा है इसे परेशान होने के लिए? मैंने तो नहीं कहा है...।"

"तीन को गिरफ्तार किया और छोड़ दिया। पता लगा, वे चोर नहीं थे। अब नये सिरे से ढूँढ़ रहा है", सोबल हँसने लगा, "यह पाप है।"

"मैंने तो इसे परेशान होने के लिए नहीं कहा।" मैंने कहा, मानो गुस्से में रोना आ जायेगा। यह सब क्यों और किसलिए है? ठीक है, मान लिया, मैं ग़लत, मैंने ग़लती की, पर क्यों? यह बता रहे हैं कि मैंने ग़लती की है?

"जाने दो, छोड़ो भी, भूल जाओ।" सोबल ने मुझे तसल्ली देते हुए कहा,"

ओफ़, मैं नशे में हूँ, इसलिए यह सब कहा गया। मेरी जबान ही मेरी दुश्मन है। यह भी क्या है," उसने लम्बी साँस लेते हुए कहा, "खा लिया, पी लिया और अब लड़ने लगे।"

वह मेज़ पर से उठ गया। इवान इवानिच का माथा चूमा और भरपेट खाने के बाद डाइनिंग हॉल से बाहर चला गया। मैं और इवान इवानिच खामोशी से सिगरेट पीते रहे।

"दोस्त, मैं लंच के बाद नहीं सोता हूँ", इवान इवानिच ने कहा, "आप चाहें तो पलंग पर थोड़ा आराम कर लें।"

मैं मान गया। अँधेरे और गर्म कमरे में, जिसे ड्राइंगरूम कहते थे दीवारों के साथ मजबूत, भारी और चौड़े पलंग रखे थे, बढ़ई बूतीगो की रचनाएँ। उन पर भारी और नर्म गद्दे पड़े थे और गड्ढों पर सफ़ेद चादरें बिछी थीं, जो शायद उस चश्मे वाली बुढ़िया ने बिछाई थीं। एक पलंग पर बास्कट और जूते उतारे करवट से सोबल सो रहा था। दूसरा पलंग मेरा इन्तज़ार कर रहा था। मैंने अपनी बास्कट उतारी, फिर जूते उतारे और थका होने की वजह से मैं बढ़ई बूतीगो के बनाये पलंग पर सोबल के खर्राटों के बीच आराम से सो गया।

तभी मुझे मेरी पत्नी, उसका कमरा, नफरतभरे चेहरे वाला स्टेशन मास्टर, बर्फ़ के टुकड़े, थियेटर में आग यही सभी अपने में आने लगे...। सपने में आये वे किसान, जिन्होंने मेरे गोदाम से बीस बोरे जई के चुराये थे...।

"ठीक ही हुआ कि इंस्पेक्टर ने उन्हें छोड़ दिया।" मैं कह रहा था।

मैं अपनी ही आवाज़ से जाग गया। एक मिनट मैं हैरानी से सोबल की चौड़ी कमर, उसकी पीली बेल्ट, भारी एड़ियाँ देखता रहा, फिर दोबारा लेट गया और सो गया।

दूसरी बार जब मैं उठा, तो अँधेरा हो गया था। सोबल सो रहा था। मेरा मन शान्त हो गया था और घर जाने को कर रहा था। मैंने कपड़े पहने और ड्राइंगरूम से बाहर आ गया। इवान इवानिच बिना हिले-डुले अपने कमरे में आरामकुर्सी में बैठा था और एकटक एक बिन्दु को देखे जा रहा था। साफ़ दिख रहा था कि जब तक मैं सोता रहा था, वह वैसे ही अकड़े हुए बिना हिले-डुले बैठा रहा था।

"बहुत अच्छा रहा।" मैंने उबासी लेते हुए कहा, "ऐसा लगता है, मानो ईस्टर की दावत के बाद जागा हूँ। अब मैं अकसर आपके यहाँ आया करूँगा। एक बात बताइए, कभी मेरी पत्नी ने आपके यहाँ लंच किया है?"

"कभी-कभी आ जाती है", इवान इवानिच हिलने की कोशिश करते हुए बुदबुदाया, "पिछले शनिवार को लंच किया था। हाँ, मैं उसे अच्छा लगता हूँ।"

थोड़ी देर ख़ामोश रहने के बाद मैंने कहा, "याद है इवान इवानिच, आपने कहा था, मैं एक ओछा आदमी हूँ और मेरे साथ रहना मुश्किल है? मुझे क्या करना

चाहिए अपना स्वभाव बदलने के लिए? क्या करना चाहिए?"

"नहीं जानता, दोस्त...। मैं एक अनपढ़, मोटा और बूढ़ा आदमी हूँ। कोई सलाह नहीं दे सकता...हाँ...मैंने आपको तब कहा था, क्योंकि मैं आपसे प्यार करता हूँ, आपकी पत्नी से प्यार करता हूँ, आपके पिता को प्यार करता था...हाँ, मैं तो मरने वाला हूँ, क्यों मैं आपसे कुछ छिपाऊँ या झूठ बोलूँ? आज फिर कहता हूँ मैं आपसे प्यार करता हूँ, पर आपकी इज़्ज़त नहीं करता। हाँ, आपकी इज़्ज़त नहीं करता।"

वह मेरी तरफ़ मुड़ा और लम्बी साँस लेते हुए आहिस्ता से कहने लगा, "दोस्त, आपको इज़्ज़त नहीं दे सकता। दिखने में तो आप असली इन्सान दिखते हैं। आपका चेहरा और आपके हाव-भाव तो फ्रेंच राष्ट्रपति कारनो जैसे हैं, मैंने अभी 'इलस्ट्रेशन' में देखा था।...आप बातें भी बड़ी-बड़ी करते हैं, आप समझदार हैं, अफ़सर हैं, कोई आपको छू नहीं सकता, पर दोस्त, आपका मन काला है...आपकी आत्मा कमज़ोर और कायर है...हाँ।"

"सीथियन एक शब्द में", मैं हँसने लगा, "और पत्नी के बारे में? मेरी पत्नी के बारे में भी कुछ कहिए। आप उसे मुझसे ज़्यादा जानते हैं।"

मैं अपनी पत्नी के बारे में कुछ कहना चाहता था, पर तभी सोबल आ गया।

"खूब सोया, हाथ-मुँह भी धो लिया," उसने बड़े ही सीधे-सादे ढंग से मुझे देखते हुए कहा," थोड़ी रम के साथ चाय पिऊँगा और फिर घर चला जाऊँगा।"

शाम के आठ बजे थे। इवान इवानिच के अलावा चश्मा पहने बुढ़िया, लड़कियाँ और सभी नौकर मुझे घर के बाहर छोड़ने साथ आये। बाहर घोड़ों के पास अँधेरे में लालटेन लिये कुछ लोग खड़े थे और कुछ घूम रहे थे। हमारे कोचवानों को समझा रहे थे, इस वक़्त कैसे और किस रास्ते से जाना ठीक होगा। उन सबने हमें शुभयात्रा भी कही।

"इतने सारे लोग कहाँ से आ गये?" मैंने पूछा, जब मेरा और डॉक्टर का त्रोइका से घर चल पड़े।

"ये सब उसकी प्रजा हैं", सोबल ने कहा, "उस तक अभी भी सुधार नहीं पहुँचे हैं। कई हैं, जो अभी तक गुलामी में अपनी उम्र गुज़ार रहे हैं, कई अनाथ हैं, जिन्हें रहने की कोई ठौर नहीं है, कुछ जबर्दस्ती रह रहे हैं, उनको निकालना नामुमकिन है। अजीब बूढ़ा है।"

त्रोइका फिर तेज़ भागने लगा, फिर से नशे में धुत्त निकानोर की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। वही तेज़ हवा और आँखों में पड़ती हुई और फरकोट को ढकती हुई वही जिद्दी बर्फ़।

"तेज़ी से ले जा रहा है।" मैं सोच रहा था। पायदान पर खड़े घंटियाँ बजाने वाले मेरे दरबान डॉक्टर के दरबानों के साथ हँसी-मज़ाक कर रहे थे। हवा साँय-साँय कर रही थी, कोचवान हुँकारा दे रहे थे और इस पागल कर देने वाले शोर के बीच

मैं अपने आज के अजीब और पागल बना देने वाले दिन के विस्तार याद कर रहा था। मुझे लगा कि मैं सच में पागल हो गया हूँ या फिर एक दूसरा ही इन्सान हो गया हूँ। ऐसा लगा, जो मैं आज तक था, अब वह नहीं हूँ। कल का मैं ख़ुद से अजनबी बन गया हूँ।

डॉक्टर पीछे-पीछे आ रहा था और अपने कोचवान से ज़ोर-ज़ोर से बातें कर रहा था। मुझसे आगे वह एक-दो बार निकला होगा और जब भी उसका त्रोइका मेरे त्रोइका के साथ होता, तो उसी सरलता और सादगी से, जो मुझे अच्छी लगती थी, सिगरेट पेश करता और माचिस माँगता। एक बार तो जब उसका त्रोइका मेरे त्रोइका के साथ चल रहा था, तो वह अचानक अपनी स्लेज पर खड़ा हो गया और अपने हाथों से दुगुने लम्बे फरकोट को झाड़ा और ज़ोर से चिल्लाया, "दबाओ, वास्का! इनसे आगे भगाओ! ज़ोर से दबाओ!"

इस तरह डॉक्टर की स्लेज उसकी और वास्था की ज़ोर की हँसी के बीच मेरी स्लेज से आगे निकल गयी। मेरे निकानोर को गुस्सा आ गया और उसने अपनी त्रोइका रोक दी और जब डॉक्टर की आवाज़ें आनी बन्द हो गयीं, तो उसने लगाम उठायी, हुँकारा दिया और मेरा त्रोइका उसके पीछे भागने लगा। हम किसी गाँव में पहुँच गये थे। लालटेनें हिल रही थीं, उनकी रोशनी में झोंपड़ियों के साये हिल रहे थे और तभी कोई चिल्लाया, "अरे देख के चलो!" हम शायद दो किलोमीटर आ गये थे, पर सड़क का अन्त नज़र नहीं आ रहा था। जब मेरी स्लेज डॉक्टर की स्लेज के साथ-साथ आ गयी, तब उसने फिर माचिस माँगी और कहा, "इस गली को खिला सकेंगे।...और इस तरह की पाँच गलियाँ हैं, मेरे हुज़ूर, रुकिए-रुकिए। "वह चिल्लाया," सराय की तरफ़ मोड़ो। थोड़ा गर्मा लेना चाहिए और घोड़ों को भी आराम देना चाहिए।"

हम सराय के पास रुक गये। "मेरे इलाके में एक भी ऐसा गाँव नहीं है," भारी और चर्राते दरवाज़े को खोलते हुए और मुझे पहले अन्दर जाने के लिए रास्ता देते हुए डॉक्टर ने कहा, "दिन की रोशनी में अगर कभी ऐसी गली को देखोगे, तो अन्त नहीं दिखाई देगा, यहाँ मोड़ और नुक्कड़ भी हैं। गर्दन दुख जायेगी। कुछ भी कर सकना मुश्किल है।"

हम एक साफ-सुथरे कमरे में गए जिसमें से टेबल क्लॉथ की बू आ रही थी। हमारे घुसते ही एक सोया नौकर बेंच पर से उठा। उसने बास्कट पहनी हुई थी और उसकी क़मीज़ बाहर निकली हुई थी। सोबल ने बीयर माँगी और मैंने चाय।

"कुछ भी कर पाना मुश्किल है", सोबल कह रहा था, "आपकी पत्नी को विश्वास है। मैं उनकी बहुत इज़्ज़त करता हूँ, पर मैं विश्वास नहीं कर पाता कि हम कुछ कर पायेंगे। जब तक ग़रीबों के प्रति हम लोगों का नज़रिया ख़ैराती रहेगा, जैसा कि अनाथ और अपंग आश्रमों के प्रति होता है, तब तक हम बड़ी-बड़ी बातें

करते रहेंगे, चतुराई दिखाते रहेंगे और अपने आपको धोखा देते रहेंगे। इसके आगे कुछ नहीं। हमारा नज़रिया बहुत ही क्रियात्मक और व्यावहारिक होना चाहिए, जो न्याय, ज्ञान और आँकड़ों की बुनियाद पर हो। मेरा वास्का ज़िन्दगी-भर से मेरे यहाँ काम कर रहा है, उसके यहाँ भी कुछ पैदा नहीं हुआ, वह भूखा और बीमार है। अगर आज मैं उसे पन्द्रह कोपेक रोज़ देता हूँ, तो मैं उसको उसी पुराने सेवक की जगह काम करते रहने देना चाहता हूँ। मतलब सबसे पहले मैं अपने हितों की रक्षा कर रहा हूँ और हाँ, मैं इन पन्द्रह कोपेक को मदद क्यों, एक जरिया और नेक काम कहता हूँ। चलिए ऐसे देखते हैं, बहुत ही आम हिसाब के मुताबिक़ अगर हम हर एक इन्सान पर सात कोपेक रखें और एक परिवार में पाँच सदस्य मान लें, तो 1000 परिवारों को खाना खिलाने के लिए हर रोज़ तीन सौ पचास रूबल चाहिए। यह हिसाब इन परिवारों के प्रति नज़रिया तय करता है।...और ऊपर से तुर्रा यह कि हम तीन सौ पचास रूबल दिन के नहीं देते हैं, देते हैं सिर्फ़ दस और इसे हम मदद और नेक काम कहते हैं और इसके लिए आपकी पत्नी और हम सब विशेष और सम्पन्न लोग इन्सानियत का ढोल पीटते हैं। ऐसी है मेरी समझ। उफ़, अगर सिर्फ़ हम इन्सानियत का ढोल कम पीटते और अपनी ज़िम्मेदारियों को इन्सानी नज़रिए से देखते, तो कहीं ज़्यादा अच्छा होता। हमारे बीच कितने ऐसे हैं, जो इन्सानी नज़रिये और भावना से इसको देखते हैं और ईमानदारी से चन्दा इकट्ठा करने के लिए घर-घर भागते हैं, पर अपने बावर्चियों और कोचवानों को पगार नहीं देते। तर्क हमारे जीवन में कोई जगह नहीं रखता, सच तो यह है। तर्क है ही नहीं हमारे जीवन में।"

हम ख़ामोश हो गये। मैंने मन ही-मन हिसाब लगाया और कहा, "मैं एक हज़ार परिवारों को दो सौ दिन खाना खिलाऊँगा। आप कल आइए बात करेंगे।"

मैं इतमीनान से था कि मैंने यह सब सहज ही कह दिया और खुश था कि सोबल ने जवाब भी सहज तरीके से दिया और कहा, "ठीक है।"

हमने अपना बिल दिया और सराय से बाहर आ गये।

"मुझे ऐसी कम्पनी अच्छी लगती है," सोबल ने अपनी स्लेज में बैठते हुए कहा, "मेरे हुज़ूर, ज़रा अपनी माचिस दीजिए। अपनी मैं सराय में भूल आया हूँ।"

पन्द्रह मिनट में ही उसकी स्लेज पीछे रह गयी और तूफ़ान के शोर में उसकी स्लेज की घंटियां भी सुनाई पड़ना बन्द हो गयीं। घर पहुँचकर अपनी स्थिति को समझने की कोशिश करते हुए मैं अपने कमरे में गया। मेरे पास अपनी पत्नी को कहने के लिए कुछ भी प्रयोजित और तैयार नहीं था, एक शब्द भी नहीं। दिमाग़ काम ही नहीं कर रहा था।

बिना कुछ सोचे और प्रयोजित किये मैं पत्नी से मिलने नीचे गया। वह अपने कमरे में उसी गुलाबी हाउसकोट और उसी पोज़ में मानो काग़ज़ों को मुझसे छिपा रही हो, अपने कमरे में खड़ी थी। उसके चेहरे पर अविश्वास और असमंजस साफ़

नज़र आ रहे थे। साफ़ दिखाई पड़ रहा था कि मेरे वापस आने की खबर जानकर कल की तरह वह न तो रोने, न विनती करने और न ही अपना बचाव करने को तैयार थी, बल्कि मेरा मज़ाक़ उड़ाने, अपनी नफ़रत दिखाने और अपना फैसला सुनाने को तैयार थी। उसका चेहरा कह रहा था, अगर ऐसा है, तो अलविदा!

"नतालिया, मैं नहीं गया", मैंने कहा, "पर यह धोखा नहीं है। मैं पागल हो गया हूँ, बूढ़ा हो गया हूँ, बीमार हूँ और अब बदल गया हूँ। दूसरा आदमी हो गया हूँ। जैसा चाहें समझिए...मैं अपने अतीत से अब दूर हो गया हूँ, उससे डरता हूँ, नफ़रत करता हूँ और शर्मिन्दा हूँ और जो बदलाव कल मुझ में आया है, वह मुझे यहाँ से जाने नहीं दे रहा है। मुझे मत निकालिए, नतालिया।"

उसने एकटक मुझे देखा, मेरा विश्वास कर लिया और उसकी आँखों में मेरे लिए बेचैनी दिखाई पड़ने लगी। उसकी उपस्थिति से गद्गद, उसके कमरे की गर्मी से गर्म अपने हाथ उसकी तरफ़ फैलाते हुए मैं बुदबुदाया, "मैं सच कहता हूँ, आपसे ज़्यादा अज़ीज़ और प्यारा मुझे कोई नहीं है। मैंने हर पल आपको चाहा है, आपका अभाव महसूस किया है, पर मेरा जिद्दी घमंड मुझे यह सब क़ुबूल करने से रोकता रहा। वह अतीत, जिसमें हम पति-पत्नी थे, वैसा ही वापस नहीं आ सकता और न ही उसकी ज़रूरत है, पर मुझे अपना नौकर बना लीजिए, मेरी सारी जायदाद ले लीजिए और जिनमें चाहे बाँट दीजिए। नतालिया, मैं अब शान्त हूँ, मैं सन्तुष्ट हूँ... ।"

पत्नी ने एकटक मुझे देखा और हैरानी से मेरा चेहरा देखते हुए अचानक वह चिल्लायी, रो पड़ी और साथ वाले कमरे में भाग गयी। मैं ऊपर अपने कमरे में चला गया।

एक घंटे बाद मैं अपनी मेज़ पर बैठा 'रेलगाड़ी का इतिहास' लिख रहा था और भूखे मेरे इस लेखन में कोई बाधा नहीं डाल रहे थे। अब मैं परेशान नहीं था, चिन्तित नहीं था। मेरी पत्नी के साथ वे सब झगड़े, वे पेस्तरोव की झोंपड़ियों के बारे में सोबल के साथ बहसें, वे बुरी अफवाहें, मित्रजनों की ग़लतियाँ और मेरा क़रीब आता बुढ़ापा, कुछ भी अब मुझे परेशान नहीं कर रहा है। जैसे उड़ते हुए बमों के गोले और गोलियाँ जवानों को अपने रोज़मर्रा के काम करने, खाना खाने और अपने जूतों की मरम्मत करने में कोई बाधा नहीं डालते, उसी तरह अब भूखे और ग़रीब मेरे सोने और अपने सब व्यक्तिगत काम करने में कोई बाधा नहीं डालते। मेरे घर में, आँगन में और दूर कहीं कुछ काम चल रहा है जिसे डॉक्टर सोबल एक मदद का नाटक कहता है। मेरी पत्नी मेरे कमरे में आती है, बड़े आराम से मेरे कमरों की चीज़ों पर नज़र डालती है, मानो ढूँढ़ रही हो भूखों को और क्या दिया जा सकता है, जिससे कि वे अपने जीवन की सार्थकता पा सकें। मैं देख रहा हूँ कि उसकी उदारता की वजह से जल्दी ही हमारी जायदाद और ज़मींदारी में कुछ भी बचा नहीं रहेगा और हम ग़रीब हो जायेंगे, पर यह अहसास मुझे अब परेशान नहीं करता और मैं खुशी से उस पर मुस्कराता हूँ। कल क्या होगा, नहीं जानता।

वालोदया

गर्मियों का एक इतवार। शाम के पाँच बजे सत्रह वर्षीय जवान, बदसूरत, कमज़ोर और शर्मीला वालोदया शूमीखीनों के समर हाउस में बैठा था और बोर हो रहा था। उसके उदास ख़्यालों की शृंखला तीन दिशाओं में बह रही थी। पहली थी, कल सोमवार को उसको गणित की परीक्षा देनी थी। वह जानता था कि अगर उसने यह गणित की लिखित परीक्षा पास नहीं की, तो उसको निकाल दिया जायेगा, क्योंकि वह पहले ही दो साल से छठी क्लास में बैठा है और अलजबरा की वार्षिक परीक्षा में उसके पौने तीन नम्बर हैं। दूसरी, उसका शूमीखीनों के यहाँ आना, जो रईस थे और ऐसा दिखाते थे, मानो वह एरिस्टोक्रेट हों, उसके आत्मसम्मान को हमेशा ठेस पहुँचाने और दुख का कारण था। उसे लगता कि मैडम शूमीखीना और उनकी कज़िन्स उसे और उसकी माँ को ग़रीब रिश्तेदारों, पिछलग्गू और उपजीवी की तरह से देखती थीं। वह माँ की इज़्ज़त नहीं करती थीं और उनका मज़ाक़ उड़ाया करती थीं। एक बार उसने इत्तफाक़ से मैडम शूमीखीना को टेरिस पर अपनी कज़िन अन्ना फोदोरोवना से कहते सुन लिया था कि उसकी माँ दिन पर-दिन जवान होती जा रही है, काफ़ी मेकअप़ करती है, हारे हुए पैसे कभी नहीं देती और यह भी कि दूसरों के जूतों और सिगरेटों को बहुत पसन्द करती है। हर रोज़ वालोदया माँ से शूमीखीनों के यहाँ न जाने की विनती करता, उसे बताता कि उसकी जगह वहाँ कितनी हिकारत भरी है, बहुत समझाता फिर डाँटता, पर वह मनचली, बिगड़ैल जिसने अपने ज़माने में दो-दो जायदादों, अपनी और शौहर की, को जिया था, हमेशा हाई सोसायटी की तरफ़ आकर्षित रहती थी। वह वालोदया को समझ नहीं पायी...वालोदया को हफ्ते में दो बार माँ को उस दाचे ले जाना पड़ता था, जिससे वह नफरत करता था।

तीसरी, जवान वालोदया एक पल के लिए भी उस अजीब और दुखदायी अहसास से दूर न हो पाता था, जो उसके लिए बिलकुल नयी थी...। उसे लगता था कि वह शूमीखीन की कज़िन आन्ना फेदरोवना से प्यार करता था। वह एक ख़ुशमिज़ाज, मज़ाक़िया, जीवन्त और ज़ोर से बोलने वाली तीस साल की सेहतमन्द, गठीली, सुर्ख़, गोल कन्धे और गोल मोटी ठोढ़ी वाली बैरोनस थी। उसके बारीक होठों पर हमेशा

मुस्कान थिरकती रहती थी। वह न तो ख़ूबसूरत थी और न ही जवान, वालोदया यह अच्छी तरह जानता था, पर पता नहीं क्यों वह उसके बारे में सोचने से अपने आपको रोक नहीं पाता था और न ही देखने से रोक पाता था। जब वह क्राचेट खेलते हुए अपने गोल कन्धों को दबाया करती और अपनी चिकनी कमर को हिलाया करती या फिर देर तक हँसने और सीढ़ियों पर भागकर चढ़ने के बाद आरामकुर्सी में गिरा करती और अपनी आँखें ज़ोर से मींचकर ज़ोर से हाँफते हुए ऐसे दिखाया करती, मानो उसकी छातियाँ सिकुड़ गयी हों और उसका दम घुट रहा हो। वह शादी-शुदा थी। उसका शौहर एक प्रतिष्ठित आर्किटेक्ट था, हफ़्ते में एक बार दाचे आया करता था। कसकर सोया करता था और फिर शहर वापस चला जाया करता था। यह अजीब अहसास वालोदया को तब से शुरू हुआ, जबसे वह बिना किसी वजह से इस आर्किटेक्ट से नफ़रत करने लगा। हर बार वह खुश होता, जब उसका शौहर शहर जाता।

इस वक़्त समर हाउस में बैठे हुए कल की परीक्षा और माँ जिस पर सब हँसते थे, के बारे में सोचते हुए उसने अपने अन्दर न्यूतो (शूमीखीन उसे इसी नाम से पुकारते थे) को देखने, उसकी हँसी सुनने, उसके कपड़ों की सरसराहट सुनने की प्रबल इच्छा महसूस की...यह इच्छा उस पवित्र, प्रबल और काव्यात्मक प्रेम सी न थी, जिसे उसने अकसर प्यार के अफ़सानों में पढ़ा था और जिसके बारे में हर शाम सोते हुए सपने देखा करता था। यह बहुत ही अजीब, समझ के बाहर थी। उसे इस पर शरम आ रही थी और डर लग रहा था। वह कुछ इतनी अपवित्र और गन्दी थी, जिसे अपने मन में स्वीकार करना मुश्किल था।

"यह प्रेम नहीं है, उसने अपने आपसे कहा, तीस साल की और शादीशुदा औरतों से प्रेम नहीं किया जाता...यह सिर्फ़ एक मामूली सी आशनाई, गुप्त प्रेम सम्बन्ध और एक इन्फ़ेचुएशन है...सच, एक इन्फ़ेचुएशन...।

इस इन्फ़ेचुएशन के बारे में सोचते-सोचते उसे याद आये, उसका अजेय शर्मीलापन, उसकी मूँछों का अभी तक न फूटना, उसके मुँह के चकत्ते, छोटी तंग आँखें और तब उसने अपने ख़्यालों में अपने आपको न्यूतों के बराबर रखकर देखा, यह जोड़ा उसे नामुमकिन और एक-दूसरे के लिए नाक़ाबिल लगा। तभी उसने फौरन अपने आपको एक ख़ूबसूरत, साहसी, समझदार और लेटेस्ट फ़ैशन के कपड़े पहने हुए एक जवान के रूप में अन्दाज़ लगाया...।

जब वह आधा झुका हुआ और ज़मीन को देखता हुआ समर हाउस के अँधेरे कोने में बैठा अपने इस सपने के क्लाइमेक्स पर था, तभी कुछ आहिस्ता क़दमों की आवाज़ सुनाई दी। कोई तो बाहर पगडंडी पर चल रहा था। थोड़ी ही देर में क़दमों की आवाज़ बन्द हो गयी और दरवाज़े पर कुछ सफ़ेद सा चमका।

"कोई है क्या यहाँ?" एक ज़नानी आवाज़ ने पूछा।

वालोदया इस आवाज़ को पहचान गया और तभी डर में सिर उठाया, "कोन है वहाँ?" न्यूता ने समर हाउस के अन्दर आते हुए पूछा, "ओह! तो यह तुम हो, वालोदया? यहाँ क्या कर रहे हो? कुछ सोच रहे हो? हमेशा सोचते रहना, सोचते रहना और सोचते रहना कैसे मुमकिन है...ऐसे तो कोई भी पागल हो सकता है।"

वालोदया उठा और परेशानी से न्यूता को देखा। वह अभी-अभी नहाकर आ रही थी। उसके कन्धे पर एक टर्किश तौलिया लटका हुआ था, सफ़ेद सिलकन कपड़े से ढके हुए सिर में कुछ गीले बाल माथे से चिपके हुए नज़र आ रहे थे। उसमें से स्नानघर की ठंडी, नम और बादामी साबुन की महक आ रही थी। जल्दी-जल्दी चलने से वह हाँफ रही थी। उसके ब्लाउज़ का ऊपर का बटन खुला हुआ था, इसलिए जवान लड़के को उसकी गर्दन और छातियाँ साफ दिख रही थीं।

"तुम ख़ामोश क्यों हो?" न्यूता ने वालोदया की तरफ़ देखते हुए पूछा, जब कोई महिला तुमसे बात कर रही हो, तो ख़ामोश रहना बदतमीज़ी है। कैसे उजड्ड, गँवार हो तुम वालोदया, तुम हमेशा बैठे रहते हो, ख़ामोश रहते हो और एक फिलॉसफर की तरह कुछ सोचते रहते हो। तुम्हारे अन्दर किसी भी तरह की कोई चिन्गारी और ज़िन्दगी नहीं है। तुम बहुत नीरस और बेमज़ा हो, सच...। तुम्हारी उम्र में तो खुश रहना चाहिए, कूदना-फाँदना चाहिए, बहुत बातें करनी चाहिए, लड़कियों को रिझाना चाहिए, उन पर प्यार जताना चाहिए, इश्क फरमाना चाहिए।"

वालोदया ने उसके गोरे और गुदगुदे हाथ में लटकी हुई चादर को देखा और कुछ सोचा...।

"अभी खामोश है," न्यूता को बड़ा ताज्जुब हुआ "बड़ी अजीब बात है... सुनो, मर्द बनो! अरे भई, कम-से-कम और कुछ नहीं तो मुस्करा ही दो! उफ़, यह फिलॉसफर!" इतना कह वह हँस दी "जानते हो वालोदया तुम क्यों इतने उजड्ड, गँवार और बेजान हो? क्यों तुम लड़कियों को नहीं रिझाते? क्यों उन पर अपना प्यार नहीं जताते? सच है, यहाँ कोई जवान लड़कियाँ तो हैं नहीं, पर यहाँ औरतों को लुभाने, रिझाने और उन पर प्यार जताने में तो कोई बाधा नहीं है। मिसाल के तौर पर मुझे ही क्यों नहीं लुभाते, रिझाते? मुझ पर ही प्यार क्यों नहीं जताते?"

वालोदया सुन रहा था, फिर उसने बड़ी ही घबराहट और बेचैनी में अपना हाथ अपने सिर पर घुमाया।

"बहुत घमंडी लोग ही ख़ामोश रहते हैं और एकान्त से प्रेम करते हैं", न्यूता उसके हाथ को सिर से हटाते हुए कह रही थी, "तुम वालोदया, एक घमंडी इन्सान हो। तुम क्यों इतने उदास और मायूस हो? ज़रा मुझे तुम्हारा चेहरा तो देखने दो! अरे उजड्ड, गँवार, मान भी जाओ!"

वालोदया ने कुछ कहने का फैसला किया। मुस्कराने की कोशिश में उसने अपना निचला होठ हिलाया, आँखें बन्द कर लीं और एक बार फिर अपना हाथ अपने सिर में घुमाया।

"मैं...मैं तुमसे प्यार करता हूँ, उसने कहा।

न्यूता ने ताज्जुब में अपनी भौंहें उठायीं और हँसने लगी।

"मैं यह क्या सुन रही हूँ?" ओपेरा के गायकों की तरह गाते हुए और वैसे ही जब कोई बड़ी भयानक बात सुनता है पूछा, "क्या...क्या कहा तुमने? एक बार फिर कहो, एक बार फिर दोहराओ...।"

"मैं...मैं तुमसे प्यार करता हूँ।" वालोदया ने एक बार फिर कहा।

अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ बिना कुछ सोचे-समझे उसने न्यूता की तरफ़ आधा क़दम बढ़ाया और उसके हाथ थाम लिये उसकी आँखें भारी और उनींदी हो गयी थीं, आँसू आ गये थे और सारी कायनात महकते टर्किश तौलिये में समा गयी थी।

"ब्रेवो, ब्रेवो!" उसे ज़ोर की हँसी सुनाई पड़ी," पर तुम ख़ामोश क्यों हो? मैं चाहती हूँ तुम कुछ कहो तो।"

वालोदया ने देखा, हाथ पकड़ने में न्यूता को कोई एतराज़ नहीं है। तब उसने न्यूता के हँसते हुए चेहरे को देखा, बड़ी घबराहट में बड़े ही अजीब तरीके से अपने दोनों हाथ उसकी कमर में डाल दिया, उससे लिपट गया और उसकी दोनों हथेलियाँ न्यूता की कमर सहलाने लगीं। वह उसे अपने दोनों हाथों में थामे था, पर वह अपने हाथों से सिल्क के स्कार्फ के अन्दर दबे बालों को ठीक कर रही थी और बहुत ही आराम से कह रही थी, "वालोदया, तुम्हें होशियार, समझदार और लुभावना होना चाहिए और यह सिर्फ़ औरतों की सोहबत में ही हुआ जा सकता है। देखो, तुम्हारा चेहरा कितना बदसूरत...कितना कुटिल है। कुछ बोलना चाहिए, बात करनी चाहिए, हँसना-हँसाना चाहिए...हाँ, वालोदया, उदास और मायूस मत बनो। तुम जवान हो। दर्शन बनाने करने के लिए बहुत वक़्त मिल जायेगा। ख़ैर, छोड़ो मुझे, मैं अब जाऊँगी। छोड़ो भी।"

उसने आसानी से अपनी कमर पर से उसके हाथ हटाये और कुछ गाती हुई समर हाउस से बाहर चली गयी। वालोदया अब अकेला हो गया था। उसने अपने बाल सहलाये, मुस्कराया और तीन बार एक कोने से दूसरे कोने में घूमा, फिर बेंच पर बैठ गया और एक बार फिर मुस्कराया। उसे इस वक़्त शरम आ रही थी। उसे ताज्जुब हो रहा था कि इन्सान की शरम इतनी पैनी और तीखी हो सकती है। वह शरम से मुस्कराया, कुछ बुदबुदाया और कैसे भी समझ में न आने वाली हरकत की।

उसे शरम आ रही थी कि अभी-अभी उससे ऐसे बात की गयी थी, जैसे वह कोई छोटा बच्चा हो। उसे अपने शरमीलेपन पर शरम आ रही थी और सबसे ज़्यादा शरम आ रही थी, इस बात पर कि उसने एक शरीफ़ शादीशुदा औरत से लिपटने ही हिम्मत की। उसे लगा, न तो उसकी उम्र, न उसका चेहरा-मोहरा और नाक-नक्श और न ही समाज में उसका अपना स्थान, इनमें से कुछ भी तो उसे यह हक़ नहीं देता था।

वह झटके से उठा, समर हाउस से बाहर गया और बिना इधर-उधर देखे सीधा घर के करीब ही बग़ीचे में चला गया, उफ़, किसी भी तरह फौरन यहाँ से चलना चाहिए। वह अपना सिर पकड़े सोच रहा था, हे भगवान, किसी भी तरह फौरन यहाँ से चलना चाहिए।

जिस गाड़ी से वालोदया और उसकी माँ को जाना था, वह आठ बजकर चालीस मिनट पर जाती थी। गाड़ी जाने में तीन घंटे बाकी थे। अगर उसका बस चलता, तो वह बड़ी ख़ुशी से माँ का इन्तज़ार किए बिना अभी स्टेशन चला जाता।

क़रीब आठ बजे वह घर आया। उसके हाव-भाव में एक निर्णय और निश्चय झलक रहा था, जो होगा देखा जायेगा। उसने फ़ैसला किया कि बिना किसी डर के वह सीना तानकर अन्दर जायेगा, सीधे आँखों में देखेगा और ज़ोर से बोलेगा।

उसने टैरिस, बड़ा हॉल और ड्राइंगरूम पार किया और फिर वह आख़िरी कमरे में साँस लेने के लिए रुका। यहाँ से साफ़ सुनाई पड़ रहा था। कैसे सब डाइनिंग रूम में चाय पी रहे थे। मैडम शूमीखीना, माँ और न्यूता कुछ बात कर रही थीं और हँस रही थीं।

वालोदया सुन रहा था।

"मैं आपको यक़ीन दिलाती हूँ।" न्यूता कह रही थी, "मैं अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर पायी। वह इज़हारे इश्क कर रहा था और तो-और जानती हैं, उसने मुझे कमर से थाम लिया। वह मुझसे लिपट गया। मैं तब उसे समझ नहीं पायी। जानती हैं, उसे शऊर नहीं है। वह तौर-तरीके नहीं जानता। जब उसने कहा कि वह मुझसे प्यार करता है, तो उसके चेहरे पर जानवरपन, जैसा कि सिरकासियन के चेहरों पर पाया जाता है, साफ़ नज़र आ रहा था।"

माँ ने देर तक हँसते हुए कहा, "सच, वह मुझे उसके बाप की याद दिलाता है।"

वालोदया वापस भागा और भागते-भागते बाहर ताजी हवा में आ गया।

"ये लोग कैसे यह सब इतने ज़ोर-ज़ोर से बोल सकते हैं।" अपने हाथों को ऊपर फेंकते हुए और आसमान की तरफ़ देखते हुए वह कराहा, "बड़े आराम से ज़ोर-ज़ोर से बोल रहे हैं...और माँ हँस रही थी...माँ, हे भगवान! क्यों तूने मुझे ऐसी माँ दी? क्यों?"

कुछ भी हो जाये घर में जाना तो ज़रूरी था। उसने तीन बार फूलों की क्यारी पार की, थोड़ा शान्त हुआ और घर में गया।

"तुम वक़्त पर चाय पीने क्यों नहीं आते हो?" मैडम शूमीखीना ने डाँटते हुए सख़्ती से पूछा।

"माफ़ी चाहता हूँ। मुझे...मेरे जाने का वक़्त हो गया है", नज़रें झुकाए वह बुदबुदाया," मॉम, आठ बज गये हैं।"

"मेरे बेटे तुम ही चले जाओ", माँ ने नीरस आवाज़ में कहा, "मैं रात लिली के यहाँ ही रुकूँगी। गुडबाई, मेरे दोस्त,...आओ मैं तुम्हें आशीर्वाद दे दूँ...।"

उसने क्रॉस बना बेटे को आशीर्वाद दिया और न्यूता की तरफ़ देखते हुए फ्रेंच में कहा, "यह कुछ-कुछ लेरमन्तोव से मिलता है...सच है ना?"

किसी तरह से विदा ले और बिना किसी के चेहरे को देखे, वालोदया डाइनिंग रूम से बाहर चला गया। दस मिनट में ही उसने अपने को स्टेशन वाली सड़क पर चलते हुए पाया। वह इस बात से खुश था कि इस सड़क पर चल रहा था। इस वक़्त वह न तो कोई डर, न ही कोई शरम महसूस कर रहा था। वह आराम और बेफ़िक्री से साँस ले रहा था।

स्टेशन से आधे वेर्स्ट पर (एक वेर्स्ट=3500 फ़ीट) वह सड़क पर पड़े एक पत्थर पर बैठ गया और बाँध के पीछे आधे से ज़्यादा छिपे सूरज को देखने लगा। स्टेशन पर कहीं-कहीं बत्तियाँ जल रही थीं। एक हरी रोशनी मद्धिम-सी टिमटिमा रही थी, पर गाड़ी का कोई अता-पता नहीं था। वालोदया को ऐसे बिना हिले-डुले बैठे और कैसे आहिस्ता-आहिस्ता शाम हो रही थी, महसूस करते हुए बहुत अच्छा लग रहा था। समर हाउस का झुटपुटा, क़दमों की आवाज़ें, नहाने की महक, हँसी, कमर ये सब उसके दिमाग़ में साफ़-साफ़ कौंध गये। ये सब इस वक़्त इतने डरावने और अहम नहीं लग रहे थे, जैसा कि पहले लग रहे थे...।

"बेकार की बातें हैं...उसने अपना हाथ नहीं छुड़ाया और जब मैंने उसे कमर से थामा, उसे अपने से लिपटाया, तो वह हँसी थी", उसने सोचा, "मतलब उसे यह अच्छा लगा था। अगर उसे यह सब बुरा लगता, तो वह गुस्सा तो होती...।"

वालोदया उदास हो गया। समर हाउस में उसकी हिम्मत कम पड़ गयी! उसे अफ़सोस हो रहा था कि वह ऐसे ही बेवकूफ़ की तरह जा रहा था, पर अब वह विश्वस्त था कि अगर वही घटना दोबारा घटी, तो वह और ज़्यादा हिम्मती होगा और घटनाओं को ज़्यादा सामान्य रूप में देखेगा।

इस घटना को दोहराना मुश्किल नहीं है। शूमीखीनो के यहाँ खाने के बाद देर तक घूमते हैं। अगर वालोदया न्यूता के साथ अँधेरे बगीचे में घूमने जाये, बस, यही मौका होगा।

"वापस जाऊँ, वह सोच रहा था, "कल सुबह की गाड़ी से चला जाऊँगा...कह दूँगा, स्टेशन देर से पहुँचा।"

और वह वापस आ गया...मैडम शूमीखीना, माँ, न्यूता चला जाऊँगा...कह दूँगा, स्टेशन देर से पहुँचा।"

और वह वापस आ गया...मैडम शूमीखीना, माँ, न्यूता और कज़िन्स में से एक कज़िन टैरिस पर बैठे थे और ताश खेल रहे थे। जब वालोदया ने झूठ बोला और कहा कि स्टेशन देर से पहुँचा, तो सब परेशान हो गये। कहीं कल परीक्षा देने

जाने में देर न हो जाये और उसे कल जल्दी उठने की सलाह दी। सारा वक़्त जब तक वह ताश खेलते रहे, वह एक तरफ़ बैठा ललचायी आँखों से बड़े चाव से न्यूता को देखता रहा और इन्तज़ार करता रहा...। उसके दिमाग़ में पूरा प्लान तैयार था। थोड़ा अँधेरा होने पर न्यूता के पास जायेगा, उसका हाथ पकड़ेगा, फिर उससे लिपट जायेगा कुछ कहने की ज़रूरत नहीं होगी, क्योंकि दोनों बिना कुछ कहे सब समझ जायेंगे।

लेकिन खाने के बाद मैडम्स बगीचे में घूमने नहीं गयीं। उनका ताश खेलना जारी रहा। रात के एक बजे तक वे ताश खेलती रहीं और फिर सोने चली गयीं।

"यह सब कितना बेवकूफ़ीभरा है!" वालोदया बिस्तर पर लेटते हुए कराहा, "कोई बात नहीं। कल तक इन्तज़ार करूँगा...कल फिर समर हाउस में। कोई बात नहीं...।"

वह सोने की कोशिश नहीं कर रहा था। बिस्तर पर बैठा अपने हाथों में अपने घुटनों को पकड़े सोच रहा था। परीक्षा का ख़्याल भर उसे ग़ुस्सा दिला रहा था। उसने तय कर लिया, उसे स्कूल से निकाल देंगे और यह भी कि इस रेस्टीकेशन में कुछ भी डरावना या ख़राब नहीं है, बल्कि यह सब अच्छा होगा, बहुत ही अच्छा होगा। कल वह एक पंछी की तरह आज़ाद होगा, फैशनेबल कपड़े पहनेगा, सिगरेट पियेगा और ज़ाहिर है, यहाँ आयेगा और जैसे चाहेगा, वैसे न्यूता को रिझायेगा, लुभायेगा और अपना प्यार जतायेगा, तब वह एक स्कूली छात्र नहीं एक नौजवान लड़का होगा और बाकी रही बात कैरियर और भविष्य की, तो वह बिलकुल साफ है। वालोदया पहले टेलीग्राफ में वालिन्टयर हो जायेगा और आख़ीर में कैमिस्ट की दुकान में फार्मेसिस्ट हो जायेगा...नौकरियों की कमी है क्या? दूसरा घंटा गुज़र गया। वह वैसे ही बैठा रहा और सोचता रहा...।

तीसरे घंटे जब सुबह हो रही थी, उसके कमरे का दरवाज़ा बड़ी ही सावधानी से चरमराया और माँ अन्दर आयी।

"क्या तू सो नहीं रहा है?" उबासी लेते हुए उसने पूछा, "सो जा, सो जा, मैं सिर्फ़ एक मिनट...मैं दवाई लेने आयी हूँ...।"

"तुम्हें क्यों दवाई चाहिए?"

"बेचारी लिली को फिर से दौरा पड़ गया है। सो जा, मेरे बच्चे, कल तेरी परीक्षा है...।"

उसने अलमारी में से एक बोतल निकाली, खिड़की के पास गयी, लेबल पढ़ा और बाहर चली गयी।

"मारिया लिइओनतवना, यह वह दवाई नहीं है," वालोदया ने एक मिनट बाद ही एक जनांनी आवाज़ सुनी,. "यह तो लिली ऑफ द वैली है और लिली को मार्फ़ीन चाहिए। तुम्हारा बेटा सो रहा है? उसे कहो, ज़रा ढूँढ़ दे...।"

यह आवाज़ न्यूता की थी। वालोदया बिलकुल ठंडा हो गया। उसने फौरन अपनी पैंट पहनी, कन्धे पर कोट रखा और दरवाज़े की तरफ़ बढ़ा।

"जानती हो, मार्फ़ीन?" न्यूता बता रही थी, "नाम लेटिन में लिखा होगा। वालोदया को जगा दो, जिससे वह ढूँढ़ सके...।"

माँ ने दरवाज़ा खोला और तभी वालोदया ने न्यूता को देखा। वह वही ब्लाउज़, जिसे पहन कर नहाने गयी थी, पहने हुए थी। बाल वैसे ही बिना कंघी किये अस्त-व्यस्त कन्धों पर बिखरे हुए थे, चेहरा उनींदा और झुटपुटे की वजह से गोल...।

"यह वालोदया तो जाग रहा है..." उसने कहा, "वालोदया, मेरे प्यारे, ज़रा अलमारी में मार्फ़ीन ढूँढ़ो। इस लिली के साथ रहना, तो एक सज़ा है...हमेशा उसे कुछ तो हो जाता है।"

माँ भी कुछ बुदबुदायी, उबासी ली और कमरे से निकल गयी।

वालोदया अलमारी के पास गया, घुटनों के बल बैठ गया और दवाइयों की बोतलें और पैकेट देखने लगा। उसके हाथ काँप रहे थे और छाती और पेट में ऐसा महसूस हो रहा था, मानो उसके सारे बदन के अन्दर ठंडी-ठंडी लहरें बह रही हों। इधर, कार्बोलिक गैस और तरह-तरह की जड़ी-बूटियों की महक, बोतलें जिन्हें वह बेवजह अपने काँपते हाथों से उठाता, जिससे दवाइयाँ बिखर जातीं, उसका दम घोट रही थीं और उसे चक्कर आ रहे थे।

"लगता है माँ चली गयी हैं", उसने सोचा, "यह अच्छा है...बहुत अच्छा है...।"

"जल्दी करो?" न्यूता ने अँगड़ाई लेते हुए कहा, "एक सेकिंड... लो, लगता है, यही मार्फ़ीन है..." एक लेबल पर मार्फ़ पढ़कर वालोदया ने कहा, "लो।"

न्यूता दरवाज़े के बीच ऐसे खड़ी थी कि उसका एक पैर कॉरीडोर में था और दूसरा उसके कमरे में। वह अपने बाल सुलझा रही थी, जिनको सुलझाना मुश्किल था, क्योंकि वह बहुत ही घने और लम्बे थे। वह बड़ी ही अन्यमनस्क-सी वालोदया को देख रही थी। उस ढीले-ढाले बटन खुले ब्लाउज़ में बिखरे हुए बालों में उगते हुए सूरज की मन्द रोशनी में वालोदया को वह बेइन्तहा .खूबसूरत और प्यारी लगी...उसकी .खूबसूरती की गिरफ़्त में, काँपते हुए शरीर में और उस याद में अभिभूत कि कैसे उसने इस ख़ूबसूरत बदन को समर हाउस में अपने से चिपटाया था, उसने उसे दवाई दी और कहा, "तुम कितनी...।"

"क्या?"

वह कमरे में आ गयी।

"क्या?" उसने मुस्कराते हुए पूछा।

वह ख़ामोश उसे देखता रहा, फिर जैसा कि तब समर हाउस में किया था, वैसे ही उसका हाथ पकड़ लिया...उसने उसको देखा, मुस्कराई और इन्तज़ार करने लगी, आगे क्या होगा?

"मैं तुमसे प्यार करता हूँ...।" वह बुदबुदाया।

उसने मुस्कराना बन्द कर दिया, थोड़ी देर सोचा और कहा, "ठहरो, लगता है, कोई आ रहा है। उफ, यह स्कूली लड़का तो मुझे..."उसने दरवाज़े की तरफ़ जाते हुए और कॉरीडोर में झाँकते हुए कहा, "नहीं, कोई भी तो नहीं दिखाई दे रहा है...।"

वह वापस आ गयी...तब वालोदया को लगा कि वह कमरा, न्यूता, अल्लसुबह और वह खुद सब एक असामान्य, अनजानी और बहुत ही शिद्दतभरे अहसास में तब्दील हो गये हैं, जिसकी ख़ातिर सारी ज़िन्दगी, सारी ख़ुशी क़ुर्बान की जा सकती है और ज़िन्दगी-भर के लिए एक दर्द को क़ुबूल किया जा सकता है, पर इस अहसास को अभी आधा पल ही हुआ था कि अचानक सब कुछ ग़ायब हो गया। वालोदया ने देखा, नफ़रत और हिक़ारत से टेढ़ा हुआ सिर्फ़ एक मोटा और बदसूरत चेहरा और उसे जो अभी-अभी घटा था, उससे नफ़रत हो गयी।

"मुझे जाना है", न्यूता ने हिकारतभरी नज़रों से वालोदया को देखते हुए कहा, "कितने बदसूरत, क़ाबिले रहम...। उफ़, कितने बदसूरत, उजड्ड और गँवार लड़के हो तुम!"

इस वक़्त वालोदया को उसके लम्बे घने बाल, ढीला ब्लाउज़, उसके क़दमों की आहटें, उसकी आवाज़ ये सभी बदसूरत और भोंडे लगने लगे।

"बदसूरत लड़का...!" उसके जाने के बाद वह सोच रहा था। "मैं सच में बदसूरत हूँ...पूरा का-पूरा बदसूरत।"

बाहर आँगन में सूरज उग आया था, परिन्दे ज़ोर-ज़ोर से गा रहे थे। बग़ीचे में माली के चलने और उसके व्हील-बैरो की आवाज़ साफ़ सुनाई पड़ रही थी...। थोड़ी देर बाद गायों के रँभाने और चरवाहे की बाँसुरी की आवाज़ें सुनाई दीं। सूरज की रोशनी और आवाज़ें कह रही थीं कि कहीं तो है इस दुनिया में सीधी-सादी, हसीन और शायराना ज़िन्दगी, पर वह है कहाँ? न तो वालोदया को उसकी माँ ने और न ही किसी और ने उस ज़िन्दगी के बारे में बताया था।

जब कोचवान ने सुबह की गाड़ी के लिए उसे जगाया, तो वह तब भी नींद में ही था...।

"यह भी क्या है, भाड़ में जाये सब।" उसने सोचा।

ग्यारह बजे वह बिस्तर से उठा। शीशे के सामने खड़े अपने बालों को कंघी करते हुए और अपने बदसूरत और रात में नींद न आने से पीलिआए चेहरे को देखते हुए उसने सोचा, "बिलकुल ठीक है...मैं हूँ ही एक बदसूरत लड़का।"

जब माँ ने उसे देखा, तो वह गुस्सा हुई कि वह परीक्षा देने नहीं गया। वालोदया ने कहा, "मैं सोता ही रह गया माँ,...पर तुम फ़िक्र मत करो, मैं मेडिकल सर्टीफ़िकेट दे दूँगा।"

मैडम शूमीखीना और न्यूता एक बजे उठीं। वालोदया ने सुना कैसे मैडम शूमीखीना ने झनझनाते हुए अपनी खिड़की खोली और कैसे उसकी बेसुरी आवाज़ का न्यूता ने सुरीली हँसी में जवाब दिया। उसने देखा, कैसे दरवाज़ा खुला और ड्राइंगरूम से कज़िन्स और पिछलग्गुओं की एक लाइन (जिस भीड़ में माँ भी शामिल थी) नाश्ते की तरफ़ बढ़ रही थी। उसने देखा न्यूता के धुले, चमकते और हँसते हुए चेहरे को और देखीं उसके साथ-साथ चलते हुए अभी-अभी पहुँचे आर्किटेक्ट की काली भौंहें और दाढ़ी।

न्यूता मिनी स्कर्ट पहने हुए थी, जो उस पर बिलकुल नहीं फब रही थी। उसमें वह बहुत ही बेडौल दिख रही थी। आर्किटेक्ट चलते हुए बड़े ही बेवक़ूफ़ाना और सपाट जोक्स सुना रहा था। नाश्ते में दी गयी कटलेट्स में प्याज़ बहुत डाला गया था, ऐसा वालोदया को लगा। उसको यह भी लगा कि न्यूता जान-बूझकर ज़ोर से हँस रही थी और कनखियों से उसे देख रही थी। इन कनखियों से वह उसे बता रही थी कि रात में जो कुछ हुआ वह उसे रत्तीभर भी परेशान नहीं कर रहा था और यह भी समझा रही थी कि वह मेज़ पर बैठे बदसूरत लड़के की मौजूदगी पर कोई ध्यान नहीं दे रही थी।

चार बजे वालोदया माँ के साथ स्टेशन जा रहा था। बेहूदा और घृणित यादें, नींदविहीन रात, सामने खड़ा स्कूल से रेस्टीकेशन, पश्चात्ताप और अनुताप, इस सबने इस वक़्त उसके अन्दर गहन और उदास ग़ुस्से को भड़का दिया। उसने माँ के मोटे बदन को देखा, देखा, उसकी बारीक नाक को, न्यूता के दिये हुए वाटरप्रूफ़, गमबूटों को और बुदबुदाया, "तुम क्यों अपने आपको औरों की नज़रों में गिरा रही हो? यह तुम्हारी उम्र में शोभा नहीं देता! तुम बहुत ज़्यादा मेकअप करती हो, हार के पैसे नहीं चुकातीं, दूसरों की सिगरेट पीती हो...शरम की बात है। मैं तुम्हें प्यार नहीं करता. ..नहीं प्यार करता मैं तुमसे।"

वह माँ की बेइज़्ज़ती कर रहा था और वह डरी हुई अपने हाथ बाँधे उसे देख रही थी। वह डर में बुदबुदायी, "तुम क्या कह रहे हो, मेरे दोस्त? भगवान के लिए ज़रा सोचो, कोचवान सुन लेगा। चुप हो जाओ, वरना कोचवान सुन लेगा। उसे सब सुनाई पड़ रहा है।"

"नहीं प्यार करता...नहीं करता प्यार।" वह कराहते हुए कह रहा था, "तुम अनैतिक, दुराचारी और हृदयहीन हो...इस वाटरप्रूफ़ गमबूट को पहनने की हिम्मत मत करना। तुम सुन रही हो। वरना मैं इसके टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा...।"

"होश में आओ, मेरे बच्चे," माँ रो पड़ी, "कोचवान सुन रहा है।"

"मेरे बाप की जायदाद कहाँ है? कहाँ है तुम्हारा पैसा? तुमने सब कुछ लुटा दिया। मुझे अपनी ग़रीबी से शरम नहीं आती। शरम आती है इस पर कि मेरी माँ ऐसी है...जब भी मेरे दोस्त तुम्हारे बारे में पूछते हैं, तो मैं हमेशा शरम से सुर्ख़ हो जाता हूँ।"

गाड़ी में शहर तक आने के लिए दो स्टेशन पार करने पड़े। सारे रास्ते वालोदया कूपे के बाहर खड़ा रहा और काँपता रहा। वह कूपे के अन्दर नहीं जाना चाहता था, क्योंकि वहाँ माँ बैठी थी, जिससे वह नफ़रत करता था। वह नफ़रत करता था अपने आपसे, कंडकटरों से, स्टीम इंजनों के धुएँ से और इस ठंड से, जिसकी वजह से वह काँप रहा था...। जितना ज़्यादा उसका मन भारी होता जाता, उतनी ही शिद्दत से वह महसूस करता कि कहीं तो इस दुनिया में किन्हीं इन्सानों की ज़िन्दगी सीधी-सादी, साफ़-सुधरी, ख़ुशगवार, ख़ूबसूरत, जोशीली, गर्म, प्यार-मुहब्बत से भरी, आज़ाद और ख़ुश है...। वह यह सब महसूस कर रहा था और महसूस करते-करते इतना उदास हो गया कि एक मुसाफ़िर ने उसके ऐंठे हुए चेहरे को एकटक देखते हुए पूछा, "शायद, तुम्हारे दाँत में दर्द है?"

शहर में माँ और वालोदया एरिस्टोक्रेट मारिया पितरोवना, जिसने एक बड़ा घर किराये पर लिया हुआ था और ख़ुद फिर आगे किरायेदारों को रहने को देती थी, के घर में रहते थे। माँ ने दो कमरे किराये पर लिये हुए थे। एक में, जिसमें खिड़कियाँ थीं और जिसकी दीवारों पर सोने के फ्रेम में जड़ी दो तस्वीरें टँगी थीं, उसका बेड रखा था। इस कमरे में वह ख़ुद रहती थी और साथ वाले छोटे और अँधेरे कमरे में वह रहता था। उसमें एक दीवान था, जिस पर वह सोया करता था। उसके कमरे में इस दीवान के अलावा और कोई फ़र्नीचर नहीं था। सारा कमरा कपड़ों से भरी टोकरियों, हैट्स और कुछ ऐसे ही कचरे से भरे कॉर्टन्स, जिनको जाने क्यों माँ ने बहुत सँभाल और बचाकर रखा था, से भरा हुआ था। अपनी पढ़ाई वालोदया या तो माँ के कमरे में या कॉमनरूम में किया करता था। उस बड़े कमरे को यही नाम दिया गया था, जहाँ घर में सब रहने वाले खाने के वक़्त और हर शाम इकट्ठा हुआ करते थे।

घर पहुँचकर वह दीवान पर लेट गया और अपनी कँपकँपी को बन्द करने के लिए अपने आपको कम्बल में लपेट लिया। हैट्स से भरे कार्टन्स, टोकरियाँ और दूसरा कचरा उसे याद दिला रहा था कि उसका अपना कोई कमरा नहीं है, उसका अपना कोई ठिकाना नहीं है, जहाँ वह अपने आपको माँ से छिपा सके, छिपा सके अपने आपको उसके मेहमानों से या उन आवाज़ों से, जो इस वक़्त कॉमनरूम से आ रही थीं। कोनों में बिखरी किताबें और उसका स्कूल बैग उसे उस परीक्षा की याद दिला रहे थे, जिसे वह देने नहीं गया था...। जाने क्यों अचानक उसे मेनतोन की याद आ गयी, जब वह सात साल का था और जहाँ वह अपने स्वर्गवासी पिता के साथ रहता था। उसे याद आये बिआरित्स और दो अंग्रेज़ लड़कियाँ, जिनके साथ वह रेत पर भागा करता था...। उसे अपनी यादों में आसमान और समन्दर का रंग, लहरों की ऊँचाइयाँ और तब की ज़िन्दगी ताज़ा करने की इच्छा हुई, पर नहीं कर पाया। अंग्रेज़ लड़कियाँ उसके ज़हन में जीती-जागती उतर आयीं, पर बाक़ी सब कुछ

गड्डमड्ड हो गया और बेतरतीबी से बिखर गया...।

"नहीं, यहाँ ठंड है" वालोदया ने सोचा, फिर उठा, ओवरकोट पहना और कॉमनरूम में आ गया।

कॉमनरूम में सब चाय पी रहे थे। सामावार के सामने तीनों बैठे थे। माँ हरे रंग के पिन्स-नेज़ में बूढ़ी म्यूज़िक टीचर और इत्र की फैक्ट्री से रिटायर्ड बूढ़ा फ्रांसीसी अवगूस्तीन मिखाईलिच।

"मैंने आज खाना नहीं खाया", माँ ने कहा, "मेड सर्वेन्ट को ब्रेड लाने के लिए भेजना चाहिए।"

"दूनायाश!" फ्रांसीसी चिल्लाया।

पता लगा कि मालकिन ने मेड सर्वेन्ट को कहीं भेजा तो है।

"ओ, कोई बात नहीं", फ्रांसीसी ने मुस्कराते हुए कहा, "मैं ख़ुद अभी ब्रेड लेकर आता हूँ। कोई बात नहीं।"

उसने अपना ठसा हुआ और बदबूदार सिगार एक जगह रखा, टोपी पहनी और बाहर निकल गया। उसके जाने के बाद माँ ने म्यूज़िक टीचर को बताया, कैसे वह शूमीखीनो के यहाँ मेहमान रही और उन्होंने उसकी कितनी अच्छी ख़ातिरदारी की।

"जानती हो, लिली शूमीखीना मेरी कज़िन है...," उसने कहा, "उसके स्वर्गवासी पति जनरल शूमीखीन मेरे पति के कज़िन थे और वह ख़ुद पैदायशी बैरोनस कोल्ब थी।

"माँ, यह सच नहीं है।" वालोदया ने काँपते हुए कहा, "क्यों झूठ बोल रही हो?"

वह अच्छी तरह जानता था, माँ सच बोल रही थी। जनरल शूमीखीन और पैदायशी बैरोनस कोल्ब के बारे में एक लफ़्ज़ भी झूठ नहीं था, फिर भी उसे लगा कि वह झूठ बोल रही है। उसके कहने के अन्दाज़, उसके चेहरे के हाव-भाव, उसकी आँखें और सभी कुछ में झूठ महसूस हो रहा था।

"तुम झूठ बोल रही हो," वालोदया ने दोहराया और इतने ज़ोर से मेज़ पर मुक्का मारा कि सारे प्याले-प्लेट हिल गये। सारी चाय माँ पर बिखर गयी, "क्यों तुम जनरलों और बैरोनसों के बारे में बता रही हो? यह सब झूठ है।"

म्यूज़िक टीचर हक्की-बक्की रह गयी। उसने अपने रूमाल को ऐसे मुँह में खोंसा, जैसे फन्दा लग गया हो और माँ रो पड़ी।

"मैं कहाँ जाऊँ?" वालोदया ने सोचा।

बाहर सड़क पर वह घूम आया था। दोस्तों के पास जाने में शरम आ रही थी। अचानक फिर दोबारा उसे वे अंग्रेज़ लड़कियाँ याद आ गयीं...। वह एक बार कॉमनरूम के कोने से दूसरे कोने में घूम गया और फिर अवगूस्तीन मिखाइलिच के

कमरे में गया। उसका कमरा कुकिंग आइल और ग्लिसरीन के साबुन की महक से भरा हुआ था। मेज़, खिड़कियों और तो-और कुर्सियों पर बहुत सारी बोतलें, बड़े-छोटे गिलास तरह-तरह के द्रवों से भरे हुए रखे थे। वालोदया ने मेज़ पर, से अखबार उठाया, खोला और एक हेडिंग पढ़ा—फिगारो। अख़बार से बड़ी ही तीखी और सड़ी बदबू आ रही थी। फिर उसने मेज़ पर से रिवॉल्वर उठायी...।

"इस पर ध्यान मत दो!" म्यूज़िक टीचर साथ वाले कमरे में माँ को तसल्ली दे रही थी, "वैसे भी अभी वह जवान है। उसकी उम्र में जवान लोग कुछ ज़्यादा ही कह जाते हैं। इसे बर्दाश्त करना चाहिए।"

"नहीं, एवगेनिया अन्द्रेवना, वह बहुत ज़्यादा बिगड़ गया है।" माँ ने ऊँची-नीची गाती-सी आवाज़ में कहा, "उसके सिर पर कोई बड़ा नहीं है और मैं अबला कुछ नहीं कर सकती। नहीं, मैं अभागिन हूँ।"

वालोदया ने रिवॉल्वर की नाल को मुँह के अन्दर रखा, कुछ तो ट्रिगर या कुत्ते जैसा ढूँढ़ा और छुआ, उँगलियों से दबाया...फिर एक और प्रोजेक्शन को ढूँढ़ा, छुआ और एक बार फिर दबाया। नाल को मुँह से बाहर निकाल उसने उसे अपने ओवरकोट के अस्तर से पोंछा और रिवॉल्वर के लॉक को देखा। आज से पहले उसने ज़िन्दगी में कभी कोई हथियार हाथ में नहीं उठाया था...।

"लगता है, इसको दबाना चाहिए...," वह सोच रहा था, "हाँ, लगता है...।"

कॉमनरूम में अवगूस्तीन मिखाइलिच अन्दर आ गया था और हँसते हुए कुछ बता रहा था।

वालोदया ने फिर नाल को मुँह के अन्दर रखा, उसे दाँतों से दबाया और उँगली से कुछ दबाया। गोली चलने की आवाज़ आयी... किसी चीज़ ने बड़े ज़ोर से वालोदया के माथे पर चोट की, गिलासों और बोतलों पर वह मुँह के बल ज़मीन पर गिर गया। तभी उसने अपने स्वर्गवासी पिता को चौड़ी काली किनारी लगे सिल्क हैट पहने मेनतोन में किसी औरत के जनाज़े में जाते हुए देखा। अचानक पिता ने अपने दोनों हाथों से उसे पकड़ लिया और वे दोनों किसी अँधेरी और गहरी खाई की तरफ उड़ गये।

फिर सब कुछ गड्डमड्ड हो गया और गायब हो गया...

राजकुमारी

बड़े और तथाकथित 'लाल' दरवाज़ों से पुरुषों की 'न' नामक विहार (मोनास्ट्री) में चार हट्टे-कट्टे और ख़ूबसूरत घोड़ों से जुती एक घोड़ागाड़ी अन्दर आयी। लकड़ी के बने गेस्ट हाउस के नज़दीक भीड़ में खड़े याजक और धर्मसंघी दूर से ही कोचवान और घोड़ों के देखते ही उसमें बैठी उन सबको घनिष्ठ मित्र राजकुमारी वेरा गवरीलोवना को पहचान गये थे।

वर्दी पहने बूढ़ा करीब से कूदा और उसने राजकुमारी को घोड़ागाड़ी से उतरने में मदद की। उसने अपने चेहरे से काली जाली उठाई और आहिस्ता-आहिस्ता फादर की तरफ़ गयी और उनसे आशीर्वाद लिया, फिर धर्मसंघीयों की तरफ़ स्नेह से देखा और अपने कमरे की तरफ़ चली गयी।

"क्यों, अपनी राजकुमारी के बिना उदास हो गये थे?" उसने अपना सामान ले जाते हुए धर्मसंघीयों से कहा, "पूरा एक महीना नहीं आ पाई आपके पास। अब मैं आ गयी हूँ। अच्छी तरह से देख लो अपनी राजकुमारी को पर महायाजक कहाँ है? हे भगवान, मैं बेचैन हूँ उनसे मिलने के लिए। बहुत ही अच्छे हैं। आपको गर्व होना चाहिए कि आपके पास ऐसे महायाजक हैं।"

जैसे ही महायाजक अन्दर आये, राजकुमारी ख़ुशी से चिल्ला उठी, अपने सीने पर क्रॉस बनाया और फिर सिर पर क्रॉस बनाया और सिर झुकाये आशीर्वाद लेने के लिए उनकी तरफ़ बढ़ी।

"नहीं-नहीं, मुझे चूमने दें," उसने उनका हाथ पकड़ते हुए और तीन बार चूमते हुए कहा, "मैं बहुत खुश हूँ फादर, आख़िर मैं आपके दर्शन कर पायी। आप तो शायद अपनी राजकुमारी को भूल ही गये होंगे, पर मैं दिमाग़ी तौर से हर पल आपकी मोनास्ट्री में ही रहती रही। आपके यहाँ सब कितना सुन्दर है, शान्त है! फादर, यहाँ के जीवन में होड़भरी दुनिया से दूर एक विशेष शान्ति है, जो मैं अन्तर्मन से महसूस तो कर सकती हूँ पर बयान नहीं कर सकती।"

कहते-कहते राजकुमारी के गाल सुर्ख हो गये और उसकी आँखों में आँसू आ गये। वह बिना रुके भावना के आवेग में कहे जा रही थी, पर सत्तर साल का गम्भीर,

संवेदनशील, बदसूरत और रूखा महायाजक ख़ामोश सुनता रहा। हाँ, कभी-कभी अचानक एक फौजी की तरह कह देता, "ठीक है हुजूरे आला, मैं सुन रहा हूँ... सब समझ रहा हूँ...। क्या बहुत दिन हमारी मेहमान रहेंगी?" उसने पूछा।

"आज रात में आपके यहाँ रहूँगी और कल क्लावदी निकोलायेवना के यहाँ जाऊँगी उनसे मिले बहुत दिन हो गये हैं परसों से फिर आपके यहाँ दो-तीन दिन रहूँगी। होली फ़ादर, यहाँ मैं अपने मन को कुछ शान्ति देना चाहती हूँ।"

राजकुमारी को 'न' मोनास्ट्री में रहना अच्छा लगता था। पिछले दो सालों में उसे इस जगह से प्यार हो गया था और हर गर्मियों में वह यहाँ आया करती थी और कभी दो दिन, कभी चार दिन, तो कभी एक हफ़्ता रहा करती थी। शर्मीले छात्र, शान्ति, ख़ामोशी, नीची छतें सरू की महक, आम खाना, खिड़कियों पर टँगे सस्ते पर्दे यह सब उसके मन को छू जाया करते थे और उसे स्वस्थ विचारों से प्रेरित करते थे और अकलुषित और स्वस्थ चिन्तन करने में मदद करते थे। उसको सिर्फ़ आधा घंटा का एकान्त काफी था। यह महसूस करने के लिए कि वह भी धर्मसंघियों की तरह शरमीली और विनम्र है, उसमें से भी सरू की महक आती है, अतीत कहीं तो बहुत दूर चला गया है, अपना महत्त्व खो चुका है और राजकुमारी सोचने लगती थी कि सिर्फ़ उन्तीस साल की होने के बाद भी वह उस बूढ़े महायाजक की तरह है और वह भी इस अपार धन-सम्पत्ति, इस सांसारिक मोह और प्रेम के लिए नहीं पैदा हुई, बल्कि एक शान्त, संसार से दूर और मोहविहीन जीवन के लिए पैदा हुई थी...।

अकसर ऐसा हुआ करता था कि प्रार्थना में लीन साधु की अँधेरी झोंपड़ी में कभी अचानक सूरज की एक किरण झाँक जाती थी या खिड़की पर कोई एक पक्षी अपना गीत गा जाता था और तब ताज़ा-ताज़ा साधु अनचाहे मुस्करा दिया करता था और तब उसके पास से दबे अन्तर्मन से जैसे पत्थर के नीचे से अचानक एक ख़ुशी की लहर दौड़ जाया करती थी। राजकुमारी को लगता, मानो वह अपनी झोंपड़ी में बाहर से बिलकुल वैसी ही शान्ति लाई है, जैसे सूरज की किरण या पक्षी देते हैं। उसकी प्रसन्न और मुक्त मुस्कान, सहज नज़र, उसकी आवाज़, उसके चुटकुले, वास्तव में उसका पूर्ण व्यक्तित्व, छोटा क़द, उसके साधारण काले रंग के कपड़े अपनी उपस्थिति भर से साधारण आदमियों में एक भावुकता और प्रेम पैदा करते थे। उसे देखते ही हर कोई सोचा करता कि भगवान ने हमारे पास किसी देवता को भेजा है...। और यह सोचते हुए, हर कोई यही सोचता है, वह और मधुरता से मुस्कराई और पक्षी की तरह दीखने की कोशिश करने लगी।

चाय पीने के बाद और थोड़ा आराम करने के बाद वह घूमने के लिए बाहर निकली। सूरज डूब चुका था। मोनास्ट्री के मिगनोनैंट से भरे बग़ीचे ने राजकुमारी के मन को प्रसन्न कर दिया। दूर चर्च में से पुरुषों के गाने की आवाज़ आ रही थी, जो अच्छी लगने के साथ-साथ उदास भी लग रही थी। सन्ध्या वन्दना चल रही

थी। अँधेरी खिड़कियों में मन्दी रोशनी वाले लैम्प जल रहे थे, चर्च के पोर्च में बैठे बूढ़े फ़ादर के चेहरे पर इतनी बेचैनी और घबराहट नज़र आ रही थी कि जाने क्यों राजकुमारी को रोने की इच्छा होने लगी...।

दरवाज़ों के पीछे बर्च के पेड़ों और दीवार के बीच वाली सड़क पर जहाँ बेंच रखी थी, शाम पूरी तरह पसर चुकी थी। हवा भी जल्दी-जल्दी काली होती जा रही थी। राजकुमारी ने पेड़ों के बीच की पगडंडी पार की एक बेंच पर बैठ गयी और सोचने लगी।

वह सोच रही थी, अच्छा होता अगर सारी ज़िन्दगी के लिए इसी मोनैस्ट्री में रह जाती। यहाँ ज़िन्दगी गर्मी की हवा की तरह शान्त और हलकी है। कितना अच्छा हो चरित्रहीन राजकुमार को बिलकुल भूल जाऊँ, भूल जाऊँ अपने भव्य महल को, रोज़ तंग करने वाले लेनदारों को, अपनी बदकिस्मतियों और नाकामियों को और उस बदतमीज़ नौकरानी दाशा को, जिसका चेहरा आज सुबह बहुत ही कठोर और रूखा था। अच्छा हो सारी ज़िन्दगी यहीं इसी बेंच पर बैठी रहूँ और उन बर्च के पेड़ों के तनों के बीच से पहाड़ के नीचे धुन्ध को आवारागर्दी करते देखती रहूँ, देखती रहूँ दूर कहीं कौओं को जंगल के ऊपर और काले बादलों के नीचे उनके घोंसलों की तरफ़ उड़ते हुए, देखती रहूँ कैसे दो धर्मसंघी एक घोड़े के लाल अबलक पर और दूसरा पैदल, घोड़ों को अस्तबल में ले जा रहे हैं और अपनी इस स्वतन्त्रता का आनन्द लेते हुए बच्चों की तरह किलकारियाँ मार रहे हैं, उनकी जवान आवाज़ें हवा में गूँज रही हैं और उनका उच्चारा हुआ हर शब्द समझ में आ रहा है। ऐसे ही बैठे रहना अच्छा लगता है और अच्छा लगता है, खामोशी को सुनना। कभी हवा बहती है और बर्च के ऊपर के हिस्सों को हिलाती है, तो कभी मेंढक पिछले साल के गिरे पत्तों पर भागता है, तो कभी दीवार पर टँगा घड़ियाल हर 15 मिनट बाद बजता है...। अच्छा लगता है, बिना हिले-डुले ऐसे ही बैठे रहना, यही सब सुनना और सिर्फ़ सोचते रहना, सोचते रहना और सोचते रहना।

एक बूढ़ी हाथ में झोला लिये पास से गुज़री। राजकुमारी ने सोचा, कितना अच्छा हो, अगर मैं इस बुढ़िया को रोकूँ और कुछ मधुर-सा, कुछ मीठा-सा, कुछ प्रेम-भरा कहूँ और इस तरह इसकी मदद करूँ, पर बुढ़िया ने एक बार भी नज़र उठाकर नहीं देखा और मोड़ पर मुड़ गयी।

थोड़ी देर बाद एक लम्बा सफ़ेद दाढ़ीवाला स्ट्रा हैट पहने आदमी पेड़ों के बीच पगडंडी पर नज़र आया। राजकुमारी के पास आते ही उसने अपना स्ट्रा हैट उतारा और अभिवादन में झुक गया। उसका गंजा सिर और तीखी पैनी नाक देखते ही राजकुमारी समझ गयी कि वह डॉ. मिखाइल इवानविच है, जो पाँच साल पहले उसके ही ज़िले दुबोवका में काम करता था। उसे याद आया, किसी ने बताया था कि पिछले साल उसकी पत्नी का इन्तकाल हो गया और तभी उसकी इच्छा हुई कि वह डॉक्टर

से सहानुभूति ज़ाहिर करे, उसके मन को तसल्ली दे।

"डॉक्टर, शायद आपने मुझे नहीं पहचाना?" अभिवादन में मुस्कराते हुए उसने डॉक्टर से पूछा।

"नहीं, राजकुमारी, मैं आपको पहचान गया।", डॉक्टर ने एक बार फिर हैट उतारते हुए कहा।

"शुक्रिया, मैं समझी थी कि आप अपनी राजकुमारी को भूल गये। अकसर लोग सिर्फ़ अपने दुश्मनों को याद रखते हैं और दोस्तों को भूल जाते हैं। आप क्या प्रार्थना करने आये हैं?"

"मैं यहाँ हर शनिवार की रात आता हूँ यह मेरी नौकरी है। मैं यहाँ इलाज करता हूँ।"

"कैसे हैं?" एक लम्बी साँस भरते हुए राजकुमारी ने कहा, "मैंने सुना था कि आपकी पत्नी का इन्तकाल हो गया है। कैसा दुर्भाग्य है!"

"हाँ, राजकुमारी, मेरे लिए यह बहुत बड़ा दुर्भाग्य है।"

"क्या किया जा सकता है? हमें बड़ी ही विनम्रता से दुर्भाग्य को सहना चाहिए। भगवान की इच्छा के बिना एक बाल तक सिर से नहीं गिर सकता।"

"आप ठीक कहती हैं, राजकुमारी।"

राजकुमारी की हलकी और सम्मानयुक्त मुस्कान और लम्बी साँस का डॉक्टर द्वारा उत्तर बहुत ही रूखा और ठंडा था, "आप ठीक कहती हैं, राजकुमारी।" उसके चेहरे के भाव भी वैसे ही सर्द और रूखे थे।

"इसे और क्या कहना चाहिए?" राजकुमारी ने सोचा।

"कितना अरसा हो गया है हमें मिले हुए।" उसने कहा।

"पाँच साल। इस दौरान कितना कुछ बदल गया है, कितना पानी समन्दर में बह गया है! सोचने तक से डर लगता है। आप जानते हैं, मेरी शादी हो गयी है...बैरोनस से राजकुमारी बन गयी हूँ। शौहर से तलाक़ भी ले लिया है।"

"हाँ, मैंने सुना था।"

"भगवान् ने मेरी बहुत परीक्षा ली है। आपने शायद सुना होगा मैं तो करीब-करीब बर्बाद हो गयी थी। मेरे बदक़िस्मत शौहर के कर्ज़ों की वजह से दुबोवकी, कियीकोवो और सफ़ीनो को बेचना पड़ा। मेरे पास मिखाईलत्सेव में सिर्फ़ बारानोवा ही बचा है। अतीत में देखने भर से डर लगता है कितने बदलाव, तरह-तरह के कितने दुर्भाग्य, कितनी सारी ग़लतियाँ!"

"हाँ आप ठीक कहती हैं राजकुमारी, बहुत ग़लतियाँ हुई हैं।"

राजकुमारी थोड़ा बेचैन हो गयी। उसे अपनी ग़लतियाँ पता थीं, सब इतनी निजी थीं कि सिर्फ़ वह अकेली ही उनके बारे में सोच और कह सकती थी। वह अपने आपको रोक नहीं पायी और उसने पूछा, "आप कौन-सी ग़लतियों की बात

कर रहे हैं?"

"आप ही ने उनका ज़िक्र किया है। ज़ाहिर है आप खुद जानती हैं...।" डॉक्टर ने जवाब दिया और अपने कन्धे उचका दिये, "अब उनके बारे में क्या बात करनी?"

"नहीं, डॉक्टर, कहिए, मैं आपकी बड़ी शुक्रगुज़ार होऊँगी। आप बेहिचक कहिए। मैं सच सुनना पसन्द करती हूँ।"

"मैं, राजकुमारी, आपका न्यायाधीश नहीं हूँ।"

"न्यायाधीश नहीं हैं? आप किस अन्दाज़ में बात कर रहे हैं। ज़ाहिर है आप कुछ तो जानते हैं, कहिए।"

"अगर आपकी यही इच्छा है तो सुनिए, लेकिन मेरा दुर्भाग्य यह है कि मुझे बात करनी नहीं आती और मुझे हर बार आदमी समझ भी नहीं पाते हैं।"

डॉक्टर ने थोड़ी देर सोचा और फिर कहने लगा, "हाँ, ग़लतियाँ तो बहुत हैं, पर उन सबमें मेरे मुताबिक़ जो अहम है, वह है आपकी सारी ज़मींदारी में एक सामान्यता एकसापन। आप समझ रही हैं, मैं अपनी बात ठीक से नहीं कह पा रहा हूँ सबसे अहम है—नफ़रत, इन्सानों के प्रति नफ़रत, यह आपकी सब ग़लतियों में मौजूद थी। आपके जीवन का सारा दर्शन, सार और प्रणाली सिर्फ़ इन्सान के प्रति नफ़रत पर आधारित था। इन्सानी आवाज़ से नफ़रत, इन्सानी चेहरों से नफ़रत, इन्सानी गर्दनों से नफ़रत, इन्सानी क़दमों में नफ़रत...एक शब्द में आपको उन सब चीज़ों से नफ़रत नहीं, जिनको मिलकर इन्सान बना है। सब दरवाज़ों और सीढ़ियों पर वर्दियाँ पहने हट्टे-कट्टे, बदतमीज़ और सुस्त दरबान खड़े रहा करते थे, जो अच्छे कपड़े न पहने हुए इन्सानों को अन्दर नहीं आने देते थे। बाहर के कमरे में ऊँची कमर वाली कुर्सियाँ रखी होती थीं, जिससे कि बाल डान्स और पार्टियों के वक़्त कोचवान अपने सिरों से दीवारों पर धब्बे न लगा दें, सब कमरों में मखमली गलीचे बिछे रहा करते थे, जिससे आदमियों के चलने की आवाज़ न सुनाई दे, हर अन्दर आने वाले को ताकीद की जाती थी कि वह सब धीमी आवाज़ में बातें करें, कम बोलें और उन सब बातों को न कहें जो मूड खराब कर दें और आपके कमरे में इन्सान से हाथ मिलाने के लिए हाथ आगे नहीं बढ़ाया जाता था और न ही उसे बैठने को कहा जाता था, बिलकुल वैसे ही, जैसे आज आपने न तो मेरे से हाथ मिलाने के लिए हाथ आगे बढ़ाया और न ही बैठने को कहा...।

"इजाज़त दीजिए, यदि आप चाहते हैं।" अपना हाथ आगे बढ़ाते और मुस्कराते हुए राजकुमारी ने कहा, "सच है, इतनी छोटी-सी बात भी नाराज़ कर सकती है।"

"क्या मैं नाराज़ हो रहा हूँ?" डॉक्टर थोड़ा सा हँसा, पर तभी अचानक शरमा गया, अपना हैट उतारा और उसे हिलाते हुए बड़े ही जोश में कहने लगा, "सच कहूँ, मैं बहुत दिनों से इस मौके की तलाश में था कि सब कुछ आपसे कह सकूँ...मतलब, मैं यह कहना चाहता हूँ, आप सब इन्सानों को नेपोलियन की तरह देखती हैं, जैसे

बन्दूक के लिए गोली, पर लेकिन नेपोलियन के पास अपने कुछ आदर्श तो थे, लेकिन आपके पास सिवा नफ़रत के कुछ नहीं है।

"मैं, इन्सानों से नफ़रत करती हूँ!" बेचैनी से कन्धे उचकाते हुए राजकुमारी ने मुस्करा कर कहा, "मैं, नफ़रत करती हूँ!"

"हाँ, आप, आप जानना चाहती हैं? माफ़ कीजिए। मिखाइलत्सेव में आपके तीन पुराने और बड़े ही शालीन बावर्ची रहते हैं। वे आपकी रसोई की भट्ठी की आग से अन्धे हो गये थे। जो आपकी ज़मींदारी में हट्टा-कट्टा, ख़ूबसूरत और स्वस्थ होता, उसे आप और आपके आश्रित रख लेते हैं। उन्हें दरबान, कोचवान और सईस बना देते हैं। सब दो पैरों के शरीर कोचवान बनकर रह गये हैं, खा-खाकर मोटे हो गये हैं, बेवकूफ़ हो गये हैं, एक शब्द में कहा जाये, तो सोचने-समझने वाले इन्सान ही नहीं रह गये हैं...। युवा डॉक्टर, एगरोनोमिस्ट, अध्यापक या सभी बुद्धिजीवी अपना काम छोड़ चुके हैं। ईमानदारी से मेहनत नहीं करते। उनको रोटी के एक टुकड़े के लिए गुड्डे-गुड़ियों के खेल में हिस्सा लेने के लिए मजबूर किया जाता है, जिससे किसी भी स्वाभिमानी इन्सान को शरम आती है। दूसरा कोई युवा तीन साल की नौकरी में ही चापलूस, पाखंडी और ढोंगी बन जाता है...। यह क्या अच्छा है? आपके पोलिश मैनेजर, आपके कमीने जासूस सब आपके ये कज़मीर और कतान सुबह से शाम तक आपके खेत जोतते हैं और आपको .ख़ुश करने के लिए एक बैल से तीन कोटों की खाल दे जाते हैं। माफ़ कीजिए मैं सब बेतरतीबी से कह रहा हूँ, पर आप समझ रही हैं न! ग़रीब आदमी को आप इन्सान नहीं समझतीं और हाँ, वे सब राजकुमार, बैरन और महाराजा जो, आपके यहाँ आया करते थे, उनको आप सजावट का सामान समझती थीं, न कि इन्सान, पर सबसे अहम जो मुझे तंग करता है, बेचैन करता है, एक लाख एकड़ से भी ज़्यादा ज़मीन होने के बावजूद गाँववालों के लिए आपने कुछ नहीं किया, कुछ नहीं।"

अचम्भित, डरी, सहमी, बेइज़्ज़त राजकुमारी ख़ामोश बैठी रही। उसे समझ में नहीं आ रहा था, क्या कहे और अपने को कैसे काबू में रखे। आज से पहले उससे किसी ने इस अन्दाज़ में बात नहीं की थी। डॉक्टर की तल्ख़ और गुस्से से भरी आवाज़ और उसकी हिचकिचाहट और बेतरतीब बातें मानो उसके सिर पर हथौड़े चला रही थीं। दिमाग़ में एक शोर-सा भर रही थीं। तभी उसे लगा कि तरह-तरह की शक्ल बनाता डॉक्टर अपना हैट बार-बार अपने सिर पर मार रहा है।

"यह झूठ है," राजकुमारी ने आहिस्ता से विनतीभरी आवाज़ में कहा, "ग़रीबों के लिए मैंने बहुत कुछ अच्छा किया है। यह बात आप ख़ुद भी जानते हैं।"

"अच्छी तरह जानता हूँ।" डॉक्टर ने चिल्ला कर कहा।

"क्या आप अभी भी अपने तथाकथित अच्छे कामों को बहुत ही फायदेमन्द और संजीदा मानती हैं, न कि उन्हें गुड्डे-गुड़िया का मज़ाक़? आप जानती हैं, वह

शुरू से आख़िर तक एक मज़ाक़ था। वह प्यार का एक खेल था, साफ़-साफ़ खेल, जिसे बच्चे और बेवकूफ़ औरतें तक समझ गयी थीं। मिसाल के तौर पर उसे ही लें, क्या नाम था उसका ? वह वृद्धा आश्रम, जो निराश्रित बूढ़ियों के लिए आपने बनाया था और जिसमें आपने मुझे एक मुख्य डॉक्टर की हैसियत से काम करने को मज़बूर किया था और स्वयं मानवीय ट्रस्टी थीं। उफ़, मेरे भगवान, कैसा आश्रम था! अलग-अलग तरह की लकड़ी के टुकड़ों से फर्श बनाया गया था। आश्रम में और छत पर साउंड प्रूफ बनाया गया था। क़रीब दस बूढ़ियों को पास के गाँवों से इकट्ठा किया गया और उनको ऊनी कम्बलों में और हॉलैंड की बनी चादरों पर सोने के लिए मज़बूर किया गया और खाने के लिए दिये गये सिर्फ़ लॉलीपॉप।"

डॉक्टर ने बड़े ही नफ़रतभरे अन्दाज़ में अपना हैट ऊपर उछाला और अपनी बात कहनी जारी रखी, "वह सब एक खेल था। क्लर्कों ने कम्बलों और चादरों को ताले में बन्द करके रख दिया, जिससे कि बूढ़ियाँ उनमें दाग-धब्बे न लगा सकें। उनकी बला से वे बदक़िस्मत ज़मीन पर सोये। बूढ़ियों को न तो बैठने के लिए पलंग था, न पहनने को ब्लाउज़ और न ही उन्हें चमकीले फर्श पर चलने की इजाज़त थी। हर चीज़ परेड के दिन के लिए सँजोकर रखी जाती थी। हर चीज़ बूढ़ियों से ऐसे छिपाई जाती थी, मानो चोरों से छिपा रहे हों। बूढ़ियाँ जैसे-जैसे अपने को ढका करतीं, कुछ खातीं और रात-दिन ईशू से अपनी आज़ादी की दुआ करती रहतीं और दुआ किया करती थीं अपनी मुक्ति की उन हट्टे-कट्टे कमीनों से, जिनको आपने बूढ़ियों की जासूसी के लिए रख रखा था, पर बड़े-बड़े अफ़सर क्या कर रहे थे? यह सब बहुत ही अजीब था। हर हफ़्ते दो बार कूरियर आते और ऐलान किया करते कि कल राजकुमारी आ रही हैं। इसका मतलब कल आप सब अपने-अपने कमरों में रहेंगी। इसका मतलब यह भी होता था कि कल बीमारों को निकाल देना है, अच्छे साफ़-सुथरे कपड़े पहनने हैं और परेड पर जाना है। ठीक है, मैं आ रही हूँ। सारी बूढ़ियाँ साफ़-सुथेरे कपड़े पहने हुए एक क़तार में खड़ी हुआ करती थीं और आपका इन्तज़ार किया करती थीं। उनके साथ ही होता था, सेब की सी मीठी अपनी मुस्कान लिये गैरीसन का अवकाश प्राप्त क्लर्क। खड़ी-खड़ी बूढ़ियाँ उबासी लिया करती थीं और अगल-बगल झाँका करती थीं, पर कुछ भी कहने से डरती थीं। हम सब आपका इन्तज़ार किया करते थे। पहले छोटे अफ़सर आया करते थे। आधे घंटे के बाद बड़े अफ़सर आते और फिर अर्थ विभाग का मुखिया, फिर कोई और फिर कोई और आया करता था...। लगातार आते ही रहते थे। हर किसी का चेहरा रहस्यमय और प्रभावशाली हुआ करता था और हम इन्तज़ार किया करते थे, कभी एक पैर पर, तो कभी दूसरे पर खड़े हुआ करते थे, बार-बार घड़ी देखा करते थे और यह सब कब्रिस्तान जैसी ख़ामोशी में, क्योंकि हम सब एक-दूसरे से नफ़रत करते थे। एक घंटा गुज़र जाता, फिर दूसरा और तभी दूर घोड़ागाड़ी नज़र आती थी और...और...।"

डॉक्टर एक गूढ़ हँसी हँसा और फिर बड़ी ही महीन आवाज़ में कहने लगा, "आज जैसे घोड़ागाड़ी से बाहर उतरतीं तभी बूढ़ियाँ और गैरीसन क्लर्क गाना शुरू किया करते। हम अपने भगवान के आने से कितने खुश हैं, हम बता नहीं सकते...। यह बेवक़ूफ़ाना नहीं था?" डॉक्टर ज़ोर से हँसा और अपना हाथ ऐसे हिलाया, मानो बताना चाह रहा था कि हँसी के मारे वह कुछ कह नहीं पा रहा है। इस वक़्त आम आदमी की तरह वह बहुत ज़ोर से और दाँत भींचकर हँस रहा था। उसकी आवाज़, चेहरे की चमक और बदतमीज़ आँखों से साफ़ लग रहा था कि वह राजकुमारी से बेहद नफ़रत करता था और नफ़रत करता था वृद्धा आश्रम से भी। उसने जो भी कहा था, वह न तो मज़ाक़िया था न ही मन खुश करने वाला, पर वह बराबर हँसता रहा। कभी-कभी तो उसकी हँसी में खुशी भी झलक पड़ती थी।

"और वह स्कूल?" हँसी की वजह से मुश्किल से साँस लेते हुए उसने कहना जारी रखा, "याद है, आप किसानों के बच्चों को खुद पढ़ाना चाहती थीं? हो न-हो आपने बहुत अच्छी तरह से पढ़ाया, क्योंकि जल्दी ही सब बच्चे भाग गये इसीलिए उनको कोड़े मारने पड़े और बाद में उनको पैसे देकर नौकर रख लिया गया, जिससे वे आपके पास आते रहे और याद है, आप अपने हाथ से छोटे बच्चों को बोतल से दूध पिलाना चाहती थीं। उन बच्चों को, जिनकी माँएँ आपके खेतों में काम करती थीं? आप सारे गाँव में घूमीं और आपने रो-रो कर कहा कि ये बच्चे आपके नौकर नहीं हैं। सब माँएँ अपने बच्चे अपने साथ खेतों में ले जाया करती थीं, फिर पटवारी ने सब माँओं को हुक्म जारी किया कि वे बारी-बारी अपने बच्चे मन बहलाने के लिए आपके पास छोड़कर जायें। आश्चर्य की बात है। है न अद्‌भुत! आपकी कृपाओं से सब दूर भागते रहे। वैसे ही, जैसे चूहे बिल्ली से, पर ऐसा क्यों हुआ? साफ़ है। इसलिए नहीं कि मज़दूर और सर्वहारा, अनपढ़ और अहसानफ़रामोश है, जैसा कि आप हमेशा बताती रहीं, पर इसलिए कि आपके मन बहलाने के सब कामों में, इन शब्दों के लिए माफ़ करें, रत्ती-भर भी प्रेम और दया का भाव नहीं था। थी तो सिर्फ़ एक ही इच्छा, जीते-जागते गुड्डे-गुड़ियों से मन बहलाना और दूसरा कुछ नहीं...। जो इन्सानों और पालतू कुत्तों में फ़र्क़ करना नहीं जानता, उसे धर्मादि के काम नहीं करने चाहिए। आपको यक़ीन दिलाता हूँ, इन्सानों और पालतू कुत्तों में बहुत फ़र्क़ है।"

राजकुमारी का दिल ज़ोर से धड़क रहा था। उसके कानों में शोर गूंज रहा था और उसे लग रहा था कि डॉक्टर अभी अपना हैट उसके सिर पर दे मारेगा। डॉक्टर जल्दी-जल्दी जोश और बेहूदे तरीक़े से उसे चिढ़ाते हुए और फ़ालतू में तरह-तरह के चेहरे बनाते हुए कहे जा रहा था। राजकुमारी समझ रही थी कि उससे कोई बदतमीज़, अपनढ़, कमीना और अहसानफरामोश आदमी कुछ कह रहा था, पर वह उससे क्या चाहता था और किसके बारे में कह रहा था, वह नहीं समझ पा रही थी?

"चले जाइए यहाँ से!" उसने रोते हुए अपने हाथों से सिर ढकते हुए, जिससे कि डॉक्टर अपना हैट उसके सिर पर न दे मारे, कहा, "चले जाइए, यहाँ से!"

"आप अपने नौकरों से कैसा सलूक करती हैं।" डॉक्टर ने गुस्से में कहना जारी रखा, "आप उनको इन्सान नहीं समझतीं। आप उन्हें हद दर्जे के चोर और धोखेबाज़ समझती हैं। मिसाल के तौर पर मुझे यह पूछने की इजाज़त दें, मुझे आपने नौकरी से क्यों निकाला ? दस साल आपके पिता की नौकरी की, फिर आपकी, वह भी ईमानदारी से। कोई त्यौहार नहीं मनाया, एक भी छुट्टी नहीं ली। आसपास के 10 मील तक के गाँवों में सबका प्यार कमाया और इसके बावजूद एक सुहाने दिन ऐलान किया जाता है कि आज से मैं नौकरी में नहीं हूँ। क्यों? आज तक मैं यह नहीं समझ पाया। मैं एक डॉक्टर हूँ, एक शालीन, कुलीन आदमी हूँ, मास्को विश्वविद्यालय का छात्र रहा हूँ, परिवार का पिता हूँ। मैं इतना अदना इन्सान हूँ कि मुझे बिना कोई कारण बताये नौकरी से निकाल दिया जाये! मैं कुछ हूँ ही नहीं, क्यों ऐसा मान लिया गया? बाद में मुझे पता लगा कि बिना मुझे बताये मेरी पत्नी आपके पास तीन बार मेरी ओर से आपसे विनती करने के लिए गयी थी, पर आप नहीं मिलीं। कहते हैं, वह लॉबी में बैठे-बैठे रोती रहती थी। मैं उस स्वर्गीय को इसके लिए कभी माफ़ नहीं कर पाऊँगा। कभी नहीं!"

डॉक्टर ख़ामोश हो गया। उसने अपने दाँत भींचे और ज़ोर देकर सोचने लगा, जिससे उतना ही नफ़रत भरा और बदले की भावना से भरपूर कुछ और कह सके। तभी उसे कुछ याद आया और अचानक उसका उदास और सर्द चेहरा चमक उठा।

"आपकी इस मोनैस्ट्री के प्रति भावनाओं को ही ले लें," उसने उत्सुकता में कहना शुरू किया, "आपने कभी किसी को नहीं बख़्शा और जितना पवित्र स्थान होता, उतना ही ज़्यादा सम्भावनाएँ होतीं कि वह आपकी कृपा और दया का पात्र होता। आप यहाँ क्यों आती हैं? आपको इन संन्यासियों से क्या लेना-देना है? क्या मैं पूछ सकता हूँ? जेकूबा आपका कौन है? आप जेकूबा की कौन लगती हैं? फिर वही धोखा, वही ईश निन्दा, वही खेल, वही मज़ाक़ इन्सानों का, इस सबके अलावा और कुछ नहीं। आपको मोनैस्ट्री के भगवान में आस्था नहीं है। आपके मन में आपका अपना भगवान है, जिसको आपने अपने तर्क, चिन्तन, मनन और ध्यान के द्वारा पाया है। चर्च के पहनावे को आप नीची नज़रों से देखती हैं। आप दोपहर और रात की पूजा में नहीं जातीं, देर दोपहर तक सोती हैं।...आप यहाँ आती ही क्यों हैं? आप दूसरों की मोनैस्ट्री में अपने भगवान, अपनी आस्था के साथ जाती हैं और आप समझती हैं कि मोनैस्ट्री अपने लिए बड़ा सम्मान समझती है। कुछ भी हो। वैसे कभी आपने पूछा है कि मोनैस्ट्री को आपकी भेंट कितनी महँगी पड़ती है? आपने आज आने का तय किया और तीन दिन पहले ही मुखिया आया था, जिसे यह बताने के लिए भेजा गया था कि आप यहाँ आ रही हैं। कल सारा दिन आपका

कमरा तैयार किया गया और इन्तज़ार किया गया। आज एडवांस पार्टी भी आ गयी। एक बदतमीज़ नौकरानी, जो सारे आँगन में भागी फिर रही थी, अपनी स्कर्ट फरफरा रही थी, हर किसी से सवाल पूछ रही थी और कुछ हुक्म दे रही थी...। बर्दाश्त नहीं कर सकता यह सब। संन्यासी आज सारा दिन सावधान रहे। ज़ाहिर है, अगर आपका धूम-धाम से स्वागत न हुआ, तो बहुत बुरा होगा। होली फ़ादर से शिकायत कर देंगी कि होली फ़ादर, आपके संन्यासी मुझे प्यार नहीं करते। नहीं जानती, मेरी किस बात ने उन्हें नाराज़ किया है। सच है, मैं महापापिन हूँ और फिर मैं वैसे भी बहुत अभागिन हूँ।...आपके कारण एक मोनास्ट्री क़ो डाँट खानी पड़ी। महायाजक व्यस्त और बुद्धिमान हैं। उनके पास एक मिनट भी खाली नहीं है और आप हैं कि आज चाहती हैं कि वह आपके कमरे में आये। आप न तो उम्र, न ही संघ और न ही चर्च की इज़्ज़त करती हैं। आप बहुत कुछ कुर्बान कर सकती थीं, बहुत उपकार कर सकती थीं, पर शरम की बात है, इतने समय में धर्मसंघियों ने आपसे सौ रूबल तक नहीं पाये।''

जब भी राजकुमारी को कोई परेशान करता, उसकी बात न समझ पाता या उसकी बेइज़्ज़ती करता या उसकी समझ में न आता कि क्या कहा जा रहा है या क्या किया जा रहा है, तो वह प्रायः रो पड़ती थी। अब आख़ीर में उसने अपना मुँह ढका और बहुत ही महीन और बच्चे जैसी आवाज़ में रोने लगी। अचानक डॉक्टर ख़ामोश हो गया और उसे देखने लगा। उसका चेहरा काला और जड़ पड़ गया।

''राजकुमारी मुझे माफ़ करें,'' उसने आहिस्ता से कहा, ''मैं अपनी क्रूर भावना के दबाव में आ गया था और भूल गया था। यह सब बुरा हुआ।''

डॉक्टर फिर थोड़ा खाँसा और हैट बिना पहने ही राजकुमारी को वहीं अकेला छोड़कर चला गया।

आसमान में तारे झिलमिला उठे। मोनैस्ट्री के दूसरे छोर पर चाँद भी ज़रूर निकल आया होगा, क्योंकि आसमान बिलकुल साफ़ और पारदर्शी था। मोनैस्ट्री की सफ़ेद दीवार के साथ-साथ ख़ामोशी से चूहे दौड़ रहे थे।

घड़ियाल ने किसी घंटे का पौना हिस्सा बजाया। हो न-हो नौ बजे का समय होगा। राजकुमारी उठी और चुपचाप दरवाज़ों की तरफ़ गयी। वह अपने को बहुत बेइज़्ज़त महसूस कर रही थी और रो रही थी। उसे लग रहा था कि सारे पेड़, आसमान के तारे, भागते हुए चूहे और मधुर लय में बजता घड़ियाल, सभी उससे सहानुभूति जता रहे हैं। वह रो रही थी और सोच रही थी, अच्छा होता अगर वह सारी उम्र के लिए मोनैस्ट्री में आ जाती। इन ख़ामोश गर्मियों की शामों में वह बेइज़्ज़त, उदास, मायूस और जिसे दुनिया समझ नहीं पायी, इन पेड़ों की क़तारों के बीच में घूमती रहती और सिर्फ़ उन सितारोंभरे आसमान में बैठा भगवान ही उसके आँसुओं को देख पाता। चर्च में रात्रि वन्दना चल रही थी। राजकुमारी थोड़ा रुकी और खड़े-खड़े

थोड़ी देर भजन सुनती रही। घुटन और अँधेरे में यह भजन अच्छे लग रहे थे। इन भजनों को सुनते हुए रोना और कष्ट उठाना भी कितना सुखद लग रहा था!

अपनी झोंपड़ी में लौटने के बाद उसने अपना रुलाई वाला चेहरा शीशे में देखा, थोड़ा पाउडर लगाया, फिर खाना खाने बैठ गयी। साधुओं को पता था कि उसे मैरीनेटेड कटलेट, ताज़े छोटे मशरूम, रेड वाइन, शहद भरे केक, जिनसे मुँह में सरू की महक आती थी, बहुत पसन्द थे और हर बार जब भी वह आती, तो उसे यही खाना दिया जाता था। मशरूम खाते हुए और वाइन पीते हुए राजकुमारी सोच रही थी, कैसे उसके सब नौकर, चौकीदार, क्लर्क, दरबान, कोचवान और बावर्ची, जिनके लिए उसने इतना कुछ किया, उसे छोड़ जायेंगे और सबकी तरह उसकी बुराई करेंगे, उसकी हँसी उड़ायेंगे और तरह-तरह की बातें करेंगे। वह सोच रही थी कि अपना राजकुमारी का ख़िताब त्याग देगी। यह संसार और समाज छोड़ देगी। मोनास्ट्री में चली जायेगी और किसी को एक बार भी नहीं कोसेगी। जब वह अपने दुश्मनों तक के लिए प्रार्थना करेगी, तब उसे सब समझेंगे और सब उससे माफ़ी माँगेंगे, पर तब तक बहुत देर हो चुकी होगी...।

खाने के बाद वह कोने में मूर्ति के पास घुटने टेककर बैठ गयी और इवानजल के दो अध्याय पढ़े, फिर नौकरानी ने उसका बिस्तर ठीक किया और वह उस पर लेट गयी। सफ़ेद कम्बल के नीचे अँगड़ाई लेते हुए उसने एक लम्बी साँस ली, वैसे ही जैसे कोई आदमी रोने के बाद लेता है, फिर उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं और सो गयी...।

सुबह उठते ही उसने अपनी घड़ी देखी, साढ़े नौ बजे थे। पलंग के पासे बिछे गलीचे पर खिड़की के पर्दे के एक किनारे से सूरज की किरण पड़ रही थी, जो कमरे को रोशन कर रही थी। खिड़की के काले पर्दे के पीछे मच्छर शोर मचा रहे थे।

"अभी जल्दी है!" राजकुमारी ने सोचा और आँखें बन्द कर लीं।

बिस्तर पर लेटे-लेटे और अँगड़ाई लेते हुए उसे डॉक्टर की मुलाक़ात याद आ गयी और याद आ गये वे सारे ख़्याल, जिनके साथ वह सोई थी। उसे याद आया कि वह कितनी अभागन है! फिर उसे याद आया उसका पीटर्सबर्ग में रह रहा पति और याद आये डॉक्टर, अफ़सर, पड़ोसी और परिचित कारकुन...। पुरुष परिचितों और मित्रों का पूरा समूह याद आया। वह मुस्कराई और सोचने लगी कि अगर ये सब आदमी उसके अन्तर्मन में झाँक सकते, तो वह सब उसके पैर छूते...।

बृहस्पतिवार को बारह बजे उसने नौकरानी को बुलाया।

"दाशा, तैयार हो जाओ!" उसने आहिस्ता से कहा, "वैसे पहले जाओ और घोड़ों को जोतने के लिए कहो। क्लावदी निकोलायेवना के यहाँ जाना है।"

घोड़ागाड़ी में बैठने के लिए जब वह झोंपड़ी से बाहर आयी, तो दिन की तेज़ रोशनी में उसने अपनी आँखें मींच लीं और हँस पड़ी। दिन वाक़ई बहुत ख़ुशगवार

था। उसे विदा करने आये विकिट गेट पर जमा हुए साधुओं की तरफ़ उसने अधमिंची आँखों से अभिवादन में अपना सिर हिलाया और कहा, "अलविदा मेरे दोस्तो! परसों मिलेंगे।"

उसे बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ कि साधुओं के साथ-साथ डॉक्टर भी खड़ा था। उसका चेहरा पीला और उदास था।

"राजकुमारी", अपना हैट उतारते हुए और अपराधी की तरह मुस्कराते हुए उसने कहा, "मैं आपका काफ़ी देर से इन्तज़ार कर रहा हूँ। भगवान के लिए माफ़ कर दीजिए...जाने कौन सी रहस्यमय भावना ने कल मुझे दबोच लिया था और मैं जाने क्या-क्या कह गया...सब बेवक़ूफ़ीभरी बातें। संक्षेप में मुझे माफ़ कर दीजिए।"

राजकुमारी अभिवादन में मुस्कराई और अपना हाथ उसके होठों की तरफ़ कर दिया। उसने उन्हें चूमा और फिर शरमा गया।

एक परिन्दे को फाँदने की कोशिश करते हुए राजकुमारी घोड़ागाड़ी से बैठ गयी और चारों तरफ़ अपना सिर हिलाया। उसका अन्तर्मन अब बहुत प्रसन्न, पारदर्शी और हलका हो गया था और वह ख़ुद महसूस कर रही थी कि उसकी मुस्कान बड़ी ही प्रेमपूर्ण और प्राकृतिक हो गयी है। जब घोड़ागाड़ी दरवाज़े की तरफ़ जा रही थी, फिर झोंपड़ियों और बग़ीचों के पास से धूलभरी सड़क पर चल रही थी, लम्बे बोगन-बेलिया की क़तारों के पास से गुज़र रही थी और फिर मोनास्ट्री की तरफ़ जाते हुए बैलगाड़ियों के पास से गुज़र रही थी, तो वह सारे रास्ते मन्द-मन्द मुस्करा रही थी। वह सोच रही थी कि हर जगह प्रेम, प्रकाश और ख़ुशी लुटाने, बेइज़्ज़तियों को माफ़ कर देने और दुश्मनों पर मुस्कराने, इनसे बड़ी कोई ख़ुशी नहीं है। सामने से आते हुए आदमी उसे झुककर नमस्कार कर रहे थे। घोड़ागाड़ी आगे दौड़ रही थी। पहियों के नीचे धूल के बादल उठ रहे थे, जो हवा के साथ सुनहरी राई पर पड़ रहे थे और राजकुमारी को लग रहा था कि उसका शरीर घोड़ागाड़ी के गद्दों पर नहीं, बल्कि बादलों में झूल रहा था और वह ख़ुद एक पारदर्शी और हलके बादल में तबदील हो गयी है।

"मैं कितनी भाग्यशाली हूँ।" आँखें बन्द करते हुए वह बुदबुदायी, "मैं कितनी भाग्यशाली हूँ!"

चोर

मन्द बुद्धि कम्पाउंडर इरगुनोव गाँव में बहुत बड़ा शेख़ीख़ोर और शराबी मशहूर था। ईस्टर की एक शाम रेपीन से वापस आ रहा था, जहाँ वह हस्पताल के लिए कुछ सामान ख़रीदने के लिए गया था। देर न हो जाये और जल्दी ही लौट आये इसलिए डॉक्टर ने उसे अपना सबसे अच्छा घोड़ा दिया था।

शुरू में तो मौसम साफ़ और अच्छा था, पर आठ बजते-बजते एक भारी तूफ़ान आया और जब घर कोई आठ मील दूर ही रह गया, तब कम्पाउंडर रास्ते से भटक गया...।

घोड़े को हाँकना वह नहीं जानता था। रास्ता पता नहीं था, इसलिए इस उम्मीद में कि घोड़ा अपने आप घर ले जायेगा जहाँ तक नज़र आती थी, ऐसे ही दिशाहीन चल पड़ा। इस तरह चलते-चलते दो घंटे गुज़र गये। घोड़ा चलते-चलते तंग आ गया था। वह .ख़ुद ठंड से अकड़ गया था और उसे लगा कि वह घर की तरफ़ नहीं, बल्कि वापस रेपीन जा रहा है। तभी तूफ़ान के शोर में कुत्ते के भौंकने की आवाज़ सुनाई पड़ी और सामने एक लाल बिन्दु नज़र आया, जो धीरे-धीरे बड़े दरवाज़ों और एक लम्बी बाड़ में तबदील हो गया, जिनके ऊपर कुछ लम्बी कीलें लटक रही थीं। तभी बाड़ के पीछे से एक ख़ूबसूरत सारस उड़ता हुआ आया। हवा चेहरे पर बर्फ़ के पहाड़ फेंक रही थी और जहाँ लाल बिन्दु दिख रहा था, उस जगह अब बाँस की छत का एक बड़ा मकान दिख रहा था। तीन खिड़कियों में से एक पर अन्दर से एक लाल कपड़ा लटक रहा था और अन्दर रोशनी हो रही थी।

यह कौन सा घर था? कम्पाउंडर को याद आया कि रास्ते के दाहिने तरफ़ हस्पताल से छठे या सातवें मील पर अन्द्रेय चीरीकोव की सराय थी। इसी तरह से उसे याद आया कि इस सराय के साथ ही कोचवान की विधवा और उसकी बेटी ल्यबका रहती थी। कोचवान की विधवा दो साल पहले अपना इलाज करवाने के लिए हस्पताल आया करती थी। घर बदनाम था और उसमें देर रात और वह भी किसी और के घोड़े के साथ जाना ख़तरे से खाली नहीं था, पर दूसरा कोई चारा नहीं था। कम्पाउंडर ने अपने बैग में रखी रिवॉल्वर को छुआ, ज़ोर से खाँसा और

खिड़की के हत्थे पर खटखटाया।

"कोई है?" वह चिल्लाया, "ए बूढ़ी माँ, ठंड से बचने के लिए अन्दर आने दें।"

एक काला कुत्ता तभी ज़ोर से भागता हुआ घोड़े के पैरों के पास आकर भौंकने लगा, उसके बाद एक सफ़ेद, फिर तीसरा वह भी काला और इस तरह दस कुत्ते इकट्ठे हो गये। कम्पाउंडर ने सबसे तगड़े कुत्ते को तलाशा, फिर ज़ोर से उसकी तरफ़ चाबुक घुमाया। पिल्ला तभी अपने लम्बे पैरों पर खड़ा हो गया और बारीक आवाज़ में रोने लगा।

कम्पाउंडर देर तक खिड़की पर खड़ा खटखटाता रहा। बाड़ के पीछे घर के पास से पेड़ों में से बर्फीली हवा की साँय-साँय सुनाई पड़ रही थी, तभी दरवाज़ों के चरमराने की आवाज़ सुनाई पड़ी और हाथ में लालटेन लिये शॉल में लिपटी एक औरत का आकार नज़र आया।

"दादी माँ, गर्म होने के लिए अन्दर आने दो", कम्पाउंडर ने कहा, "मैं वापस हस्पताल जा रहा था, रास्ते से भटक गया। मौसम भी खराब हो गया। डरो मत, दादी माँ, अपने ही आदमी हैं।"

"हमारे अपने तो घर में हैं और अजनबियों को हमने बुलाया नहीं है", बड़े ही रूखे ठंग से उस आकार ने कहा, "और क्यों बेकार में खटखटा रहे हो। दरवाज़े खुले हैं।"

कम्पाउंडर आँगन में आ गया और छत के नीचे रुक गया।

"दादी माँ, नौकर को बुलाओ और कहो कि मेरे घोड़े को ले जाये, उसने कहा।

"मैं कोई दादी माँ नहीं हूँ।"

और सच में वह दादी माँ नहीं थी। जब उसने लालटेन बुझाई, उसके चेहरे पर रोशनी पड़ी, तब कम्पाउंडर की नज़र उसकी काली भौंहों पर पड़ी और वह ल्यूबा को पहचान गया।

"कौन से नौकर इस वक़्त?" घर में जाते हुए उसने कहा। "शराबी सो रहे हैं और जो सुबह रेपीनो से आये थे, वे चले गये हैं। सब खुश हैं...।"

पेंट हाउस में घोड़े को बाँधते हुए इरगुनोव को हिनहिनाने की आवाज़ सुनाई पड़ी। अँधेरे में उसे किसी और का घोड़ा भी दिखाई दिया और उसने उस पर कज़ाक़ की ज़ीन को छुआ। मतलब घर में मालिक के अलावा कोई और भी है। कम्पाउंडर ने अपने घोड़े को ढीला कर दिया, लगाम उतार दी, ज़ीन हटा दी और घर में जाते हुए अपने साथ ज़ीन और ख़रीदा हुआ सामान अन्दर ले गया।

पहला कमरा, जिसमें वह घुसा काफ़ी खुला-खुला था, काफ़ी गर्म था और ऐसी महक आ रही थी, मानो फर्श अभी-अभी धोया हो। मेज़ पर एक छोटे कद का क़रीब चालीस साल का नीली कमीज़ पहने और छोटी दाढ़ी वाला एक आदमी बैठा था।

यह मशहूर लुटेरा और घोड़ाचोर कलाशनीकोव था। बगाल्योवका में उसके बाप और दादा की एक सराय थी, जहाँ चुराये हुए घोड़ों का व्यापार होता था। वह कई बार हस्पताल भी आया था, इलाज कराने के लिए नहीं, डॉक्टर से घोड़ों की बात करने के लिए क्या उसका घोड़ा बिकाऊ है और क्या वह अपने छोटे टट्टू को सफ़ेद खूबसूरत घोड़े से बदलना चाहेगा? आज उसके बाल रंगे हुए थे। कानों में चाँदी के बुन्दे लटक रहे थे और काफ़ी रईस दिख रहा था। उबासी लेते हुए और अपने निचले होठ को दबाते हुए वह तस्वीरों से भरी एक किताब देख रहा था। आतिशदान पास ही फर्श पर एक और आदमी लेटा था। उसका चेहरा, कन्धे और छाती फरकोट से ढके हुए थे। हो न-हो वह सो रहा था उसके नये जूतों के पास बर्फ़ का पिघला हुआ पानी इकट्ठा हो गया था।

कम्पाउंडर को देखते ही कलाशनिकोव ने उसे नमस्कार किया।

"उफ़, यह मौसम..." इरगुनोव ने अपनी हथेलियों से अपने घुटने पोंछते हुए कहा। कन्धे की बर्फ़ गिर गयी थी, "मैं पूरी तरह से गीला हो गया हूँ। मेरी रिवॉल्वर, लगता है, वह भी...!"

उसने रिवॉल्वर निकाली, सब तरफ़ से उसे देखा और फिर अपने बैग में रख दी। रिवॉल्वर के दिखाने का कोई असर नहीं पड़ा? वह आदमी किताब देखता रहा।

"उफ़, यह मौसम...रास्ता भटक गया और अगर यहाँ के कुत्ते दिखाई नहीं पड़ते, तो मैं तो मर ही जाता। कहानी बन जाती, पर मालकिन कहाँ है?"

"बुढ़िया रेपीनो गयी है और बेटी सोने की तैयारी कर रही है..." कलाशनिकोव ने कहा।

कमरे में ख़ामोशी पसर गयी। कम्पाउंडर अपने काँपते हुए हाथों को गर्म कर रहा था, सारा सिकुड़ गया और ऐसे दिखाया, मानो वह ठंड से बिलकुल अकड़ गया हो। बाहर कुत्तों के भौंकने की आवाज़ आ रही थी। सब बोर हो रहे थे।

"क्या तुम ख़ुद बगाल्योवका से हो?" कम्पाउंडर ने बड़ी सख़्ती से उस आदमी से पूछा।

"हाँ, बगाल्योवका से हूँ।"

कम्पाउंडर इस बगाल्योवका के बारे में सोचने लगा। बड़ा गाँव है, तराई में स्थित है, इसलिए जब भी चाँदनी रात में बड़ी सड़क पर जा रहा होता था और नीचे अँधेरी तराई में देखता था, फिर ऊपर नीले आसमान को, तो लगता था, मानो चाँद एक गहरी खाई पर लटक रहा हो और रोशनी का वहाँ अन्त हो गया हो। सड़क मोड़ और घुमाव लेती हुई नीचे जाती थी और इतनी तंग हो जाती थी कि एपीडेमिक का इलाज करने या चेचक के टीके लगाने के लिए बगाल्योवका जाते हुए लगातार सीटी बजानी पड़ती थी या गला फाड़कर चिल्लाना पड़ता था, क्योंकि अगर कोई घोड़ागाड़ी सामने आ जाती, तो उसे रास्ता देना नामुमकिन हो जाता था।

बगाल्योवकावासी अच्छे माली और घोड़ाचोर के तौर पर मशहूर थे। उनके बग़ान बड़े ही घने और ख़ूबसूरत होते थे। बसन्त में सारा गाँव चैरी की बौरों से भर जाया करता था और गर्मियों में चैरी तीन कोपेक की एक बाल्टी के दाम बिका करती थी। तीन कोपेक दो और पेट-भर खाओ। यहाँ की औरतें .ख़ूबसूरत और गदराई हुआ करती हैं और अच्छे कपड़े पहनने की शौकीन हैं। अगर किसी दिन कोई काम न भी हो, तो भी घर के पिछवाड़े बैठ एक-दूसरे के सिर में जुएँ ढूँढ़ा करती हैं।

तभी कमरे में क़दमों की आहट सुनाई दी। बीस साल की ख़ूबसूरत ल्यूका नंगे पैर कमरे में आयी। उसने टेढ़ी नज़र से कम्पाउंडर को देखा और दो बार एक कोने से दूसरे कोने में घूम गयी। वह छाती उठाये बड़ी आहिस्ता चल रही थी। ज़ाहिर था उसे अभी धोए हुए फर्श पर नंगे पैर चलना अच्छा लग रहा था और इसीलिए उसने ख़ास तौर पर जूते उतारे हुए थे।

कलाशनीकोव कुछ मुस्कराया और उँगली के इशारे से उसे अपने पास बुलाया। वह उसकी मेज़ पर गयी। उसने उसे किताब में भगवान इलीया की फ़ोटो दिखाई, जो त्रोइका हाँक रहा था और आसमान में उड़ रहा था। ल्यूबका ने अपनी एक कोहनी मेज़ पर टिकायी। उसकी चोटी उसके कन्धे से नीचे लटक गयी। बड़ी घनी और लम्बी चोटी थी। चोटी के आख़ीर में लाल रिबन बँधा था, वह ज़मीन छू रही थी। वह .ख़ुद भी मुस्करायी।

".ख़ूबसूरत फोटो है," कलाशनीकोव ने कहा, "बहुत ही .ख़ूबसूरत है।" उसने दोहराया और हाथों को ऐसा किया, मानो इलिया की जगह वह .ख़ुद त्रोइका को हाँकना चाहता हो।

आतिशदान में से हवा की साँय-साँय की आवाज़ आ रही थी। कोई बाहर गुर्रा रहा था। लगता था किसी बड़े कुत्ते ने चूहे को मार दिया था।

"उफ़, यह क्या हो रहा है!" लयूबका ने कहा।

"यह हवा की आवाज़ है", कलाशनीकोव ने कहा, फिर वह ख़ामोश हो गया। उसने कम्पाउंडर की तरफ़ देखा और पूछा, "विद्‌वान ओसीप वसीलीवीच आपकी क्या राय है, इस दुनिया में भूत हैं या नहीं?"

"दोस्त, तुम्हें कैसे बताऊँ?" कम्पाउंडर ने जवाब दिया और एक कन्धा उचका दिया, "अगर वैज्ञानिक नज़रिये से देखा जाये, तो भूत नहीं हैं, क्योंकि यह एक पूर्वाग्रह है और अगर वैसे ही देखा जाये तो हम जैसे अनपढ़ों के लिए भूत होता है, थोड़े में कहूँ...मैंने अपनी ज़िन्दगी में बहुत कुछ देखा है। पढ़ाई के बाद में ट्रेगन रेजीमेंट में फ़ौजी कम्पाउंडर हो गया था और मैंने अच्छी सेवा के लिए मेडल भी जीता था। सेंट स्टीफ़न के करार के बाद मैं रूस वापस आ गया था और तब से डिस्ट्रिक्ट हस्पताल में काम कर रहा हूँ। अपने जीवन के अपार अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि जो मैंने देखा है, वह कोई और अन्दाज़ भी नहीं लगा सकता। भूत

भी देखे—मतलब सींगों और दुम वाले नहीं, क्योंकि यह तो निरी बेवकूफ़ी है, पर सचमुच के भूत कहाँ?" कलाशनिकोव ने पूछा।

"जगह-जगह पर। ज़्यादा दूर क्या जाना? वह रात में ही नहीं आया करता। मैं तो उससे, जानते हो, दिन में एक घर में मिला। मुझे याद है एक बार मैं चेचक के टीके लगाने गलीशनों गाँव जा रहा था। जैसा कि हमेशा होता है, घोड़ा और ज़रूरत की चीज़ें, इसके अलावा मेरी घड़ी और सामान यह सब मेरे साथ था। मैं बहुत ही ध्यान से चल रहा था करीब एक घंटा हो गया था। आवारा भी क्या कम होते हैं? मैं ज़िमनी तालाब पहुँच रहा था। वैसे वह तालाब शापित है। मैंने नीचे उतरना शुरू किया ही था कि अचानक देखा, कोई भूत जैसा आ रहा है। बाल काले थे, आँखें भी काली थीं। सारा चेहरा धुएँ से काला हो गया था...। घोड़ों के पास आया, बायीं लगाम हाथ में पकड़ी और कहा, रुको! पहले घोड़े को देखा, फिर मुझे, फिर लगाम को और बिना किसी शिष्ट शब्द के पूछा, कहाँ जा रहा है? उस आदमी के दाँत बाहर दिखाई पड़ रहे थे और आँखों में चालाकी दिखाई दे रही थी।...अच्छा, तो तू है जोकर! "चेचक के टीके लगने जा रहा हूँ," मैंने कहा, "पर तुझे मतलब?" उसने कहा, "अगर ऐसा है, तो मुझे भी टीका लगा।" अपनी बाँह नंगी की और मेरे सामने कर दी। ज़ाहिर है, मैंने उससे कोई ज़्यादा बात नहीं की। उसकी बाँह पकड़ी और छुटकारा पाने के लिए उसे चेचक का टीका लगा दिया। इसके बाद मैंने सीरिंज को देखा, वह सारी इन्फ़ेक्शन से भरी हुई थी।

आतिशदान के पास सोया हुआ आदमी अचानक उठा। उसने अपने ऊपर से फरकोट हटाया। कम्पाउंडर ने हैरानी में देखा कि यह तो वही अजनबी था, जो कभी ज़िमनी तालाब पर मिला था। इस आदमी के बाल, दाढ़ी और आँखें काजल की तरह काली थीं। चेहरा गोल और साथ ही उसके दायें गाल पर दाल के दाने जितना काला तिल था। उसने बड़े ही मज़ाकिया ढंग से कम्पाउंडर को देखा और कहा, "बायीं लगाम पकड़ी थी। सच है, पर महोदय, चेचक के बारे में झूठ है। चेचक के बारे में तो हमारे बीच कोई बात तक नहीं हुई।"

कम्पाउंडर घबरा गया।

"मैं तुम्हारे बारे में बात नहीं कर रहा हूँ", उसने कहा, "सो रहे हो, तो सोते रहो...।"

वह आदमी कभी भी उसके हस्पताल में नहीं आया था। इसलिए कम्पाउंडर नहीं जानता था, वह कौन था, किस गाँव का था और उसे देखते हुए उसने सोचा कि हो-न हो वह कोई जिप्सी होगा। वह आदमी उठा, अँगड़ाई और उबासी लेते हुए ल्यूबका और कलाशनीकाव के पास गया। उनके पास बैठ गया और वह भी किताब देखने लगा। उसके अलसाये चेहरे पर भावुकता और ईर्ष्या साफ़ झलक रही थी। 'मेरिक', ल्यूबका ने उसे कहा, "ऐसे घोड़े मुझे ला दे। मैं भी स्वर्ग चली जाऊँगी।"

"पापियों को स्वर्ग में जाना मना है," कलाशनीकोव ने कहा, "स्वर्ग धर्मात्माओं के लिए है।"

फिर ल्यूबका ने मेज़ ठीक की, सूअर की चर्बी का एक बड़ा टुकड़ा नमकीन, खीरे और लकड़ी की प्लेट में उबला छोटे-छोटे टुकड़े किया हुआ मटन ले आयी, फिर खीरे और सलामी से भरा भगोना ले आयी। मेज़ पर कटग्लास का वोदका से भरा डीकेन्टर रख दिया और जब वोदका गिलासों में डाली गयी, तो सारे कमरे में सेब की पपड़ी की महक फैल गयी।

कम्पाउंडर उदास हो गया, क्योंकि कलाशनीकोव और गोल-मटोल मेरिक आपस में बातें कर रहे थे और उस पर कोई ध्यान नहीं दे रहे थे, मानो वह कमरे में हो ही नहीं। वह उनसे बात करना चाहता था, शेखी बघारना चाहता था, वोदका पीना चाहता था, भर पेट खाना चाहता था और मौका मिले, तो ल्यूबका से छेड़-छाड़ करना चाहता था। जब तक वह खाते रहे, पाँच बार आकर उसके पास बैठी थी। अनजाने में अपने .खूबसूरत कन्धों से उसे छू गयी थी और बार-बार अपने हाथों से अपने चौड़े नितम्ब सहला रही थी। वह बहुत ही चुलबुली, ख़ूबसूरत, ज़िन्दादिल और खुशमिज़ाज लड़की थी। कभी बैठती थी, तो कभी खड़ी होती थी और बैठते हुए कभी अपने पड़ोसी की तरफ़ अपनी छातियाँ घुमाती थी, तो कभी कमर और इस चुलबुलाहट में कभी अपनी कोहनी छुआती थी, तो कभी अपने घुटने।

कम्पाउंडर को अच्छा नहीं लग रहा था कि दोनों ने सिर्फ़ एक पैग ही पिया था और दूसरा नहीं ले रहे थे और अकेले पीना उसे अच्छा नहीं लग रहा था, पर वह अपने आपको काबू नहीं रख पाया और उसने दूसरा पैग पिया फिर तीसरा और सारी सलामी खा गया। वे दोनों उससे किनारा न करें और उसे अपनी कम्पनी में शामिल कर लें, इसलिए उसने उनकी तारीफ़ करना शुरू कर दी।

"बगालोवका के आदमी अच्छे होते हैं।" उसने गर्दन मोड़कर कहा।

"किस मामले में अच्छे होते हैं?" कलाशनीकोव ने पूछा।

"घोड़ों के मामले में। खूब चुराते हैं।"

"इसमें क्या अच्छा है? शराबी और चोर हैं सब।"

"कभी वक़्त था, बात पुरानी हो गयी है", मैरिक ने थोड़ा चुप रहने के बाद कहा, "अब तो सिर्फ़ एक बूढ़ा फिलया ही बच गया है और वह भी अन्धा है।"

" हाँ, सिर्फ़ एक फिलया", कलाशनीकोव ने लम्बी साँस ली, "वह अब सत्तर साल का हो गया है। एक आँख जर्मन कोलोनाइज़रों ने निकाल ली और दूसरी से कम दिखता है। मोतियाबिन्द है। पहले डिस्ट्रिक्ट पुलिस अफ़सर उससे ईर्ष्या करता था, ऐ शमील, यह तू है!...सभी उसके जैसे थे। शमील जैसे अब और अपंग और फिलया के अलावा उसका दूसरा कोई नाम नहीं है। बहुत अच्छा आदमी था। एक बार स्वर्गीय आन्द्रेय गिगारोविच और ल्यूबाक के पिता रात में रोआनोवा गये। वहाँ

घोड़ों का झुंड खड़ा था। दस सबसे अच्छे घोड़े चुरा लाये चौकीदारों से डरे तक नहीं और सुबह होते ही बीस रूबल में दस के-दस घोड़ों को जिप्सी अफ़ोनका को बेच दिये। हाँ, और आजकल के आदमी, शराबी या सोये हुए घोड़े चुराते हैं। खुदा से खौफ़ नहीं खाते और तो-और शराबी के तो जूते तक उतार लेते हैं और बाद में घोड़े को बीस मील दूर ले जाते हैं और बाज़ार में भाव-ताव करते हैं। वह भी ऐसे, मानो तेल बेच रहे हों और तब तक भाव-ताव करते रहेंगे, जब तक गाँव का पुलिसमैन उसे पकड़ नहीं लेता। शरम की बात है। बहुत छोटे आदमी हैं। अब क्या कहें?"

"पर मैरिक?" ल्यूबका ने पूछा।

"मैरिक हमारे गाँव का नहीं है", कलाशनीकोव ने कहा, "वह खारकोव के मिज़िरीया का है। अच्छा है, यह ठीक है, पर गुनाह से डरता है। अच्छा आदमी है।"

ल्यूबका ने चालाकी और खुशी में मैरिक की तरफ़ देखा और कहा, "हाँ, यूँ ही इसे लोगों ने बर्फ़ में नहीं नहलाया था!"

"यह कैसे हुआ?" कम्पाउंडर ने पूछा।

"वह ऐसे..." मैरिक ने कहा और हँस पड़ा, "फिलया ने किराये पर घोड़े देने वालों के तीन घोड़े चुरा लिये और वे समझे कि घोड़े मेरे पास हैं। किराये पर घोड़े देनेवाले समालोइवका में कुल मिलाकर दस हैं और कामगारों को मिलाकर वे तीस हो जाते हैं। उनमें से एक ने बाज़ार में मुझे कहा, आओ, मैरिक, हम हाट से नये घोड़े लाये हैं।. ..मैं बहुत उत्सुक हो उठा, उनके पास गया, तो देखा, तीस आदमी हैं। उन्होंने मेरे हाथ पीछे बाँध दिये और मुझे नदी पर ले गये कहने लगे, हम तुम्हें घोड़े दिखायेंगे। एक गड्ढा खुदा हुआ था। वह पास खड़े थे, फिर उन्होंने एक और गड्ढा खोदा। इसके बाद मुझे रस्सी से बाँध दिया और दूसरे सिरे को एक टेढ़ी लकड़ी से, जो दोनों गड्ढों के ऊपर से जा रही थी, बाँध दिया। लकड़ी को जैसे ही डुबाया मैं ओवरकोट और लम्बे जूते पहने-पहने गड्ढे में गिर गया। वह खड़े-खड़े मुझे डुबाते रहे, फिर मुझे उन्होंने बर्फ़ के नीचे से खींचा और दूसरे गड्ढे में डुबा दिया।"

ल्यूबका सुनते-सुनते काँप उठी।

"फिर मुझे ठंड से गर्मी में ले गये", मैरिक कह रहा था, "और जब मुझे बाहर निकाला, तो मैं कुछ नहीं कर पाया। मैं बर्फ़ पर लेटा था। कोई लकड़ी से मेरी कोहनी पर मार रहा था और कोई घुटनों पर। बहुत दर्द हो रहा था। मेरी बहुत पिटाई की और फिर सब चले गये। मेरा सारा बदन अकड़ गया। सारे कपड़े सफ़ेद हो गये। मैं खड़ा हुआ, पेशाब तक नहीं निकला, जम गया था। शुक्र है एक बूढ़ी का, जिसने मुझे अपनी घोड़ागाड़ी में बैठा लिया।"

इस दौरान कम्पाउंडर पाँच या छः पैग पी गया। उसका मन हलका हो गया और वह भी कुछ असाधारण और ख़ास बात बताने को बेचैन हो गया। वह यह दिखाना चाहता था कि वह भी जांबाज़ था और किसी से नहीं डरता था।

"हमारे पेज़िन्सकी में ऐसा होता है..." उसने शुरू किया।

इस वजह से कि वह ज़्यादा पी गया था और नशे में आ गया था या शायद इस वजह से कि उसे दो बार बर्फ़ में सज़ा दी गयी थी। दोनों आदमियों ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया। यहाँ तक कि उसके सवालों तक का जवाब देना बन्द कर दिया। और तो-और उसकी उपस्थिति में वह ऐसे खुलकर बातें कर रहे थे कि उसे बुरा लग रहा था। मतलब उन लोगों ने उसकी उपस्थिति का कोई नोट ही नहीं लिया।

कलाशनीकोव का बर्ताव पढ़े-लिखे और शालीन आदमी की तरह बहुत ही तमीज़दार था। वह बहुत ही आत्मविश्वास से बात करता था। उबासी लेते हुए मुँह पर हाथ रखता था और कोई सोच भी नहीं सकता था कि वह चोर है, बेदर्द चोर, जो ग़रीबों को लूटता है। दो बार जेल जा चुका है। समाज ने फैसला किया था कि उसे साइबेरिया भेज देना चाहिए, पर बाप और चाचा ने पैसा खिला दिया। वह भी उसी की तरह चोर थे। मैरिक चालाक था। वह समझ गया था कि ल्यूबका और कलाशनीकोव उसे प्यार करते हैं। वह अपने को चतुर समझता था और कभी अपने हाथ कमर पर रखता, तो कभी उसकी छाती की तरफ़ बढ़ाता और ऐसे अँगड़ाई लेता कि बेंच भी चरमरा जाती...।

खाने के बाद कलाशनीकोव ने बैठे-बैठे ही ईशू की पूजा की, मैरिक से हाथ मिलाया। उसने भी पूजा की और कलाशनीकोव से हाथ मिलाया। ल्यूबका ने खाना उठाया और मेज़ पर पीपरमेंट के केक, भूने हुए अखरोट कद्दू के बीज और दो बोतल मीठी वाइन भी रख दिये।

"भगवान स्वर्गीय आन्द्रेय गिगोरीवीच की आत्मा को शान्ति दे", कलाशनीकोव ने अपना गिलास मैरिक के गिलास से टकराते हुए कहा, "जब वह ज़िन्दा था, हम यहाँ या फिर मार्तीन के यहाँ इकट्ठे हुआ करते थे। भगवान कसम, कितने अच्छे आदमी थे! कैसी बातें हुआ करती थीं! मज़ेदार बातें। वहाँ मार्तीन, फिलया और फ़्योदर स्तूकतोई हुआ करते थे...। सभी कुछ बहुत अच्छा हुआ करता था...। कितने मज़े किया करते थे!"

ल्यूबका बाहर चली गयी और थोड़ी देर में हरी ड्रेस और मनकों की माला पहने वापस आयी।

"मैरिक, देखो, कलाशनीकोव मेरे लिए क्या लाया है।"

उसने शीशे में अपने आपको देखा और कई बार सिर हिलाया, जिससे कि मनके आवाज़ करें, फिर उसने सन्दूक़ खोला। वह उसमें से कभी हरी-नीली बुन्दियों वाली ड्रेस, जो काग़ज़ की तरह फरफर करती या नीला, इन्द्रधनुषी रंग का स्कार्फ़ निकालती और इन सबको वह दिखा रही थी और ताली बजा-बजाकर हँस रही थी, मानो बहुत हैरान हो कि उसके पास उतना बड़ा ख़ज़ाना था।

कलाशनीकोव ने बलालाईका सुर में मिलाई और बजाने लगा। कम्पाउंडर की समझ में नहीं आया कि वह कौन सा गाना बजा रहा था, .ख़ुशी का या ग़मी का, क्योंकि सब तरफ़ इतनी उदासी थी कि रोने को मन कर रहा था, पर इससे माहौल .ख़ुशगवार हो उठा। मैरिक अचानक उठा और एक जगह खड़े होकर अपनी एड़ियों पर नाचने लगा। उसके बाद हाथ फैलाकर अपनी एड़ियों पर ही मेज़ से आतिशदान तक, आतिशदान से सन्दूक़ तक नाचता हुआ गया, फिर ऐसे उछला, मानो किसी कीड़े ने काट खाया हो, हवा में पैर मोड़कर उछला और नाचते-नाचते ज़मीन पर बैठ गया। ल्यूबका ने दोनों हाथ फैला दिये। ख़ुशी में चिल्लाई और उसके पीछे-पीछे गयी। पहले तो कोहनियों के बल आहिस्ता-आहिस्ता, मानो किसी को पीछे से मारने चुपके-चुपके जा रही हो, फिर वह भी मैरिक की तरह एड़ियों पर नाचने लगी। कई बार ज़ोर से घूमी और बैठ गयी, तब उसकी लाल ड्रेस ने घंटी की सी आवाज़ की। बड़ी ही चालाकी से देखते हुए, दाँत काटते हुए मैरिक भी उसके पास नाचता-नाचता आया और उसे अपने पैरों से दबाने की कोशिश करते बैठ गया, पर तभी वह उछली, अपना सिर पीछे फेंका, हाथ एक बड़े परिन्दे की तरह फैलाये और ज़मीन से थोड़ा उठे हुए सारे कमरे में तैर गयी...।

"उफ़, क्या लड़की है? आग है!" कम्पाउंडर सन्दूक़ पर बैठे नाच देखते हुए सोच रहा था, "क्या ख़ूबसूरती है? सब कुछ न्यौछावर कर दूँ, फिर भी कम होगा...।"

उसे अफसोस हो रहा था। वह क्यों कम्पाउंडर बना? क्यों एक मामूली किसान या आदमी नहीं रह गया? वह क्यों जैकेट और सुनहरे बटन वाली बेल्ट पहनता है, क्यों नहीं एक धारीदार नीली कमीज़? और तब वह बड़ी शान से गा सकता, नाच सकता, पी सकता और ल्यूबका से लिपट सकता, जैसे कि अभी मैरिक ने किया...। ज़ोर से खटखटाने की आवाज़ से एक प्लेट शोर करते हुए कपबोर्ड में से गिर गयी। लौ मोमबत्ती पर नाच रही थी।

धागा टूट गया था, इसलिए सारे मनके फर्श पर फैल गये। सिर से हरा स्कार्फ़ गिर गया था। ल्यूबका की जगह कमरे में चमक रहा था एक लाल सुर्ख़ बादल और हाँ चमक रही थीं, काली आँखें मैरिक की और ऐसा लग रहा था, मानो उसके हाथ और पैर अभी अलग-अलग हो जायेंगे।

आख़िरी बार मैरिक पैरों पर नाचा और फिर खड़ा हो गया, मानो कोई मूर्ति मिट्टी में धँसी हो। थकी और हाँफती ल्यूबका ने उसके सीने पर सिर रखा और उससे लिपट गयी। वैसे ही, जैसे कोई किसी खम्भे से लिपटता है। उसने भी उसे अपने से चिपटा लिया और मज़ाक़ करते हुए बड़े ही प्यार से कहा, "मैं जानता हूँ तेरी बुढ़िया ने पैसे कहाँ छिपा रखे हैं। उसको मार दूँगा, तेरा गला चाकू से काट दूँगा और इसके बाद सराय को आग लगा दूँगा। लोग समझेंगे कि तुम दोनों आग में जल गये और मैं तुम्हारे पैसे लेकर कुबान चला जाऊँगा। वहाँ घोड़ों का अस्तबल

चलाऊँगा और भेड़ पालूँगा...।"

ल्यूबका ने कोई जवाब नहीं दिया सिर्फ़ एक क़सूरवार की तरह उसकी आँखों में झाँका और पूछा, "मैरिक, क्या कुबान में बहुत अच्छा है?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया, फिर सन्दूक पर बैठ गया और सोचने लगा। शायद कुबान के सपने ले रहा था।

"मुझे चलना चाहिए, वक़्त हो गया है", कलाशनीकोव ने उठते हुए कहा, "फिलया अब तक इन्तज़ार कर-करके थक गया होगा। खुदा हाफ़िज़, ल्यूबका!"

कम्पाउंडर बाहर देखने गया, कहीं कलाशनीकोव उसके घोड़े पर तो नहीं चला गया। बर्फ़ीला तूफ़ान अभी तक चल रहा था। सफ़ेद बादल अपनी लम्बी-लम्बी पूँछों से झाड़ियों और झाड़ों से बाहर आँगन में बाड़ के उस पार ज़मीन पर लिपट रहे थे। बर्फ़ के बड़े-बड़े टुकड़े गोल-गोल घूम रहे थे, ज़मीन पर गिर रहे थे, फिर उठ रहे थे, फिर गिर रहे थे और हवा तो हवा थी। नंगे बर्च और चेरी के पेड़ हवा का यह दुखदायी प्यार नहीं सह पा रहे थे। वह ज़मीन पर झुक गये थे और रो रहे थे। हे भगवान, यह किस पाप की सज़ा है। हमें मिट्टी में मिला रहे हैं। अपनी मर्ज़ी से खड़े भी नहीं रहने देते ?

"टर्र!" सख़्ती कलाशनीकोव ने कहा और अपने घोड़े पर बैठ गया। दरवाज़ा अधखुला था और उसके पास ही बर्फ़ का एक बड़ा टुकड़ा मँडरा रहा था, अब चल भी!" कलाशनीकोव चिल्लाया। छोटे क़द और छोटे पैरों वाला उसका घोड़ा चल पड़ा। बर्फ़ के टुकड़े उसके पेट को छू रहे थे। कलाशनीकोव बर्फ़ की वजह से सफ़ेद हो गया था और जल्दी ही अपने घोड़े समेत आँखों से ओझल हो गया।

जब कम्पाउंडर कमरे में वापस आया, तो ल्यूबका फ़र्श पर रेंग रही थी और मनके इकट्ठे कर रही थी। मैरिक नहीं था।

"ख़ूबसूरत लड़की है," कम्पाउंडर बेंच पर लेटते हुए और भेड़ की खाल का कोट अपने सिर के नीचे रखते हुए सोच रहा था, "काश, मैरिक यहाँ न होता!"

फ़र्श पर बेंच के पास रेंगती ल्यूबका उसे परेशान कर रही थी और वह सोच रहा था, अगर सिर्फ़ मैरिक यहाँ न होता, तो वह उससे लिपट जाता और बाद में जो होता, देखा जाता। सच है, वह अभी लड़की है, पर ईमानदार नहीं है और अगर है भी तो चोरों की सराय में कहाँ तक कुछ किया जा सकता है? ल्यूबका ने सारे मनके इकट्ठे कर लिये और बाहर चली गयी। मोमबत्ती पूरी जल चुकी थी और उसके स्टैंड के काग़ज़ ने जलना शुरू कर दिया था। कम्पाउंडर ने अपने पास रिवॉल्वर और माचिस रख ली और मोमबत्ती बुझा दी। मोमबत्ती की लौ टिमटिमा रही थी। इसलिए आँखों में दर्द हो रहा था और छोटे-छोटे बिन्दुओं के साये कभी छत पर, तो कभी ज़मीन पर, तो कभी कपबोर्ड पर कूद रहे थे और इन सबके बीच स्वस्थ और गदराई ल्यूबका बीच-बीच में झलक पड़ती थी। कभी लट्टू की तरह घूमती

हुई, कभी नाचती और हाँफती हुई।

"काश, मैरिक को शैतान उठा ले जाता!" वह सोच रहा था।

मोमबत्ती आख़िरी बार टिमटिमायी। लौ थोड़ी-सी काँपी और बुझ गयी। कोई तो, हो-न हो मैरिक, कमरे में आया और बेंच पर बैठ गया। उसने पाइप सुलगाया, एक पल के लिए उसका गोल काले तिल वाला चेहरा रोशन हो गया। पाइप के बदबूदार धुएँ ने कम्पाउंडर के गले में ख़राश कर दी और वह खाँसने लगा।

"कितना बदबूदार, तम्बाकू है तेरा, मानो वह भी चोरी का हो।" कम्पाउंडर ने कहा, "उलटी आने को हो रही है।"

"मैं तम्बाकू में जई के फूल मिलाता हूँ", थोड़ी देर चुप रहने के बाद मैरिक ने कहा, "सीने में आसानी से जाता है।"

उसने पाइप पिया, थोड़ा थूका और फिर से वापस चला गया। आधा घंटा हुआ होगा, तभी फूस में बाहर रोशनी चमकी। मैरिक भेड़ की खाल का कोट और टोपी पहने नज़र आया, फिर नज़र आई मोमबत्ती के साथ ल्यूबका।

"रुक जाओ मैरिक आग्रहभरी आवाज़ में ल्यूबका ने कहा।

"नहीं, ल्यूबका, मत रोको।"

"मेरी बात सुनो, मैरिक", ल्यूब्रका ने कहा और कहते-कहते उसकी आवाज़ में बहुत ही प्यार भर आया, "मैं जानती हूँ, तू माँ का पैसा ढूँढ़ निकालेगा, हम दोनों को मार भी देगा और दूसरी लड़कियों के साथ प्यार करने के लिए कुबान भी चला जायेगा। सब ठीक है।"

"रुक जा, मेरी जान, मत जा।"

"नहीं, मैं मज़े लूटना चाहता हूँ...।" मैरिक ने अपनी बेल्ट बाँधते हुए कहा।

"मज़े लूटने के लिए जायेगा किस पर...तू पैदल आया था, पर जायेगा किस पर?"

मैरिक ल्यूबका की तरफ़ झुका और उसके कान में कुछ फुसफुसाया। उसने आँगन में देखा और रोते-रोते हँस पड़ी।

"वह शैतान तो सो रहा है।"

मैरिक उससे लिपट गया, ज़ोर से चूमा और बाहर आ गया। कम्पाउंडर ने रिवॉल्वर जेब में डाला, जल्दी से उठा और उसके पीछे भागा।

"रास्ते से हट जा!" ल्यूबका से कहा, वह गमबूट पहने दरवाज़ा बोल्ट किये रास्ते में खड़ी थी, "जाने दे, क्यों खड़ी हो गयी है रास्ते में?"

"तुम्हें उधर जाने की क्या ज़रूरत है?"

"घोड़ा देखना है।"

ल्यूबका ने बड़े ही प्यार से उसे नीचे से ऊपर तक देखा।

"घोड़े को क्या देखना है? उसमें क्या रखा है? मुझे देख...।" उसने कहा

फिर वह थोड़ा झुकी और अपनी उँगली से उसकी चेन में लटकी चाबी को छुआ।

"जाने दे, वरना वह मेरा घोड़ा ले जायेगा," कम्पाउंडर ने कहा, "अरी भूतनी, जाने भी दे!" उसके कन्धे पर मारते हुए और उसे पूरी ताक़त से धकेलते हुए, जिससे वह दरवाज़े से हट जाये, वह ज़ोर से चिल्लाया, पर ल्यूबका ने बोल्ट को कसकर पकड़ रखा था, मानो लोहे की बनी हो, "हट जा!" वह फिर गुस्से में चिल्लाया, "मैं कहता हूँ, हट जा वरना वह चला जायेगा।"

"उसे कहाँ जाना है? वह कहीं नहीं जायेगा।"

उसने भारी-भारी साँसें लेते हुए और अपने दर्दभरे कन्धे को सहलाते हुए एक बार फिर कम्पाउंडर को नीचे से ऊपर तक देखा, वह शरमा गयी और हँसने लगी।

"मत जा मेरी जान...," उसने कहा, "मुझे अकेले डर लगता है। मैं अकेली बोर हो जाऊँगी।"

कम्पाउंडर ने उसकी आँखों में झाँका, थोड़ी देर कुछ सोचा और उससे लिपट गया। उसने कोई एतराज नहीं किया।

"सुन, तंग मत कर, मुझे जाने दे।" उसने ल्यूबका से विनती की। वह ख़ामोश रही।

"मैंने सुन लिया था", उसने कहा, "तूने अभी मैरिक से कहा था कि तू उससे प्यार करती है।"

"क्या फ़र्क़ पड़ता है, मैं किसी से भी प्यार करूँ। वह तो मेरा तकिया जानता है कि मैं किससे प्यार करती हूँ।"

उसने फिर दोबारा अपनी उँगली सोनामढ़ी चाबी पर घुमाई और आहिस्ता से कहा, "यह मुझे दे दो...।"

कम्पाउंडर ने अपनी सोनामढ़ी चाबी चेन में से खोली और उसे दे दी। अचानक उसने अपनी गर्दन ऊँची की, कुछ सुना और उसका चेहरा बिलकुल संजीदा हो गया। कम्पाउंडर को उसकी आँखों में एक चालाकी और बेरहमी नज़र आयी। तभी उसे घोड़े का ख़्याल आया, उसने उसे आराम से एक तरफ़ किया और आँगन की तरफ़ भागा। पेंट हाउस में सोया हुआ सूअर बेफ़िक्री और आराम से गुरगुरा रहा था, गाय अपने पैर बार-बार ज़मीन पर मार रही थी...। कम्पाउंडर ने माचिस जलायी और उस रोशनी में सूअर, गाय और कुत्ता देखा। सभी उसे देखते ही उसकी तरफ़ भागे, पर घोड़ा गायब था। कुत्ते को हाथ से भगाते हुए और डाँटते हुए, हिमसंचय से टकराते हुए, बर्फ़ से लिपटते हुए वह भागता हुआ दरवाज़े के बाहर आया और अँधेरे में देखने लगा। उसने अपनी आँखों पर ज़ोर दिया, पर उसे सिर्फ़ नज़र आई उड़ती हुई बर्फ़ और नज़र आये बर्फ़ से बनते तरह-तरह के आकार। अँधेरे में से कभी चमक पड़ता सफ़ेद मज़ाक़ उड़ता चेहरा, तो कभी सफ़ेद घोड़े पर बैठी अन्नपूर्णा देवी, तो कभी उसके सिर पर सफ़ेद सारसों की उड़ती हुई एक क़तार...। गुस्से और

सर्दी से काँपते हुए कम्पाउंडर ने अपनी रिवॉल्वर से कुत्ते पर गोली चलाई, जो उसे नहीं लगी। उसके बाद वह फौरन घर के अन्दर भागा।

जब वह पेंट हाउस में गया, तो उसे साफ़-साफ़ सुनाई दिया कि कोई कमरे से बाहर भागा और दरवाज़े से टकराया। कमरे में अँधेरा था। कम्पाउंडर भी दरवाज़े से टकराया। दरवाज़ा बन्द था, फिर उसने माचिस की एक तीली के बाप एक और तीली जलाई फिर वापिस पेंट हाउस में भागा, वहाँ से रसोई में, रसोई से छोटे कमरे में, जिसमें सब दीवारों पर स्कर्ट और ड्रेस टँगी थीं और सौंफ और मक्का की खुशबू आ रही थी, कोने में आतिशदान के पास एक पलंग था, जिस पर बिना ग़िलाफ़ का तकिया रखा था। हो-न हो वहाँ बुढ़िया रहती थी, ल्यूबका की माँ। यहाँ से वह दूसरे छोटे कमरे में गया और वहाँ उसने ल्यूबका को देखा। वह फटे-पुरानों चीथड़ों से बना एक रंगीन कम्बल लपेटे सन्दूक़ पर लेटी थी और सोने का ढोंग कर रही थी।

"मेरा घोड़ा कहाँ है?" कम्पाउंडर ने सख़्ती से पूछा।

ल्यूबका हिली-डुली तक नहीं।

"मैं तुझसे पूछ रहा हूँ, मेरा घोड़ा कहाँ है?" उस पर से कम्बल खींचते हुए कम्पाउंडर ने और भी सख़्ती से पूछा, "अरी भूतनी, मैं तुझसे पूछ रहा हूँ।" वह चिल्लाया।

वह कूद कर उठी, घुटनों पर बैठ गयी, एक हाथ से अपनी कमीज़ ठीक करते हुए और दूसरे हाथ से कम्बल पकड़ने की कोशिश करते हुए दीवार से जा चिपटी। उसने बड़ी ही नफ़रत और डर से कम्पाउंडर की तरफ़ देखा। उसकी आँखें एक पिंजरे में क़ैद जानवर की तरह कम्पाउंडर की हर हरकत को बड़ी ही चालाकी और गुस्से से देखने लगीं।

बोल, घोड़ा कहाँ है, वरना मैं तेरा गला घोंट दूँगा!" कम्पाउंडर चिल्लाया।

"बदमाश, दूर हट!" उसने भर्राई आवाज़ में कहा।

कम्पाउंडर ने उसकी कमीज़ छाती के ऊपर से पकड़ी और फाड़ दी। उस वक़्त वह अपने को नहीं रोक पाया और पूरी ताक़त से उससे लिपट गया। गुस्से में काँपती ल्यूबका ने अपने आपको उसकी पकड़ से आज़ाद करने की कोशिश की। एक हाथ से अपनी फटी कमीज़ की जगह को ढका, दूसरे हाथ को छुड़ाया और उसके मुँह पर घूँसा मारा।

दर्द के मारे उसका सिर भन्ना गया, उसके कान झनझना उठे और वह पीछे हटा। इसी बीच ल्यूबका ने एक घूँसा उसकी कनपटी पर मारा। लड़खड़ाते और दरवाज़े की कुंडी पकड़ते हुए, जिससे गिर न जाये, वह उस कमरे की तरफ़ भागा, जिसमें उसका सामान रखा था, फिर बेंच पर लेट गया। थोड़ी देर लेटे रहने के बाद उसने जेब से माचिस की डिब्बी निकाले और बेवजह जलाने-बुझाने और मेज़ के नीचे फ़र्श पर फेंकने लगा और जब तक सारी डिब्बी खाली नहीं हो गयी, यही करता रहा।

इस तरह माचिस को बेवजह जलाने-बुझाने से खिड़की के बाहर की हवा नीली हो गयी, परिन्दे चहचहाने लगे। सिर दर्द कर रहा था, कानों में वैसा ही शोर हो रहा था, मानो इरगुनोव रेल के पुल के नीचे बैठा हो और इसके सिर पर से गाड़ी जा रही हो। किसी तरह उसने फ़रकोट पहना और टोपी पहनी। घोड़े की ज़ीन और ख़रीद का पैकेट उसे नहीं मिले, बैग खाली था जब वह आँगन से अन्दर आ रहा था, तो यूँ ही कोई कमरे में भागा।

कुत्ते से बचने के लिए आतिशदान के कोयले हिलाने वाली लोहे की छड़ लिये वह किचन में गया और दरवाज़े को खुला छोड़ बाहर आ गया। तूफ़ान थम गया था और बाहर सब शान्त था...जब वह दरवाज़े से बाहर आया, तो सफ़ेद खेत मुर्दा दिख रहा था और सुबह के आसमान में एक भी परिन्दा नज़र नहीं आ रहा था। सड़क के दोनों तरफ़ दूर-दूर तक छितरा जंगल नीला हो रहा था।

कम्पाउंडर सोचने लगा, वापस पहुँचने पर हस्पताल में उसका स्वागत कैसा होगा, डॉक्टर उसे क्या कहेगा ? इसके बारे में फ़ौरन कुछ सोचना ज़रूरी था। पहले से सारे सवालों के जवाब सोचने ज़रूरी थे, पर ये सारे ख़्याल उसके दिमाग़ में से फिसले जा रहे थे। वह चल रहा था और ल्यूबका के बारे में सोच रहा था, सोच रहा था, उन आदमियों के बारे में, जिसके साथ उसने रात गुज़ारी थी। उसे याद आ रहा था, कैसे ल्यूबका उसको दूसरी बार मारने के बाद फ़र्श पर कम्बल उठाने के लिए झुकी थी और कैसे उसकी घनी मोटी चोटी फ़र्श को छू रही थी। उसके दिमाग़ में सब कुछ उलटा-पुलटा हो रहा था और वह सोच रहा था, इस दुनिया में इन्सानों को क्यों कम्पाउंडर, महाजन, कारकुन और किसान में बाँटा है, क्यों नहीं है सिर्फ़ आज़ाद और स्वच्छन्द इन्सान ? परिन्दे स्वच्छन्द हैं, जानवर स्वच्छन्द हैं, मैरिक स्वच्छन्द हैं। वे किसी से नहीं डरते और उन्हें किसी की ज़रूरत नहीं है। यह किसने तय किया, किसने सोचा कि सुबह उठना चाहिए, दोपहर में लंच करना चाहिए, रात में सोना चाहिए, यह कि डॉक्टर कम्पाउंडर से ऊँचा होता है। घर में रहना चाहिए और यह भी कि सिर्फ़ अपनी बीवी से ही मोहब्बत करनी चाहिए? बिलकुल उलटा क्यों नहीं, रात में लंच करना चाहिए और दिन में सोना? कितना अच्छा हो, अगर घोड़े के मालिक के बारे में बिना पूछे उस पर सवारी की जाये, शैतान के साथ हवा की तेज़ी से खेतों, खलिहानों, जंगलों में दौड़ा जाये, लड़कियों से प्यार किया जाये और सब लोगों का मज़ाक़ उड़ाया जाये...।

कम्पाउंडर ने छड़ बर्फ़ पर फेंक दी, अपना सिर सफ़ेद ठंडे बर्च के तने पर टिकाया और सोचने लगा। उसके सामने घूम गयी उसकी नीरस ज़िन्दगी, उसकी तनख़्वाह, उसकी मातहती, दवाओं की दुकान, दवाओं के गिलासों और मक्खियों से लगातार बहसें, इन सबसे उसे नफ़रत होने लगी और उबकाई आने लगी।

"कौन कहता है, औरतों के साथ मज़े लूटना पाप है? उसने बड़ी ही उदासी

में अपने आपसे पूछा।...और जो ऐसा मानते हैं, वह कभी मैरिक या कलाशनीकाव की तरह आज़ाद और स्वच्छन्द ज़िन्दगी नहीं जी सके और न ही ल्यूबका से मोहब्बत कर पाये। वह सारी ज़िन्दगी ख़ुशामद करते रहे, भीख माँगते रहे, जीते रहे बिना किसी सन्तुष्टि के और सोते रहे मेंढकों जैसी अपनी बीवियों के साथ।

अपने बारे में उसने यह सोचा कि अब तक अगर वह चोर, उचक्का या कपटी नहीं बना, तो सिर्फ़ इस वजह से कि वह नहीं बन सकता था। उसे ऐसा बनने का मौका ही नहीं मिला।

आधा साल गुज़र गया। जाने क्यों बसन्त में ईस्टर के बाद कम्पाउंडर, जो काफ़ी देर पहले नौकरी से निकाल दिया गया था और बेरोज़गार हो गया था, देर रात गये रेपीन में सराय से बाहर निकला और यूँ ही बेमतलब बाहर सड़क पर घूमने लगा।

चलते-चलते वह खेत में आ गया। वहाँ बसन्त महक रही थी और गर्म और प्यारी हवा बह रही थी। तारोंभरी ख़ामोश रात आसमान से ज़मीन को देख रही थी। हे भगवान, आसमान भी कितना असीम, गहरा और चौड़ा है कि सारी दुनिया को अपने में समेट लिया है, उस पर छा गया है। दुनिया ख़ूबसूरत बनाई है, पर क्यों, कम्पाउंडर यूँ ही सोच रहा था, हम इन्सान एक-दूसरे को शराबियों और होशवालों, बारोज़गार और बेरोज़गारों में बाँट देते हैं? क्यों सम्पन्न और होश में रहने वाला अपने घर में आराम से सोये और शराबी और भूखा ऐसे ही बेघर खेतों में घूमे? जो बेरोज़गार है, वह क्यों बेकार भूखा और नंगे पैर है? यह किसकी सोच थी? परिन्दे और जंगली जानवर बारोज़गार नहीं हैं, पगार भी नहीं पाते, फिर भी क्यों सन्तुष्ट और स्वच्छन्द जीवन जीते हैं? क्यों?

दूर कहीं क्षितिज में एक ख़ूबसूरत जामनी रंग की लकीर खिंच गयी। कम्पाउंडर खड़ा हो देर तक उसे देखता रहा और सोचता रहा, अगर उसने कल किसी अजनबी की सामावार उठा ली और उसे शराबख़ाने में ले गया, तो यह पाप क्यों होगा? क्यों है यह पाप?

सड़क पर उसके पास से दो घोड़ागाड़ियाँ गुज़रीं। एक में एक बुढ़िया सो रही थी और दूसरी में एक बूढ़ा नंगे सिर बैठा था।

''दादाजी, यह किसके यहाँ आग लग गयी है?'' कम्पाउंडर ने पूछा।

''आन्द्रेय चिरीकाव के यहाँ।'' बूढ़े ने जवाब दिया।

तभी कम्पाउंडर को याद आया, जो उसके साथ सर्दियों में छः महीने पहले घटा था इसी घर में और कैसे मैरिक तारीफ़ कर रहा था। उसे याद आया, कैसे बूढ़ी और ल्यूबका शोक मना रही थीं। तभी उसे मैरिक से रश्क हो आया। जब वह शराबख़ानों के रईस मालिकों, जानवरों के व्यापारियों और लुहारों के घरों को देखते हुए सराय में वापस जा रहा था, तो सोच रहा था, कितना अच्छा होता किसी रईस के यहाँ आज की शाम गुज़रती तो!

मोची और शैतान

क्रिसमस की शाम थी। मारिया भट्‌ठी पर बहुत देर से खर्राटे भर रही थी। लैम्प का सारा कैरोसिन जल चुका था, पर फ्लोदर नीलोव अभी तक बैठा काम कर रहा था। उसका बहुत मन कर रहा था कि काम बन्द कर दे और बाहर जाये, पर दो हफ़्ते पहले कलाकोलनी नुक्कड़ वाले ग्राहक ने जूतों का ऑर्डर दिया था। वह कल ही आकर उसे बुरा-भला कह गया था और साथ में हुक्म दिया था कि किसी भी हालत में उसके जूते सुबह तक तैयार हो जाने चाहिए।

"क़ैदियों की सी ज़िन्दगी है", फ्योदर काम करते हुए बड़बड़ायी, "कुछ होते हैं, जो देर तक सोते हैं, कुछ देर तक मस्ती करते हैं और तू है कि हत्यारे की तरह बैठा है और सिलाई कर रहा है।"

कहीं अनजाने में उसे नींद न आ जाये इसलिए वह थोड़ी-थोड़ी देर में मेज़ के नीचे रखी बोतल निकालता और एक घूँट पीता और हर घूँट के बाद अपना सिर हिलाता और ज़ोर से कहता, "ज़रा कोई बताये ये ग्राहक क्यों मस्ती में घूमते रहे और मैं यहाँ बैठा उनके जूते बनाता रहूँ? सिर्फ़ इसलिए कि उनके पास पैसा है और मैं ग़रीब हूँ?"

वह सब ग्राहकों से नफ़रत करता था। ख़ासकर उससे, जो कलाकोलनी नुक्कड़ पर रहता था। इन महाशय का चेहरा हमेशा ज़र्द और उदास रहता था, नाक लम्बी थी। वह बड़ा नीला चश्मा लगाया करता था और आवाज़ उसकी भारी थी। उसका कुलनाम जर्मन था, वह भी ऐसा कि उसको बोला ही नहीं जा सकता था। वह क्या करता था और उसका क्या ओहदा था, कोई नहीं जानता था। जब दो हफ़्ते पहले फ़्योदर उसके यहाँ नाप लेने गया, तो वह ज़मीन पर बैठा तन्दूर में हवा भर रहा था। अभी फ़्योदर नमस्कार भी नहीं कर पाया था कि धौंकनी की मश्क अचानक फूल गयी और सुर्ख लपटों में आग जल उठी। ताज़े मुर्ग़े के परों की भुनने की बू फैल गयी और कमरा घने लाल रंग के धुएँ से भर गया और इसलिए फ़्योदर को छींक आ गयी। घर वापस लौटते हुए वह सोच रहा था, जो ख़ुदा से डरता है, वह ऐसे काम नहीं करेगा।

जब बोतल पूरी ख़त्म हो गयी फ़्योदर ने जूते मेज़ पर रखे और सोचने लगा। उसने अपने भारी सिर को मुट्ठी से ऊपर उठाया और अपनी ग़रीबी और उदास और आशाविहीन ज़िन्दगी के बारे में सोचने लगा, फिर धनवानों, उनके बड़े-बड़े मकानों, उनकी घोड़ागाड़ियों और हज़ारों नोटों के बारे में सोचने लगा। कितना अच्छा होता, अगर इन धनवानों के घरों में दरारें पड़ जातीं, घोड़े घुटकर मर जाते, उनके फरकोट बदरंग हो जाते और हैट सूख जाते! कितना अच्छा होता, अगर धनवान धीरे-धीरे भूखे और ग़रीबों में तबदील हो जाते। वह खुद एक ग़रीब मोची एक धनवान में तबदील हो जाता और तब वह बड़े दिन की शाम पर ग़रीब मोची को बुरा-भला कहता, उसे डाँटता-फटकारता। इस तरह का सपना देखते हुए फ़्योदर को अचानक अपना काम याद आ गया और उसने अपनी आँखें खोल लीं।

"क्या कहानी है?" जूतों को देखते हुए वह सोच रहा था। जूतों के ऊपर का चमड़ा तो कब का तैयार हो गया और मैं हूँ कि सिये जा रहा हूँ। इनको अब ग्राहक के पास ले जाना चाहिए।

उसने जूतों को लाल रूमाल में लपेटा, कपड़े पहने और बाहर चला गया। सुइयों की तरह तेज़ चुभती हुई बर्फ़ पड़ रही थी। बहुत ठंड थी, अँधेरा था, कैरोसिन लैम्प बहुत उदास रोशनी फेंक रहे थे। जाने क्यों सड़क पर कैरोसिन की इतनी तीखी बदबू आई कि फ़्योदर खाँसने लगा और खाँसते-खाँसते हाँफ गया। पुल की तरफ़ जाने वाली सड़क पर धनवान जा रहे थे। हर किसी के हाथ में बहुत-सा खाने का सामान और ढाई सौ ग्राम वोदका थी। घोड़ागाड़ियों की खिड़कियों में और स्लेज से धनवानों की पत्नियाँ उसे देख रही थीं, उसे चिढ़ा रही थीं और हँसते-हँसते कह रही थीं, "भिखारी! भिखारी!"

फ़्योदर के पीछे आ रहे थे छात्र, अफ़सर, महाजन और जनरल उसे चिढ़ा रहे थे, "शराबी! शराबी! मोची! जूते की नोक! भिखारी!"

ये सब उसे ज़लील करने की बात थी, पर फ़्योदर चुप रहा और गुस्से में सिर्फ़ थूकता रहा। जब उसे वारसा का दूसरा मोची कुज़्मा लेबेदनीकी मिला और उसने बताया, "मैंने एक धनवान महिला से शादी कर ली। अब मेरे नीचे मोची काम करते हैं और तू वैसा ही भुक्खड़ और ग़रीब रह गया।" फ़्योदर अपने को काबू में न रख सका और उसे मारने के लिए दौड़ा और तब तक भागता रहा, जब तक वह कलाकोलनी नुक्कड़ नहीं पहुँच गया। उसका ग्राहक कोने से चौथे ब्लॉक में सबसे ऊपर की मंज़िल के फ़्लैट में रहता था। उसके फ़्लैट तक पहुँचने के लिए एक लम्बा और अँधेरा आँगन पार करना पड़ता था और उसके बाद फिसलनभरी हिलती हुई कमज़ोर सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती थीं। जब फ़्योदर उसके घर के अन्दर पहुँचा, तो वह पहले की तरह, यानी दो हफ़्ते पहले की तरह वैसे ही फ़र्श पर बैठा था और कुछ तन्दूर में भून रहा था।

"हुज़ूरे अनवर, आपके जूते लाया हूँ।" फ़्योदर ने बड़ी उदासी में कहा।

ग्राहक उठा और चुपचाप जूते पहनने लगा। फ़्योदर उसे पहनने में मदद करने के लिए एक घुटने पर झुका और उसका पुराना जूता उतार दिया, पर तभी वह उछला और डर के मारे बाहर दरवाज़े की तरफ़ भागा। ग्राहक के इन्सानों के पैर नहीं थे, वे तो घोड़े के खुर थे।

"उफ़," फ़्योदर ने सोचा, "यह बात है!" ऐसे में उसे सबसे पहले छाती पर क्रॉस बनाना चाहिए था, फिर सब कुछ वहीं छोड़कर नीचे भागना चाहिए था, पर तभी उसने सोचा कि शायद शैतान उसे पहली और आख़िरी बार मिल रहा था और उसकी सेवाओं का लाभ न उठाना बेवकूफ़ी होगा। उसने अपने आपको सँभाला और क़िस्मत आज़माने का तय किया। अपने हाथों को कमरे के पीछे बाँधा, जिससे वह क्रॉस न बना पाये। वह बड़े अदब से खाँसा और उसने कहा, "कहते हैं, शैतान से ज़्यादा तो बुरी ताक़त कोई नहीं होती, पर हुज़ूरे अनवर, मैं समझता हूँ कि शैतान सबसे ज़्यादा पढ़ा-लिखा होता है। माफ़ कीजिए, शैतान के खुर और दुम होते हैं, पर दिमाग़ किसी भी छात्र से कहीं ज़्यादा होता है।"

"इस तारीफ़ का शुक्रिया", तारीफ़ सुनकर ग्राहक ने कहा, "शुक्रिया, मोची, तेरी क्या इच्छा है?"

बिना वक़्त गँवाये मोची ने अपनी किस्मत को कोसना शुरू कर दिया। उसने कहा कि वह बचपन से धनवानों से जलता था। उसे हमेशा शरम आती थी। यह देखकर कि सभी आदमी एक सी ज़िन्दगी नहीं जी रहे हैं। सभी बड़े मकानों में नहीं रह रहे हैं और न ही सभी ख़ूबसूरत घोड़ों पर सवारी कर रहे हैं। एक सवाल पूछा जा सकता है, वह ग़रीब क्यों हैं? वह किस तरह वारसा के कुज़्मा लिबेदनीकी से कम है। उसके पास अपना घर है और उसकी बीवी हैट पहनकर घूमती है। उसकी नाक, हाथ, पैर, सिर, कमर सभी तो धनवानों का सा है, तो क्यों वह मेहनत करने के लिए शापित है, जबकि और दूसरे मस्ती करते हैं? मारिया क्यों उसकी पत्नी है? वह औरत, जिसमें से इतर की खुशबू आती है, क्यों उसकी पत्नी नहीं है? रईस ग्राहकों के घरों में अकसर ख़ूबसूरत राजकुमारियाँ देखने में आती हैं, पर वह कभी उसकी तरफ़ कोई ध्यान नहीं देतीं। वह सिर्फ़ हँसा करती हैं और एक-दूसरे के कानों में फुसफुसाया करतीं हैं कि इस मोची की नाक कितनी सुर्ख़ है! यह सच है कि मारिया अच्छी, नेकदिल और कमेरी है, पर वह अनपढ़ है, उसका हाथ सूजा हुआ है और बहुत दर्द करता है और अगर कभी उसके सामने राजनीति या किसी ऐसी ही बुद्धिमानी की बात करनी शुरू कर दी जाये, तो वह एक हंगामा खड़ा कर देती है।"

"तू क्या चाहता है?" बीच में रोकते हुए ग्राहक ने पूछा।

"हुज़ूरे अनवर, शैतान इवानिच, आपका रुतबा बुलन्द रहे, मुझे रईस आदमी बना दो।"

"ठीक है, इसके लिए तुझे अपनी आत्मा मुझे देनी होगी। अभी परिन्दों ने चहचहाना शुरू नहीं किया है, जा और इस काग़ज़ पर लिख दे कि तूने अपनी आत्मा मुझे दी और अपने दस्तख़त कर दे।"

"हुज़ूरे अनवर," फ्योदर ने बड़े अदब से कहा, "जब आपने मुझे जूते बनाने को कहा था, तो मैंने आपसे कोई एडवांस नहीं लिया था। पहले काम पूरा होना चाहिए, तभी पैसे की माँग करनी चाहिए।

"चलो, ठीक है।" ग्राहक मान गया। अचानक तन्दूर में एक सुर्ख़ लपट उठी, घना गुलाबी धुआँ फैल गया और ताज़ा मुर्गे के परों के जलने की बदबू कमरे में भर गयी। धुआँ छँट जाने के बाद फ़्योदर ने अपनी आँखें मलीं और देखा कि वह न तो अब फ़्योदर है और न ही मोची, बल्कि कोई दूसरा ही आदमी है, जिसके गले में माला है, जिसने गोटे की बास्कट और नयी पतलून पहनी हुई है और वह एक बड़ी मेज़ के सामने आरामकुर्सी में बैठा झूल रहा है। दो नौकर उसे खाना खिला रहे थे। अदब से नीचे सिर झुकाए हुए कह रहे थे, "हुज़ूरे अनवर, थोड़ा और खाइए, पेट भर खाइए।"

क्या रईसी है? नौकरों ने भैंसे के गोश्त का एक बड़ा टुकड़ा और खीरे से भरी सूप की प्लेट आगे सरकायी, इसके बाद कढ़ाई में भूनी हुई बतख लाये, थोड़ी देर के बाद सूअर का जैम। यह सब कितना रोचक और अच्छा है! फ़्योदर खाता रहा और हर चीज़ खाने से पहले सबसे अच्छी वोदका पीता रहा, मानो कोई जनरल हो या राजकुमार। सलामी के बाद उसे चर्बी भरा सूप पिलाया गया, फिर सूअर की चर्बी में बनाया गया आमलेट और भुना हुआ लीवर खिलाया गया। उसने सब मज़े ले-लेकर खाया।...और कुछ? उसे फिर खिलाया गया प्याज़ का केक, पिलाया गया क्वास के साथ भाप में बनाया गया शलजम। उसने सोचा, कैसे ऐसा खाना खाने के बाद भी धनवान आदमी मोटे नहीं होते?...खाना हो जाने के बाद शैतान नीला चश्मा पहने हुए प्रकट हुआ, अदब से झुका, "फ़्योदर पेंतलोविच, आप खाने से सन्तुष्ट हैं?"

पर फ़्योदर का पेट इतना अफर गया था कि वह एक शब्द नहीं बोल पाया। यह तृप्ति बड़ी ही भारी और दुखदायक थी। अपने आपको थोड़ा आराम देने के लिए उसने अपने बायें पैर के जूते का मुआयना शुरू किया।

"ऐसे जूतों के लिए मैं कम से-कम साढ़े सात रूबल लेता। यह किस मोची ने बनाये हैं?" उसने पूछा।

"कुज़्मा लिबेदकीन।" कोचवान ने जवाब दिया।

"उस बेवकूफ़ को फौरन तलब किया जाये।"

फौरन वारसा के क़ुज़्मा लिबेदकिन को हाज़िर किया गया। वह बड़े ही अदब से दरवाज़े पर झुका खड़ा रहा और वहीं से पूछा, "क्या हुक्म है, हुज़ूरे अनवर?"

"ख़ामोश!" फ़्योदर चिल्लाया और अपने पैर पटके," बहस करने की ज़रूरत नहीं है और याद रख कि तू सिर्फ़ एक मोची है। बेवकूफ़, तुझे तो जूते सीने भी नहीं आते। मैं तेरी पिटाई कर दूँगा। तू क्यों आया है?"

"पैसे के लिए, हुज़ूर।"

"कौन से पैसे? कैसे पैसे? दफ़ा हो जा! शनिवार को आना। ऐ इन्सान, इसकी गुद्दी पर एक घूँसा मार!"

तभी उसे याद आया, कैसे ग्राहक उससे बदतमीज़ी से बात किया करते थे और तब उसका मन भारी हो जाया करता था। तब उसने अपना मन हलका करने के लिए जेब में से नोटों का बंडल निकाला और उन्हें गिना। नोट बहुत थे पर वह और ज़्यादा चाहता था। नीला चश्मा पहने शैतान एक और पहले से मोटा बंडल ले आया, पर उसे और बड़े बंडल की चाह होने लगी। जितनी ज़्यादा देर तक वह नोट गिनता, तो और ज़्यादा असन्तुष्ट हो जाता।

शाम में शैतान लाल कपड़ों में एक लम्बी और गदरायी औरत ले आया और कहा, "यह उसकी नयी पत्नी है।" रात तक वह उसे चूमता रहा और केक खाता रहा। रात में वह गुदगुदे और नर्म बिस्तर पर लेट गया। रात-भर करवटें बदलता रहा, पर किसी भी तरह सो नहीं पाया। वह बहुत बेचैन था।

"बहुत पैसा है", उसने अपनी पत्नी से कहा, "ध्यान रख, चोर चुरा ले जायेंगे। तू मोमबत्ती लेकर जा और सारा घर देख आ।"

सारी रात वह नहीं सोया और बीच-बीच में उठकर देखता रहा, सन्दूक़ ठीक है या नहीं। पौ फटते ही सुबह की प्रार्थना के लिए गिरजाघर जाना था। गिरजाघर में तो ग़रीब-अमीर सभी का बराबर का दर्ज़ा होता है। जब फ़्योदर ग़रीब था, तो यह प्रार्थना किया करता था, "हे ईश्वर, मुझ पापी को माफ़ कर!" अब अमीर होने के बाद भी वही प्रार्थना कर रहा था। आख़िर फ़र्क़ क्या है? मरने के बाद अमीर फ़्योदर को सोने और हीरों में तो नहीं दफ़न करेंगे; करेंगे तो इसी काली मिट्टी में, जिसमें गरीब को दफन करते हैं। फ़्योदर भी उसी आग में जलेगा, जिसमें और दूसरे मोची। फ़्योदर को बहुत शरम आई और तभी उसका सारा बदन अकड़ गया और प्रार्थना के बजाय उसके मन में नोटों से भरे सन्दूक़, चोरों और अपनी बिकी और मरी हुई आत्मा के बारे में ख़्याल आये।

गिरजाघर से वह गुस्से से भरा निकला। इन बुरे ख़्यालों को मन से निकालने के लिए उसने हमेशा की तरह ज़ोर से गाना शुरू कर दिया। उसने गाना शुरू किया ही था कि तभी पुलिसमैन भागता हुआ उसके पास आया और झुककर अभिवादन करके कहा, "ऐ बैरन, कुलीनों को सड़क पर गाना मना है। आख़िर आप कोई मोची नहीं हैं।"

फ़्योदर ने अपनी कमर बाड़ से सटाई और सोचने लगा, किस तरह इन ख़्यालों से छुटकारा पाऊँ?

"ऐ बैरन, दरबान ज़ोर से चिल्लाया, "बाड़ से ज़्यादा न सटें, फरकोट गन्दा हो जायेगा।"

फ़्योदर फिर पास की दुकान में गया और अपने लिए सबसे अच्छा हारमोनियम खरीद लिया, फिर वह सड़क पर चलने लगा और बजाने लगा। अब आते-जाते उसकी तरफ़ उँगलियाँ उठाते और हँसने लगते।

"यह भी कुलीन है।" कोचवान उसका मज़ाक़ उड़ा रहे थे, "कोई मोची लगता है...।"

"कुलीन को बदतमीज़ी नहीं करनी चाहिए। पुलिसमैन ने उससे कहा, "इससे अच्छा तो आप किसी पब में चले जायें!"

"हुज़ूर ईसा मसीह के नाम पर भीख दे दीजिए।" भिखारियों ने उसे चारों तरफ़ से घेरते हुए कहा, "कुछ भीख दे दीजिए।"

पहले जब वह मोची हुआ करता था, तो भिखारी उसकी तरफ़ देखते तक नहीं थे और अब उसे रास्ता नहीं दे रहे हैं।

घर पर हरा ब्लाउज़ और लाल स्कर्ट पहने उसकी नयी पत्नी ने उसका स्वागत किया। वह उसे प्यार करना चाहता था, पर तभी उसकी कमर पर एक घूँसा मारने के लिए उसने उसे घुमा दिया और पत्नी ने बड़े ही गुस्से से कहा, "मज़दूर! बदतमीज़! बात करने की भी तमीज़ नहीं है। अगर प्यार करते हो, तो हाथ चूमो। धक्का-मुक्की करना मना है।"

"उफ, ज़िन्दगी आज़ाब हो गयी है।" फ़्योदर सोच रहा था, "इन्सान जीते हैं, पर तू गाना नहीं गा सकता, हारमोनियम नहीं बजा सकता, औरतों के साथ मज़ाक़ नहीं कर सकता...।"

अभी वह पत्नी के साथ चाय पीने बैठा ही था कि नीले चश्मे में शैतान आ गया और कहने लगा, "सो, फ़्योदर पन्तेलिच, मैंने अपना वादा पूरा किया। अब आप इस काग़ज़ पर दस्तख़त कर दीजिए और अपनी आत्मा मुझे दे दीजिए। अब आप समझ गये हैं, अमीर होने का क्या मतलब होता है?"

और शैतान उसे नर्क में ले गया सीधे भट्ठी में और उसके चारों तरफ़ भूत इकट्ठे हो गये और चिल्लाने लगे, "बेवकूफ़! बदतमीज़! गधा!"

नर्क में कैरोसीन की बदबू उसका दम घोंट रही थी।

और तभी अचानक सब कुछ गायब हो गया। फ़्योदर ने आँखें खोलीं और देखा, वही अपनी मेज़ और देखे, वही जूते और टीन का लैम्प। लैम्प का शीशा काला हो गया था और हलकी लौ में से बदबूदार धुआँ आ रहा था। वैसे ही, जैसे भट्ठी के पाइप में से आता है। साथ ही नीला चश्मा पहने एक ग्राहक खड़ा गुस्से

में चिल्ला रहा था, "बेवकूफ़! बदतमीज़! गधा! मैं अभी तुझे बताता हूँ, बेवकूफ़! दो हफ्ते पहले ऑर्डर दिया था और जूते अभी तक तैयार नहीं हैं। तू समझता है, मेरे पास तेरे चक्कर लगाने के लिए वक़्त ही-वक़्त है? बदमाश! धोखेबाज़!"

फ़्योदर ने सिर हिलाया और जूते सीने लगा। ग्राहक देर तक उसे धमकाता रहा और गालियाँ देता रहा। आख़िर जब उसका गुस्सा ठंडा हुआ, तो फ़्योदर ने बड़े अदब से पूछा, "हुज़ूर, आप क्या करते हैं?"

"मैं आतिशबाज़ी बनाता हूँ। मैं आतिशबाज़ हूँ।"

सुबह की प्रार्थना का घंटा बज उठा। फ़्योदर ने उसके जूते दिये, पैसे लिये और गिरजाघर की तरफ़ चल दिया।

सड़क पर आगे और पीछे रीछ की खाल से ढकी स्लेज खड़ी थीं। पटरी पर ग़रीब आदमी, व्यापारी, अफ़सर और कुलीन साथ-साथ चल रहे थे, पर फ़्योदर अब अपनी क़िस्मत पर न तो रो रहा था और न ही अफ़सोस कर रहा था। उसे लगा कि ग़रीब और अमीर एक से ही बेवकूफ़ हैं। एक स्लेज में बैठकर आते हैं और दूसरे ज़ोर से गा सकते हैं, हारमोनियम बजा सकते हैं और देखा जाये, तो दोनों का अन्त एक ही है। एक क़ब्र और जीवन में ऐसा कुछ भी नहीं है, जिसके लिए शैतान को अपनी आत्मा का एक छोटा-सा हिस्सा भी बेचा जा सके।

सफ़ेद माथा[1]

भूखी मादा भेड़िया शिकार करने के लिए उठी। उसके बच्चे, कुल तीन, गठरी बने एक-दूसरे को गर्माते हुए गहरी नींद में सो रहे थे।

बसन्त का महीना मार्च शुरू हो गया था, पर रातों को अभी भी पेड़ दिसम्बर की तरह ठंड से काँपा करते थे और ज़बान बाहर निकालने की देर भर थी कि वह ऐंठने लगती थी। मादा कमज़ोर और शक्की थी। वह थोड़े से शोर तक से काँप उठती थी और हमेशा सोचा करती थी कि उसकी ग़ैरमौजूदगी में कहीं कोई बच्चों को चोट न पहुँचा जाये। इन्सान के पैरों और घोड़ों के खुरों की महक, फ़ायरवुड के ढेर और खाद बिखरा अँधेरा रास्ता उसे डराया करते थे। उसे लगता, मानो पेड़ों के पीछे अँधेरे में लोग खड़े हों और जंगल में उस पार कुत्ते भौंक रहे हों।

वह अब कोई जवान नहीं थी और सूँघने की उसकी शक्ति कमज़ोर हो गयी थी, इसीलिए ऐसा भी होता था कि लोमड़ी के पैरों के निशान उसे कुत्ते के लगते और तो-और इस कमज़ोरी की वजह से कभी-कभी तो वह रास्ता भूल जाया करती थी, जो पहले कभी नहीं हुआ करता था। सेहत कमज़ोर होने की वजह से पहले की तरह वह अब बछड़ों और मोटी भेड़ों का शिकार नहीं किया करती थी, घोड़ों और उसके बच्चों से वह दूर से ही हट जाया करती थी, सिर्फ़ सड़े-गले मांस को ही उठाने की कोशिश किया करती थी। ताज़ा मांस तो उसे मुश्किल से ही मिल पाता था। वह भी बसन्त में ही, जब वह खरगोशनी के पीछे-पीछे भागते हुए उससे उसके बच्चे छीन लिया करती थी या जब वह इन्सानों की मवेशीशाला में पहुँच जाया करती, जहाँ मेमने हुआ करते थे।

उसकी गुफ़ा से दो मील दूर सड़क पर एक शेड था। वहाँ सत्तर साल का बूढ़ा चौकीदार इगनात रहा करता था। वह हमेशा खाँसा करता था और अपने आपसे बातें करता रहता था। अक्सर वह रातों को सोया करता था, दिन में एकनाली की

---

1. यह पहली और एकमेव कहानी है, जो चेखव ने 1895 में बच्चों के लिए लिखी और बच्चों की ही पत्रिका में छपी।

बन्दूक लिये जंगल में घूमा करता था और ख़रगोशों को सीटी मारा करता था। हो-न हो वह पहले कहीं मैकेनिक था, क्योंकि हर बार रुकने से पहले अपने आपको चिल्ला कर कहा करता था, ''स्टॉप, मशीन!'' और फिर चलने से पहले कहा करता था, ''फुल स्पीड!'' उसके पास किसी अनजानी नस्ल का एक खूँखार काला कुत्ता था, जिसका नाम आरापका था। जब वह भागते-भागते उससे बहुत दूर निकल जाता, तो वह चिल्लाकर कहा करता, ''बैकवर्ड मार्च।'' कभी-कभी वह गाया करता था, गाते-गाते बहुत हिला करता था, अकसर गिर जाया करता था (मादा भेड़िया सोचा करती थी कि वह तेज़ हवा की वजह से गिर जाया करता था) और तब वह चिल्लाया करता था, ''पटरी से उतर गया!''

मादा को याद आया कि गर्मियों और पतझर में शेड के पास दो सफ़ेद भेड़ें चर रही थीं और जब वह उनके आस-पास भाग रही थीं, तो उसे लगा, मानो वे मवेशीशाला में मिमिया रही हों। आज शेड के पास आते हुए उसे महसूस हुआ कि मार्च शुरू हो गया है और मौसम को देखते हुए मेमने ज़रूर अन्दर होंगे। उसे भूख परेशान किए हुए थी वह सोच रही थी, कैसे इस मेमने को खाते हुए उसके मुँह में पानी आ जायेगा और इस ख़्याल भर से उसके दाँत बजने लगे और अँधेरे में आँखें दो मोमबत्तियों की तरह रोशन हो गयीं।

इगनाता की झोंपड़ी, उसका शेड मवेशीशाला और कुआँ बड़ी ऊँची बर्फ़ के ढेर से घिरे हुए थे। सब तरफ़ खामोशी थी। आरापका शेड के नीचे सो रहा था। मादा भेड़िया बर्फ़ के ढेर से मवेशीशाला पर चढ़ गयी और अपने पंजों और मुँह से घास-फूस की छत को कुरेदने लगी। घास क्योंकि सड़ गयी थी, सूख गयी थी, मादा-भेड़िया गिरते-गिरते बची। अचानक उसे गर्म भाप, भेड़ और बकरी के दूध की महक आयी। नीचे ठंड महसूस करते हुए मेमना मिमियाने लगा। छेद में से कूदने के बाद मादा भेड़िया अगले पंजों और छाती के बल किसी नर्म और गर्म चीज़ पर गिरी, हो-न हो भैंस ही होगी। इसी वक़्त अचानक शेड में किसी के चिल्लाने, किसी के भौंकने और किसी की गूँजती हुई आवाज़ सुनाई पड़ी। भेड़ें दीवार से सट गयीं और डरी हुई मादा भेड़िया ने, जो भी सामने पड़ा, उसे अपने दाँतों में दबाया और भाग गयी...।

वह अपनी पूरी ताकत से भागी जा रही थी। इसी वक़्त आरापका ने भेड़िये की गन्ध सूँघते ही पागलों की तरह भौंकना शुरू कर दिया गन्ध मुर्ग़ीख़ाने में मुर्गियों ने चिल्लाना शुरू कर दिया और इगनात ने छत पर आकर चिल्लाना शुरू कर दिया, ''फुल स्पीड! सीटी के पीछे भाग!''

उसने कार की तरह सीटी बजाई और फिर हो-हो-हो-हो! सारे जंगल में शोर गूँज गया।

जब धीरे-धीरे सब शान्त हो गया, मादा भेड़िया भी शान्त हो गयी, तो उसने

महसूस करना शुरू किया कि उसका शिकार, जिसे उसने दाँतों में दबा रखा था और बर्फ़ पर घसीटती हुई लायी थी, वह इस उम्र के मेमने से ज़्यादा भारी और बड़ा था। गन्ध भी कोई और ही आ रही थी और आवाज़ें भी अजीब-सी थीं...। मादा भेड़िया रुकी और थोड़ा आराम करने और खाना शुरू करने के लिए उसने अपना बोझा बर्फ़ पर रख दिया। तभी अचानक घिन के साथ पीछे कूदी। यह मेमना नहीं पिल्ला था। काला, बड़े माथे और पैरों वाला मोटा पिल्ला था। उसके पूरे माथे पर वैसा ही सफ़ेद धब्बा था, जैसा कि आरापका के माथे पर था। वह हावभाव से बदतमीज़, दोगला कुत्ता था। अपनी जख्मी और मांसल कमर को चाट रहा था और मादा भेड़िये पर भौंक रहा था। वह कुत्ते की तरह गुर्रायी और उससे दूर भाग गयी। वह उसके पीछे भागने लगा। उसने मुड़कर देखा और अपने दाँत भींचे वह पेशोपश में रुक गया और शायद यह सोचकर कि वह उसके साथ खेल रही है, उसने शेड की तरफ़ मुँह किया और .ख़ुशी में भौंकने लगा मानो अपने और मादा भेड़िया के साथ खेलने के लिए अपनी माँ आरापका को बुला रहा हो।

दिन निकल आया था और जब मादा भेड़िया पेड़ के पास पहुँची, तो हर टहनी साफ़-साफ़ हिलती दिखाई दे रही थी। काला मुर्ग़ा जाग चुका था और .ख़ूबसूरत परिन्दे चहचहा रहे थे और पिल्ले के भौंकने से इधर-उधर कूद रहे थे।

"ये मेरे पीछे-पीछे क्यों भाग रहा है?" मादा भेड़िया ने बड़ी निराशा में सोचा, "हो-न हो वह चाहता है कि मैं उसे खा जाऊँ।"

वह अपने बच्चों के साथ एक खड्ड में रहती थी, जो गहरा नहीं था। तीन साल पहले बहुत ज़ोर के तूफ़ान के वक़्त एक बड़ा चीड़ का पेड़ जड़ से उखड़ गया था और यह खड्ड बन गया था। उसकी तह में अब भी उसके पुराने पत्ते और काई पड़ी थी। वहीं भैंसे की हड्डियाँ और सींग पड़े थे, जिनसे बच्चे खेला करते थे। वे जागे हुए थे और एक से दिखने वाले तीनों के-तीनों अपने खड्ड के किनारे खड़े घर लौटती माँ को देख अपनी दुमें हिला रहे थे। उन्हें देखते ही पिल्ला दूर ही रुक गया और देर तक उन्हें देखता रहा। यह जानकर कि वे भी उसे उतने ही गौर से देख रहे थे, वह ग़ुस्से में उन पर भौंकने लगा, वैसे ही, जैसे अजनबियों पर भौंका करता था।

दिन चढ़ आया था, सूरज भी निकल आया था, चारों तरफ़ बर्फ़ चमक रही थी। वह दूर खड़ा भौंके ही जा रहा था। भेड़िये के बच्चे अपने पंजे माँ के मोटे पेट में गड़ाते हुए उसका दूध पी रहे थे और वह इस वक़्त घोड़े की सूखी और सफ़ेद हड्डी को टूँग रही थी। वह भूख से परेशान थी। पिल्ले के भौंकने से उसका सिर दर्द कर रहा था, बिन बुलाये मेहमान पर झपट पड़ने और उसके टुकड़े-टुकड़े कर देने का उसका मन कर रहा था।

आख़िर पिल्ला थक गया और उसकी आवाज़ भर्रा गयी। यह जानकर कि

उससे कोई डर नहीं रहा था और तो-और उस पर कोई ग़ौर तक नहीं कर रहा था, उसमें बहुत हिम्मत आ गयी। कभी वह मादा भेड़िये के बच्चों के पास आ बैठता, तो कभी उनके सामने कूद पड़ता। अब दिन के उजाले में उसे साफ़-साफ़ देखा जा सकता था। सफ़ेद माथा उसका काफ़ी चौड़ा था, माथे पर एक गुमड़ा था, जैसा कि अकसर बेवकूफ़ कुत्तों के माथे पर हुआ करता था। आँखें उसकी छोटी, नीली और उदास थीं और शक्ल बिलकुल बेवक़ूफ़ों की सी थी। भेड़िये के बच्चों के पास आते हुए उसने अपने चौड़े पंजे आगे किये, उन पर अपना मुँह रखा और मिनमिनाने लगा, "मीचा-मीचा...गा-गा-गा।"

भेड़िये के बच्चे कुछ नहीं समझे पर पूँछें हिलाने लगे। तब पिल्ले ने अपना पंजा एक भेड़िये के बच्चे के सिर पर दे मारा। भेड़िये के बच्चे ने भी उसके सिर पर अपना पंजा मारा। पिल्ला उसके एक तरफ़ हो गया और पूँछ हिलाते हुए तिरछी नज़र से उसे देखने लगा, फिर अचानक वह अपनी जगह से कूदा और बर्फ़ पर कई चक्कर खा गया। भेड़िये के बच्चे उसके पीछे भागे, वह कमर के बल गिर गया। उसने अपने पैर ऊपर कर दिये और वे तीनों ख़ुशी में गुर्राते हुए उस पर झपट पड़े। उसे प्यार में काटने लगे। ऊँचे चीड़ के पेड़ पर कौए बैठे थे और ऊपर से इस लड़ाई को देख रहे थे। वे काफ़ी परेशान थे। सब तरफ़ ख़ुशी और शोर था। बसन्त का सूरज गर्मा गया था और परिन्दे तूफ़ान से उखडे पेड़ के बीच में से उड़ते हुए सूरज की रोशनी में हीरे जैसे चमक रहे थे।

आमतौर पर मादा भेड़िया अपने बच्चों को शिकार करना सिखाया करती है। वह उन्हें शिकार से खेलने देती है और अब जब भेड़िये के बच्चे जमी हुई बर्फ़ पर पिल्ले के पीछे भाग रहे थे और उससे लड़ रहे थे, तो मादा भेड़िया सोच रही थी, "ठीक है, सीखने दो। ऐसे ही सीख जायेंगे।"

थोड़ी देर खेल चुकने के बाद, भेड़िये के बच्चे खड्ड में वापस आ गये और सो गये। पिल्ले को अब थोड़ी भूख सता रही थी, पर थोड़ी देर में उसने भी वैसे ही धूप में अँगड़ाई ली और सो गया। जागने के बाद वे फिर आपस में खेलने लगे।

सारा दिन और सारी शाम मादा भेड़िया को कल रात में मेमने के मिमियाने और बकरी के दूध की गन्ध की याद आती रही। भूख के मारे वह बार-बार अपने दाँत भींच रही थी और गुस्से से उस पुरानी हड्डी को टूँग रही थी, यह सोचकर कि वह वही मेमना था। भेड़िये के बच्चे माँ का दूध पी रहे थे। भूखा पिल्ला चारों तरफ़ भाग रहा था और बर्फ़ को सूँघ रहा था।

खा जाऊँ इसको। मादा भेड़िये ने तय किया।

वह उसके करीब गयी, पर वह उसका मुँह चाटने लगा और काटने लगा यह सोचकर कि वह उसके साथ खेलना चाहती है। पहले तो वह कुत्ता भी खा जाया करती थी और इस पिल्ले में से कुत्ते के मांस की गन्ध भी आ रही थी, पर कमज़ोरी

की वजह से वह इस गन्ध को बर्दाश्त नहीं कर पा रही थी। उसे घिन आने लगी और वह उससे दूर हट गयी...।

रात में कुछ ठंड हो गयी। पिल्ला बोर हो गया और अपने घर चला गया।

जब भेड़िये के बच्चे गहरी नींद में सो गये, तो मादा भेड़िया फिर शिकार करने निकली। कल रात की तरह ही आज भी हलका-सा शोर उसे डरा देता था, उसे घास, झाड़ियाँ, अकेली खड़ी काली जम्पर की दूर से इन्सान लगने वाली झाड़ियाँ सभी डरा देते थे। वह सड़क के किनारे-किनारे जमी हुई सख़्त बर्फ़ पर भाग रही थी। अचानक दूर सड़क पर कुछ काला धब्बा-सा चमका। उसने अपनी देखने और सुनने की शक्ति पर ज़ोर डाला। असल में कोई आगे-आगे जा रहा था और सधे हुए कदमों तक की आवाज़ सुनाई पड़ रही थी। कहीं यह बिज्जू तो नहीं? बड़ी सावधानी से, साँस रोककर और भी किनारे होकर उसने उस काले धब्बे को पार किया, फिर मुड़कर देखा और उसे पहचान गयी। यह आहिस्ता-आहिस्ता चलता हुआ अपने शेड को लौटता हुआ सफ़ेद माथा वही पिल्ला था।

"कहीं फिर से यह मुझे परेशान न कर दे" मादा भेड़िये ने सोचा और आगे भाग गयी।

शेड पास ही था। वह फिर बर्फ़ से होती हुई मवेशीशाला पहुँची। कल का छेद फूस से भर दिया गया था और छत पर दो नयी सी रस्सियाँ लटक रही थीं। मादा भेड़िये ने जल्दी-जल्दी पंजों और मुँह से काम करना शुरू कर दिया और काम करते हुए यह भी देखती रही, कहीं वह पिल्ला फिर से तो नहीं आ गया। अभी गर्म भाप और गोबर की गन्ध आयी ही थी कि पीछे से खुशीभरी भौंकने की आवाज़ सुनाई पड़ी। वह पिल्ला वापस आ गया था। मादा भेड़िये की तरफ़ छत पर कूदा, फिर छेद में से, अपने आपको घर में महसूस करते हुए, गर्माई में अपनी भेड़ों को पहचान कर और भी ज़ोर से भौंकने लगा। शेड के नीचे सोयी आरापका जाग गयी, भौंकना शुरू कर दिया, मुर्ग़ियाँ शोर करने लगीं और जब तक छत पर इगनात अपनी एकनाली बन्दूक के साथ नज़र आया, तब तक डरी हुई मादा भेड़िया शेड से दूर भाग गयी।

"भाग!" इगनात ने सीटी बजायी, "भाग! पूरे ज़ोर से पीछे भाग।" उसने अपनी बन्दूक चलायी, पर बन्दूक ने मिसफायर किया। उसने दुबारा चलायी, दुबारा मिसफायर हो गया। तीसरी बार चलायी, तभी एक बड़ा आग का गोला बन्दूक की नाली में से बाहर आया और कान बहरे कर देने वाली आवाज़, "बू! बू!" सुनाई पड़ी। उसके कन्धे को बड़ा झटका लगा। एक हाथ में बन्दूक और दूसरे में फावड़ा लिये वह कान बहरे करने वाले शोर की वजह ढूँढ़ने चल पड़ा...।

थोड़ी देर के बाद वह अपनी झोंपड़ी में वापस आ गया।

"कौन था?" भर्राई आवाज़ में उसके यहाँ उस रात रुके सैलानी ने पूछा।

उसकी शोर की वजह से आँख खुल गयी थी।

"कोई नहीं...।" इगनात ने जवाब दिया। बेकार की बात है। हमारा सफ़ेद माथा बकरियों के गर्म बाड़े में सोने के लिए घुस गया। उसको इतनी समझ नहीं है कि छत से कूदने के बजाय दरवाज़े से अन्दर जाना चाहिए। कल रात छत पर बैठा रहा। बाद में बदतमीज़ घूमने चला गया। अभी वापस आया और फिर से छत पर कूद रहा था।

"बेवकूफ़!"

"फिर माथे में स्प्रिंग घुस गया। बेवकूफ़, मौत मुझे अच्छी नहीं लगती," इगनात ने भट्ठी के पास रेंगते हुए कहा, "हे ईश्वर, सुबह जल्दी उठना है, चलो अभी सो जायें...।"

सुबह उसने सफ़ेद माथे को अपने पास बुलाया, उसके कान ज़ोर से मरोड़े और उसको सज़ा देते हुए एक ही बात दोहराता रहा, "दरवाज़े से अन्दर जा! दरवाज़े से अन्दर जा! दरवाज़े से अन्दर जा!"

थियेटर के बाद

नादया ज़िलेनीना ने अपनी माँ के साथ थियेटर से वापस आने के बाद जहाँ इवगेनी अनेगिन देखा था, जल्दी-जल्दी अपने कपड़े फेंके, टॉप उतार दिया और ख़ाली एक स्कर्ट और सफ़ेद चोली में फौरन मेज़ पर वैसा ही ख़त लिखने, जैसा तात्याना ने लिखा था, बैठ गयी।

मैं तुमसे प्यार करती हूँ। पर तुम मुझसे प्यार नहीं करते।

उसने यह लिखा और हँसने लगी।

वह सिर्फ़ सोलह साल की थी और उसने अभी तक किसी से प्यार नहीं किया था। जानती थी कि फौज़ी अफ़सर गोरनी और स्टूडेंट गूज़देव उससे प्यार करते थे, लेकिन ओपेरा के बाद उसे उनके प्यार में शक करने का मन करने लगा। किसी की प्रेमिका न होना और दुखी होना, यह सब कितना रोचक है। जब एक बहुत प्यार करता हो और दूसरा पूरी तरह उदासीन हो, तो इसमें कहीं सुन्दरता, काव्यात्मकता और हृदयस्पर्शता निहित होती है। अनेगिन इसलिए मन को भाता है, क्योंकि वह क़तई प्यार नहीं करता और तात्याना इसलिए मन को भाती है, क्योंकि वह बहुत शिद्दत से प्यार करती है और अगर वह दोनों एक-दूसरे से बराबर का प्यार करते और .ख़ुश होते, तो शायद यह सब बहुत ही नीरस हो जाता।

बन्द करिए मुझे यकीन दिलाना कि आप मुझसे प्यार करते हैं, फौज़ी गोरनी के बारे में सोचते हुए नादया लिख रही थी, मैं आपका यक़ीन नहीं करूँगी। आप बहुत समझदार, संजीदा, पढ़े-लिखे प्रतिभावशाली इन्सान हैं और हो सकता है, एक उज्ज्वल भविष्य आपका इन्तज़ार कर रहा हो, पर मैं एक नीरस और तुच्छ लड़की हूँ और आप यह अच्छी तरह से जानते हैं कि मैं आपकी ज़िन्दगी में सिर्फ़ एक रुकावट, एक बोझ बनकर रह जाऊँगी। सच है, आप मेरी तरफ़ आकर्षित हैं और आप सोचते हैं कि मुझमें आपने अपना आदर्श पा लिया है, पर यह आपकी ग़लती थी और आज आप मायूसी में अपने आप से .ख़ुद पूँछ रहे हैं, क्यों मैं इस लड़की से मिला? आपकी भलमनसाहत ही आपको यह मानने से रोक रही है।...

नादया को अपने आप पर तरस आ गया। वह रोने लगी और रोते-रोते लिखती रही–

मैं अपनी माँ और भाई को नहीं छोड़ सकती। अगर उन्हें छोड़ सकती, तो कब की नन बन गयी होती और कहीं दूर चली गयी होती। आप भी मुझसे आज़ाद हो जाते और दूसरी लड़की से प्यार करने लगते। काश, मुझे मौत आ जाये!

आँसुओं के बीच लिखे हुए को पढ़ना नामुमकिन था। मेज़, फ़र्श और छत पर छोटे-छोटे इन्द्रधनुष काँप रहे थे, मानो नादया प्रिज़्म में से देख रही हो।...और लिख पाना नामुमकिन था। उसने कुर्सी की पीठ पर अपनी कमर टिका दी और गोरनी के बारे में सोचने लगी।

हे भगवान, आदमी कितने लुभावने और रोचक होते हैं! नादया को याद आया कि फौज़ी के चेहरे पर कितने मृदु, सुन्दर और कौतूहलपूर्ण भाव हुआ करते थे, जब उससे संगीत के बारे में कोई बहस हुआ करती थी और वह कितनी कोशिश किया करता था कि बहस के दौरान उसकी आवाज़ में कहीं कोई आवेश न दिखाई पड़ जाये। उस समाज में, जिसमें सर्द ग़ुरूर और उदासीनता को शालीनता और नैतिकता के लक्षण माने जाते थे, उसमें अपने आवेश और गुस्से को छिपाना ज़रूरी माना जाता था। वह छिपाता भी था, पर छिपा नहीं पाता था। सब अच्छी तरह से जानते थे कि संगीत से उसे बेहद प्यार था। संगीत के बारे में बेअन्त बहसें, नाजानकारों के साहसपूर्ण मत उसे हमेशा परेशान कर देते थे। ऐसे मौकों पर वह हमेशा गुस्सा हो जाता और ख़ामोश हो जाया करता था। वह बहुत अच्छा पिआनो बजाता है, बिलकुल एक मँजे हुए पिआनिस्ट की तरह और अगर वह फौज़ी अफसर न होता, जो ज़रूर एक मशहूर पिआनिस्ट होता।

आँखों के आँसू सूख गये थे। नादया को याद आया कि गोरनी ने सिम्फनी की उस शाम उसके प्रति अपने प्यार का इज़हार किया था और नीचे ओवरकोट टाँगने के काउंटर के पास, जहाँ सब तरफ़ से हवा आ रही थी, एक बार फिर से अपने प्यार का इज़हार किया था।

मैं बहुत .ख़ुश हूँ कि आख़िरकार स्टूडेंट गूज़देव से आपकी जान-पहचान हो ही गयी, वह लिख रही थी, वह बहुत ही ज़हीन इन्सान है और शायद आपको अच्छा भी लगता है। कल वह हमारे यहाँ आया था और दो घंटे बैठा रहा। हम सब सातवें आसमान पर थे। मुझे अफसोस हुआ कि आप हमारे यहाँ नहीं आये। उसने बहुत अच्छी बातें कीं।

नादया ने अपने हाथ मेज़ पर रख दिये और उन पर अपना सिर रख दिया। उसके घने बालों ने ख़त को ढक दिया। उसे याद आया कि स्टूडेंट गूज़देव भी उससे प्यार करता है और उसे भी ऐसे ही ख़त का हक़ है, जैसा मैंने गोरनी को लिखा है। वैसे गूज़देव को उससे अच्छा ख़त लिखना बेहतर नहीं होगा। बिना किसी वजह के उसका दिल खुशी से भर गया। पहले तो यह खुशी बहुत छोटी थी, रबड़ की गेंद की तरह दिल में उछल रही थी, पर फिर वह और बड़ी और चौड़ी हो गयी,

एक लहर की तरह बाहर आने को बेचैन। नादया गोरनी और गूज़देव को भूल गयी। उसके ख़्याल गड्डमड्ड हो गये पर खुशी थी, कि बढ़ती ही जा रही थी, छाती से बाहर उसके हाथों और पैरों में आ गयी थी। उसे लगा कि एक हलका हवा का झोंका आया और उसके बालों को सहला कर चला गया। ख़ामोश हँसी ने उसके कन्धे कँपा दिये। मेज़, लैम्प पर का शीशे का शेड भी काँप गये और उसकी आँखों के आँसू ख़त पर बिखरने लगे, पर इस हँसी को रोकने की ताक़त उसमें नहीं थी और अपने आपको यह साबित करने के लिए कि वह बेवजह नहीं हँस रही थी, वह कुछ मज़ाकिया याद करने की कोशिश करने लगी।

"पूडल कितना मज़ाकिया है!" यह महसूस करते हुए कि हँसते-हँसते उसकी साँस रुक जायेगी, उसने कहा, "पूडल कितना मज़ाकिया है!"

उसे याद आया, कैसे कल शाम चाय के बाद गूज़देव मैक्सीम पूडल के साथ खेल रहा था, फिर उसने एक बहुत ही समझदार पूडल के बारे में बताया, जो एक कौए को अपने घर के आँगन में से निकाल रहा था, पर कौए ने उसे मुड़कर देखा और उससे कहा, "अरे, बदमाश!"

पूडल नहीं जानता था कि उसका पाला एक समझदार कौए से पड़ा था, डर गया, एक किनारे हो गया और फिर भौंकने लगा।

"नहीं, मैं गूज़देव से ही प्यार करूँगी।" नादया ने तय किया और ख़त फाड़ दिया।

तब वह स्टूडेंट, उसके प्यार और अपने प्यार के बारे में सोचने लगी, पर हुआ यह कि सारे ख़्याल उसके दिमाग़ में बिखर गये और वह सबके बारे में सोचने लगी, माँ, सड़क, पेन्सिल, पिआनो वगैरह-वगैरह। वह बड़ी ख़ुशी में सोच रही थी। उसने पाया कि सभी कुछ ठीक था, पर खुशी ने उससे कहा कि यही अन्त नहीं है। थोड़ा इन्तज़ार करो। इससे भी ज़्यादा खुशी आयेगी। जल्दी ही बसन्त आयेगा, फिर गर्मी। माँ के साथ गरबीक जाना है। गोरनी छुट्टी पर आयेगा, वह उसके साथ बग़ीचे में घूमेगा और उसका ख़्याल रखेगा। गूज़देव भी आयेगा। वह उसके साथ क्रोकेट और स्कीटल्स खेलेगा, उससे रोचक और ज़हीन बातें करेगा। उसे अचानक चाह होने लगी बग़ीचे, अँधेरों, साफ़ आसमानों और तारों की, फिर उसके कन्धे हँसी के मारे काँप उठे। उसे लगा कि कमरे में पोलीनिया की महक आ रही है और मानो किसी ने एक छड़ी खिड़की पर मारी हो।

वह अपने पलंग पर बैठ गयी। सिर से पैर तक सराबोर कर देने वाली इस बड़ी खुशी के साथ क्या करे? उसकी समझ में नहीं आ रहा था। उसने अपने पलंग के सिरहाने टँगी मूर्ति को देखा और कहा, "हे भगवान! हे भगवान! हे भगवान!"

निर्वासन में

बूढ़ा सिमेन, जिसका निकनेम तलकोवी था और जवान तातार, जिसका नाम कोई नहीं जानता था, नदी किनारे बोनफ़ायर के पास बैठे थे। बाकी तीन कुली झोंपड़ी में थे। बूढ़ा सिमेन आठ साल का पतला-दुबला आदमी था, पर उसके मुँह में एक भी दाँत नहीं था। उसके कन्धे चौड़े थे और देखने में तन्दुरुस्त लगता था, पूरा नशे में धुत्त था। वह तब तक सोने चला गया होता, पर उसकी जेब में अभी आधी बोतल और रखी थी और उसे डर था कहीं झोंपड़ी में जवान कुली उससे वोदका न माँग ले। तातार बीमार था, दर्द से परेशान था और अपने चीथड़ों में लिपटा बता रहा था कि उसके सिमबिट ज़िले में सब कुछ कितना अच्छा था, उसका घर कितना ख़ूबसूरत था और उसकी पत्नी कितनी समझदार थी! उसकी उम्र पच्चीस की रही होगी, इससे ज़्यादा नहीं और इस वक़्त आग की रोशनी में उदास और बीमार चेहरे वाला कमज़ोर तातार एक छोटा बच्चा लग रहा था।

सच है, "कोई स्वर्ग तो नहीं है," तलकोवी ने कहा, "तुम खुद देख रहे हो पानी, नंगे किनारे, चारों तरफ़ कीचड़ बस इन सबके अलावा कुछ भी नहीं है...स्वर्ग तो कब का ख़त्म हो चुका है, नदी में बर्फ़ बह रही है, आज सुबह बर्फ़ भी पड़ी थी। सभी कुछ ख़राब है। कुछ भी तो ठीक नहीं।" तातार ने कहा और डर के मारे चारों तरफ़ देखा।

दस क़दम सामने काली सर्द नदी बह रही थी। वह दहाड़ रही थी, किनारे को कुचल रही थी और तेज़ी से दूर किसी समन्दर की तरफ़ भागी जा रही थी। किनारे पर ही एक काली बड़ी नाव है, जिसे कुली करबास कहते हैं। दूर दूसरे किनारे पर साँप की तरह रेंगती टिमटिमाती रोशनियाँ नज़र आ रही थीं। कुली पिछले साल की घास जला रहे थे। रोशनियों के पीछे फिर अँधेरा था। जमी हुई बर्फ़ की नाव से टकराने की आवाज़ सुनाई पड़ रही थी। नमी और सर्दी थी...।

तातार ने आसमान की तरफ़ देखा। उसके घर जैसा वही तारों भरा आसमान, वही कंलौंसी चारों तरफ़, पर फिर भी कुछ तो कहीं कमी थी। फिर उसके सिमबिट ज़िले में न ऐसे तारे थे, न ही ऐसा आसमान।

"सभी कुछ खराब है। कुछ भी तो ठीक नहीं है!" उसने दोहराया।

"आदत हो जायेगी।" तलकोवी ने कहा और हँसने लगा, "अभी तुम जवान हो, नासमझ हो, दूध के दाँत तक टूटे नहीं हैं। इसी नासमझी की वजह से तुम्हें लगता है, तुमसे ज़्यादा दुखी कोई इन्सान नहीं है, पर एक वक़्त आयेगा, जब तुम ख़ुद कहोगे, ख़ुदा ऐसी ज़िन्दगी हर किसी को बख़्शे। मुझे देखो, एक हफ्ते में यह बाढ़ निकल जायेगी और फिर नाव यहाँ ले आयेंगे। तुम सब साइबेरिया घूमने चले जाओगे, पर मैं यही रह जाऊँगा और एक किनारे से दूसरे किनारे जाना शुरू कर दूँगा। पिछले बाईस साल से यही कर रहा हूँ। रात-दिन। सफ़ेद सॉमन और लिंग (मछलियाँ) पानी के अन्दर होती हैं और मैं पानी के ऊपर। ख़ुदा का शुक्र है। इससे ज़्यादा मुझे कुछ नहीं चाहिए। ख़ुदा हर किसी को ऐसी ज़िन्दगी बख़्शे।

तातार ने बोनफायर में झाड़-झंखाड़ डाले और आग के और करीब आ लेट गया, कहने लगा, "मेरा बाप बीमार है। उसके मरने के बाद ही मेरी माँ और बीवी यहाँ आयेंगी। ऐसा उन्होंने वादा किया था।"

"माँ और बीवी तेरे लिए क्या मायने रखते हैं?" तलकोवी ने पूछा, "यह सब निरी बेवकूफ़ी है, दोस्त, तेरे अन्दर का राक्षस तुझे परेशान कर रहा है, उसका गला घोंट दे। उस बदमाश की एक न सुन। उसे आज़ादी मत दे। वह औरतों की बातें करे और तुम उसे कोसो, नहीं चाहता। किसी की ज़रूरत नहीं है, कुछ नहीं चाहिए। न बाप, न माँ, न बीवी, न आज़ादी, न घर, न कोई ठिकाना। कुछ नहीं चाहिए, उनका सबका गला घोंट दो।"

तलकोवी ने बोतल से ही थोड़ी-सी पी और अपनी बात जारी रखी, "मैं मेरे दोस्त, कोई आम ख़ानदान से नहीं हूँ। मैं एक कुलीन बेटा हूँ और जब आज़ादी से मैं कुर्सक में रहता था, तो रईसों के कपड़े पहने घूमता था और आज मैंने अपने आपको ऐसा बना लिया है कि नंगी ज़मीन पर सो सकता हूँ और घास-फूस खा सकता हूँ। ख़ुदा ऐसी ज़िन्दगी हर किसी को बख़्शे। मुझे किसी चीज़ की चाह नहीं है। मैं किसी से नहीं डरता और अपने आपको समझता हूँ कि मेरे सामने रईस और आज़ाद इन्सान कोई मायने ही नहीं रखते। वह मेरे लिए हैं ही नहीं। जब मुझे रूस से यहाँ भेजा गया, तो पहले ही दिन से मैं शान्त हूँ, कुछ नहीं चाहता। मुझसे कोई बीवी के बारे में बात करता है या मादरे वतन या फिर आज़ादी की, तो मेरा एक ही जवाब होता है, मुझे कुछ नहीं चाहिए। बस, मैं अपने आपमें ही सिमट गया हूँ और देख ही रहे हो, कितना ख़ुश हूँ, कुछ भी तो नहीं चाहता और फिर कौन अपनी ज़िन्दगी खराब करना चाहेगा? जो एक बार भी सुनेगा कहेगा, वह बर्बाद हो गया, उसका कोई बचाव नहीं है, अपनी ही बनायी पौपी की दलदल में फँस गया है और अब ख़ुद बाहर नहीं आ सकता। ऐसा भी नहीं है कि सिर्फ़ बेवकूफ़ ही ऐसे डूब जाते हैं, अच्छे-भले और रईस भी डूब जाते हैं। पन्द्रह साल पहले यहाँ रूस से एक

ज़मींदार को भेजा गया था। कुछ भी अपने भाइयों में नहीं बाँटा और वसीयत में कुछ झूठा डाल दिया। कहते थे, राजाओं या ज़मींदारों या किसी अफ़सर खानदान का था, किसे पता। तो ज़मींदार यहाँ आ गया और आते ही पहला काम जो उसने किया, वह था मुखोरतिन्सक में एक घर और ज़मीन ख़रीद ली। कहने लगा, मेहनत करके जीना चाहता हूँ, पसीना बहाकर खाना-कमाना चाहता हूँ, क्योंकि अब मैं ज़मींदार नहीं एक अधिवासी (सेटलर) हूँ।" "क्या कहता, मैंने कहा, ख़ुदा तुम्हारी मदद करे, नेक काम है।" तब वह जवान था, जोशीला था, मेहनती था, अपने आप ही हल जोतता था। कभी तो ऐसा भी होता था कि मछली भी पकड़ा करता और घोड़े पर बीस मील चला जाया करता था। बस, एक ही बदकिस्मती थी, पहले ही साल से गिरिनों के पोस्टऑफिस में जाना शुरू कर दिया। मेरे पास नाव में खड़ा होता और कहा करता, "ओ सिमन, जाने क्यों बहुत दिन हो गये हैं। मेरे घर से किसी ने पैसे नहीं भेजे।" "कोई ज़रूरत नहीं है," मैं कहता, "वसीली सिरगेईच, किसलिए चाहिए पैसा?" किसलिए? अपने अतीत को भूल जाइए मान लीजिए वह था ही नहीं, मानो वह एक सपना हो और ज़िन्दगी को दोबारा शुरू कीजिए। मैं कहता, अपने अन्दर के राक्षस को मत सुनिए, वह कुछ अच्छा नहीं करवायेगा, बल्कि उलटा फाँसी के फन्दे की तरफ़ धकेलेगा। अभी आपको पैसे की चाह है, थोड़े वक़्त के बाद किसी और चीज़ की चाह होने लगेगी, फिर किसी और चीज़ की। अगर आप .खुशी चाहते हैं, तो किसी चीज़ की चाह मत करिए। हाँ, मैंने उससे कहा, हम तुमसे किस्मत नाराज़ हो गयी है, इसलिए उससे मेहरबानियाँ माँगना बेकार है, घुटने टेककर उसके सामने झुकना बेमानी है, उसकी परवाह मत करिए, उस पर हँसिये, उसका मज़ाक़ उड़ाइये। नहीं तो वह .खुद आपका मज़ाक़ उड़ायेगी। यही सब उससे कहा करता था। दो साल बाद मैं उसे इस किनारे ले आया। उसने अपने हाथ पोंछे और हँसने लगा। कहने लगा, "गिरिनो जा रहा हूँ अपनी पत्नी से मिलने। कहती है मुझ पर तरस आ गया और मिलने चली आयी। वह बहुत अच्छी और नेकदिल है।" .खुद .खुशी से फूलकर कुप्पा हो गया। एक दिन के बाद वह अपनी पत्नी के साथ आया। पत्नी जवान थी, ख़ूबसूरत थी, हैट पहने थी और हाथों में एक छोटी बच्ची लिये हुई थी। सामान भी बहुत था। वासिली सिरगेईच उसके ही इर्द-गिर्द घूम रहा था। उसको देखते हुए थक नहीं रहा था, तारीफ किये चला जा रहा था, "सच, दोस्त सिमेन, साइबेरिया में भी इन्सान रहते हैं।" मैं सोचने लगा, ठीक है, पर ज़्यादा .खुश मत होओ। उस पल से अब वह हर हफ़्ते गिरिनो जाने लगा, यह पता करने के लिए कि रूस से कुछ पैसे आये या नहीं। पैसे तो आने चाहिए। कहता था, "वह मेरे खातिर साइबेरिया में अपनी जवानी और ख़ूबसूरती बर्बाद कर रही है और इसलिए मुझे उसके लिए सब सुख जुटाने चाहिए...। उसे ख़ुश रखने के लिए उसने सब तरह के सरकारी अफ़सरों से जान-पहचान कर ली। ज़ाहिर है इन सबकी दावतें करनी

पड़ती थीं, शराब पिलानी पड़ती थी, पिआनो ज़रूरी था और ज़रूरी था एक गदराया हुआ कुत्ता, जो हमेशा हाँफता रहे...। थोड़े में ऐशो-आराम होने का मतलब बिगड़ना। बैरोनस उसके साथ ज़्यादा दिन नहीं रही। रहती भी कैसे? कीचड़, पानी ठंड, सब्ज़ियाँ और फलों का नामो-निशान नहीं, चारों तरफ़ अनपढ़, गँवार और शराबी, किसी तरह का कोई मनोरंजन नहीं और वह औरत थी बिगड़ी हुई और ऊपर से राजधानी की। ज़ाहिर है, बोर हो गयी फिर पति अब कोई ज़मींदार नहीं रह गया था, वह हो गया था एक सेटलर, ज़मींदार की सी इज़्ज़त तो नहीं थी। मुझे याद है तीन साल बाद ठीक उदग्रहण के दिन किसी ने दूसरे किनारे से आवाज़ दी। मैं नाव में उधर गया, देखा, सामने चीथड़ों में लिपटी बैरोनस और उसके साथ एक जवान सरकारी अफ़सर। मैं उन्हें इधर ले आया। वे बैठ गये और मैं नाम याद करने लगा। उन्हीं को देख जा रहा था। सुबह होते ही वासिली सिरगेईच नाव पर आया। "सिमेन कहीं मेरी पत्नी किसी चश्मे वाले साहेब के साथ तो नहीं चली गयी? गयी, मैंने कहा, "अब ढूँढ़ो हवा के खेत में। "पाँच दिन तक वह ढूँढ़ता रहा। इसके बाद जब मैं उसे उस पार ले जा रहा था, तो वह नाव में गिर गया, अपना सिर लकड़ी की दीवार से पीटने लगा और रोने लगा। यही है सच्चाई, मैंने कहा, मज़ाक़ उड़ाते हुए मैंने उसे याद दिलाया, "आख़िर साइबेरिया में भी इन्सान रहते हैं!" पर वह था कि अपने आप को और ज़ोर से पीट रहा था...। तब वह आज़ादी चाहने लगा। पत्नी रूस चली गयी थी और उसका मन भी रूस जाने को करने लगा। ज़ाहिर है, पत्नी से मिलने और उसके प्रेमी से छुटकारा दिलाने के लिए और मेरे दोस्त, अब वह हर रोज़ या तो पोस्टऑफिस जाता या फिर शहर के किसी अफ़सर के पास। हमेशा माफ़ीनामा भेजता, लिखता और विनती करता कि उसे घर वापस जाने दिया जाये। वह कहा करता था कि सिर्फ़ टेलीग्राम भेजने में ही दो सौ रूबल खर्च हो गये हैं। ज़मीन बेच दी, महाजन को मकान गिरवी रख दिया। खुद बूढ़ा हो गया, कुबड़ा हो गया, चेहरा पीला पड़ गया, मतलब टी.बी. हो गयी। बात करते हुए ख़ुद बहुत खाँसता था...आँखों में आँसू आ जाते थे। माफ़ीनामा लिखते और भेजते-भेजते आठ बरस निकल गये। उसके बाद एकदम जी उठा और खुश रहने लगा। एक नयी शरारत सोची। उसकी बेटी, जानते हो, जवान हो गयी थी। देखते तो साँस रुक जाती थी। सच कहा जाये, तो वह बहुत ख़ूबसूरत थी, उसकी भौंहें काली थीं और अल्हड़ तो थी ही। हर इतवार को वह गिरिनो उसके साथ चर्च जाता। दोनों नाव में साथ-साथ खड़े हुआ करते, वह हँसा करती थी और वह उसे एकटक देखे जाता। कहा करता, "सच सिमेन, साइबेरिया में भी इन्सान रहते हैं। साइबेरिया में भी खुशी रहती है। देख तो मेरी बेटी कैसी है। कोसों तक नहीं मिलेगी ऐसी लड़की।" मैं कहा करता, "थोड़ा रुक जाओ... लड़की जवान है, ख़ूबसूरत है, ख़ून गर्म है, उसे जीने की चाह है। यहाँ भी कोई ज़िन्दगी है?" और दोस्त, फिर वह उदास रहने लगी...बीमार हो गयी, कमज़ोर

हो गयी और अब चल भी नहीं सकती। टी.बी.। यह है साइबेरियन ख़ुशी, गला घोंट दे उसका। कहता है, "साइबेरिया में भी इन्सान रहते हैं...। वह उसे डॉक्टरों के पास ले जाने लगा या उनको अपने घर ले जाने लगा। जैसे ही पता लगता बीस मील दूर कोई डॉक्टर या हकीम आया है, फ़ौरन उसके पास जाता। बताते हुए भी डर लगता है। डॉक्टरों पर कितना पैसा खर्च हुआ, ख़्याल से इससे अच्छा तो उतने की शराब पी जाती, तो अच्छा रहता...। किसी भी हालत में मर जायेगी। वह कभी अचानक मर जायेगी और तब वह बिलकुल बर्बाद हो जायेगा। दुख के मारे या तो फाँसी लगा लेगा या रूस भाग जायेगा, सब जानते थे। भागेगा तो पकड़ा जायेगा, फिर मुकदमा चलेगा, क़ैद होगी, कोड़े पड़ेंगे...।"

"ठीक है—ठीक है।" कँपकँपी से सिकुड़ते हुए तातार बुदबुदाया।

"क्या ठीक है?" तकलोवी ने पूछा।

"पत्नी, बेटी...। क़ैद हो गयी, तो क्या, दुखी हो गया, तो क्या कम से-कम अपनी पत्नी और बेटी से तो मिल लिया...तुम कहते हो कुछ नहीं चाहिए, पर कुछ न चाहना ग़लत है। पत्नी उसके साथ तीन साल रही, यह ख़ुदा की नेमत थी। कुछ न चाहना ग़लत है। तीन साल साथ रहना बहुत अच्छा है। क्यों नहीं समझते?"

काँपते हुए बड़ी मुश्किल से रूसी शब्द ढूँढ़ते हुए, जिन्हें वह वैसे भी कम जानता था, अपने तातार एकसेन्ट में तातार कह रहा था, "ख़ुदा किसी को दूसरे मुल्क में मरने और ठंडी नम और अनजानी ज़मीन में दफ़न होने न भेजे। कह रहा था, अगर उसकी पत्नी सिर्फ़ एक दिन या सिर्फ़ एक घंटे के लिए भी उससे मिलने आ जाये तो वह इस ख़ुशी के लिए बेइन्तहा दुख सहने को तैयार है और इसके लिए वह ख़ुदा का शुक्र भी अदा करेगा। एक दिन की ख़ुशी कुछ न होने से कहीं ज़्यादा अच्छी है।

फिर उसने दोबारा बताया कि उसकी पत्नी जो वहीं घर पर रह गयी, कितनी ख़ूबसूरत और समझदार थी, फिर दोनों हाथों में अपना सिर पकड़ रोने लगा और सिमेन को यक़ीन दिलाने लगा कि वह बेक़सूर है और वह बहुत सी ज्यादतियाँ बर्दाश्त कर रहा है। उसके दो भाइयों और एक चाचा ने एक किसान से उसका घोड़ा छीन लिया और बूढ़े को इतना मारा कि वह अधमरा हो गया, पर कोर्ट ने इसके पीछे की वजह जाने बिना ही सज़ा सुना दी और तीनों भाइयों को साइबेरिया भेज दिया। रईस चाचा वहीं रह गया।

"आ...द...त...पड़ जायेगी।" सिमेन ने कहा।

तातार ख़ामोश हो गया और अपनी रोने से सूजी आँखों से आग को एकटक देखता रहा, उसके चेहरे पर असमंजस और डर साफ़ दिखाई पड़ रहे थे, मानो अभी तक वह इस अँधेरे, नमी और अजनबी लोगों के बीच में क्यों है, क्यों वह अपने सिमबिट ज़िले में नहीं है। तलकोवी आग के पास लेट गया। जाने किस बात पर

हँसने लगा और फिर हलकी आवाज़ में गाने लगा।

"बाप के साथ लड़की को क्या खुशी नसीब थी?" थोड़ी देर रुककर उसने कहा, "वह उससे प्यार करता है। अपने को तसल्ली दे रहा है। बड़ा अनुशासनप्रिय बूढ़ा है। जवान लड़कियों को अनुशासन नहीं चाहिए...उन्हें तो हँसी-ठट्ठा, इतर और पाउडर चाहिए। सच...यही सच है। सिमेन ने लम्बी साँस ली और बड़ी मुश्किल से उठा, "चलता हूँ दोस्त...।"

अकेले रह जाने के बाद तातार ने आग में थोड़ी घास-फूस डाली, पास लेट गया और आग की लौ को देखते हुए अपने गाँव और अपनी बीवी के बारे में सोचने लगा, कितना अच्छा होता एक महीने के लिए या फिर सिर्फ़ एक दिन के लिए उसकी बीवी आ जाती और फिर अगर चाहती, तो वापस चली जाती। एक महीना या एक दिन कुछ न होने से अच्छा है, पर अगर बीवी ने अपना वादा पूरा किया और आ गयी, तो वह उसे "क्या खिलायेगा? वह यहाँ रहेगी कहाँ?" अगर खाने को कुछ नहीं है, तो ज़िन्दा कैसे रहेगी?" तातार ने ज़ोर से पूछा।

आजकल वह रात-दिन चप्पू चला रहा है, इसलिए उसे चौबीस घंटे के सिर्फ़ दस कोपेक मिलते हैं। सच है, मुसाफ़िर चाय और वोदका के लिए भी टिप दे जाते हैं, पर सारा नफ़ा सभी आपस में बाँट लेते थे। तातार को कुछ नहीं दिया करते थे और उसका मज़ाक़ उड़ाया करते थे। ग़रीबी की वजह से वह भूखा रह जाता था। सर्दी में ठिठुरा करता था। वह सोच रहा था, आज जब सारा बदन दर्द कर रहा है, कँपकँपी छूट रही है, अच्छा हो, अपनी झोंपड़ी में चला जाये और सोया जाये, पर वहाँ ओढ़ने को तो कुछ भी नहीं है और नदी किनारे से भी ज़्यादा ठंड है। यहाँ भी ओढ़ने को तो कुछ नहीं है, पर यह आग थोड़ी-बहुत गर्मी तो दे रही है...।

एक हफ़्ते बाद जब पानी का लेबल पूरी तरह गिर जायेगा, तो नाव को किनारे लगा देंगे। सिमेन के अलावा सब कुली बेकार हो जायेंगे। तातार गाँव-गाँव जाकर भीख और नौकरी माँगेगा। बीवी सिर्फ़ सत्रह साल की है। वह ख़ूबसूरत है, नादान और अल्हड़ है। क्या वह सच में गाँव-गाँव जाकर बिना बुर्का ओढ़े भीख माँग सकेगी? नहीं, यह सोचना भी पाप है।

सुबह हो गयी थी। नाव, गुलाबी की झाड़ियाँ और पानी के भिसे बुलबुले चमक रहे थे, पर पीछे कीचड़ की खाई, नीचे फूस से ढकी झोंपड़ी और ऊपर गाँव की झोंपड़ियाँ दिखाई पड़ रही थीं।

भूरी कीचड़ की खाई, नाव, नदी, अजनबी और बेरहम इन्सान, भूख, सर्दी और बीमारी, ये सब शायद सच नहीं हैं, हो-न हो यह सिर्फ़ एक सपना है, तातार सोच रहा था। उसे लगा कि वह सो रहा था और अपने खर्राटे सुन सकता था।

सच तो यह है कि वह अपने सिमबिट ज़िले में अपने ही घर में था और उसे सिर्फ़ अपनी बीवी को नाम लेकर पुकारने भर की देर थी कि वह भागती-भागती आ जायेगी। साथ वाले कमरे में माँ...। वैसे सपने भी कितने डरावने हुआ करते हैं। किसलिए? तातार मुस्कराया और उसने अपनी आँखें खोल लीं। यह कौन सी नदी है? वोल्गा?

बर्फ़ पड़ रही थी।

"भेजो!" कोई दूसरे किनारे से चिल्लाया, "नाव।"

तातार उठ गया और दूसरे साथियों को जगाने के लिए भागा जिससे दूसरे किनारे जा सके। रास्ते में पड़े ट्यूलिप के फूलों को रौंदते हुए आधे जगे गालियाँ देते हुए और ठंड से सिकुड़ते हुए कुली किनारे पर आ गये। नींद के बाद ठंड उगलती नदी और भी डरावनी और बेरहम लग रही थी। बिना किसी जल्दी के वे आराम से नदी में कूद रहे थे। तातार और तीन कुलियों ने चौड़े पटल वाले लम्बे चप्पू ले लिये। सिमेन लम्बे हैंडल से पेट के बल सट गया। दूसरे किनारे से अभी भी पुकारने की आवाज़ें आ रही थीं और दो बार तो रिवॉल्वर से फायर भी किया गया था। शायद यह सोचकर कि कुली सो रहे थे या गाँव के पब में चले गये थे।

"शोर मत करो, आ रहे हैं।" तलकोवी ने ऐसे इन्सान की आवाज़ में कहा, जो सोचता था कि इस दुनिया में किसी भी तरह की जल्दी नहीं करनी चाहिए, सब बेकार है।

भारी और भौंडी नाव किनारे से दूर होती ट्यूलिप की झाड़ियों के बीच में से जा रही थी, क्योंकि ट्यूलिप आराम से पीछे हट जाते थे। दिखाई पड़ रहा था कि नाव एक जगह पर नहीं खड़ी थी, बल्कि चल रही थी। कुली बारी-बारी से चप्पू चला रहे थे तलकोवी पेट के बल हैंडल पर लेटा था और कभी-कभी हवा में कमान को घुमाते हुए नाव के एक कोने से दूसरे में जा रहा था। इस झुटपुटे में लग रहा था, मानो आदमी किसी लम्बे पंजों वाले जानवर पर बैठे किसी ऐसे सर्द देश में तैर कर जा रहे थे, जो अकसर परेशानी के वक़्त सपने में आया करता था।

ट्यूलिप ख़त्म हो गये थे। अब नाव चौड़ी नदी में चल रही थी। दूसरे किनारे से खुशी भरा शोर सुनाई पड़ रहा था। वे पुकार रहे थे, "जल्दी आओ! जल्दी आओ!" दस मिनट के बाद नाव घाट से जा टकरायी।

"ठंड है कि बढ़ती ही जा रही है...बढ़ती ही जा रही है।" बर्फ़ से अपना मुँह पोंछते हुए सिमेन बुदबुदाया," इतनी ठंड आती कहाँ से है, ईश्वर ही जानता है।"

दूसरे किनारे पर फरकोट और सफ़ेद सेमने की खाल का हैट पहने एक छोटे कद का दुबला-पतला बूढ़ा इन्तज़ार कर रहा था। वह घोड़ों से बहुत दूर खड़ा था और हिल-डुल नहीं रहा था। उसके चेहरे पर एकाग्रता और मातम साफ़ देखा जा सकता था, मानो वह कुछ याद करने की कोशिश कर रहा हो और अपनी याददाश्त

पर गुस्सा हो रहा हो। जब सिमेन उसके पास पहुँचा और मुस्कराकर हैट उतारा, तो उसने कहा, "फौरन अन्स्तासेव पहुँचना चाहता हूँ। बेटी की तबीयत फिर खराब हो गयी है और सुना है कोई नया डॉक्टर वहाँ आया है।"

घोड़ों को नाव में खींचा और वापस चल पड़े। वह आदमी जिसे सिमेन ने वासिली सिरगेइच के नाम से पुकारा था, सारे वक़्त अपने होठ दबाए एक ही बिन्दु को देखते हुए, बिना हिले-डुले खड़ा रहा। जब कोचवान ने उससे सिगरेट पीने की इज़ाज़त माँगी, तो उसने कोई जवाब नहीं दिया, जैसे कुछ सुना ही नहीं हो, पर सिमेन ने हैंडल पर लेटे हुए उसकी तरफ़ मज़ाकिया नज़रों से देखा और कहा, "साइबेरिया में भी इन्सान रहते हैं। र...ह...ते...हैं।"

तलकोवी के चेहरे पर जीत के भाव थे, मानो उसने कुछ तो साबित कर दिया हो और खुश हो कि जैसा उसने कहा था, वैसा ही हुआ। फ़रकोट पहने उस इन्सान के चेहरे के दुख और असहायता के भाव सिमेन को सन्तुष्टी दे रहे थे।

"वासिली सिरगेइच, कीचड़ में जाना होगा", जब किनारे पर घोड़ों को ले आये, उसने कहा," अगर दो हफ़्ते इन्तज़ार कर सकते, तो सब सूख जाता। वैसे भी जाकर वापस नहीं आ पायेंगे...वैसे भी जाने का कुछ फायदा नहीं होगा। आप तो जानते ही हैं, आप भी बरसों से बेमतलब की यात्राएँ कर रहे हैं। सच है !"

वासिली सिरगेइच ने वोदका पी, तरन्तास में बैठा और आगे चला गया।

"डॉक्टर लेने जा रहा है," ठंड से काँपते सिमेन ने कहा, "अच्छे डॉक्टर को ढूँढ़ने का मतलब है, खेत में हवा को पकड़ना या भूत की पूँछ पकड़ना। कैसे-कैसे बेवकूफ़ इन्सान होते हैं। भगवान मुझे माफ़ करे।"

तातार तलकोवी के पास आया। उसे नफ़रत भरी नज़रों से देखते हुए, ठंड से काँपते-काँपते उसने अपनी तातार और रूसी मिली-जुली भाषा में कहा, "वह अच्छा इन्सान है, बहुत अच्छा है, पर तू बहुत बुरा है, बहुत बुरा है। ज़मींदार का दिल, बहुत अच्छा है। वह अच्छा इन्सान है, पर तू जानवर है, तू बहुत खराब है। ज़मींदार जीवन्त इन्सान है और ते अपने आप में घुटा हुआ...ईश्वर ने इन्सान को बनाया है, जीवन्त रहने के लिए, उसके जीवन में खुशी बनायी है, दुख बनाया है, मातम बनाया है, पर तुझे कुछ नहीं चाहिए तू मुर्दा है, पत्थर है, मिट्टी है। पत्थर को कुछ नहीं चाहिए और तुझे भी कुछ नहीं...। तू पत्थर है, ईश्वर तुझसे प्यार नहीं करता, पर ज़मींदार से प्यार करता है।"

सब हँस पड़े। तातार का चेहरा सिकुड़ गया। उसने अपने हाथ हिलाये, चप्पू रखे और आग की तरफ़ बढ़ गया। सिमेन और दूसरे कुली झोंपड़ी की तरफ़ रेंग गये।

"ठंड है।" एक कुली ने भर्राई आवाज़ में, चटाई पर, जिससे नम मिट्टी का फ़र्श ढका था, लेटते हुए कहा।

''हाँ, गर्म तो नहीं है।'' दूसरे ने सहमति जताते हुए कहा, ''आख़िर निर्वासन की ज़िन्दगी है। निर्वासन काट रहे हैं।''

सब लेट गये तभी हवा से झोंपड़ी का दरवाज़ा खुल गया और झोंपड़ी में बर्फ़ आ गयी। कोई भी उठकर दरवाज़ा बन्द करना नहीं चाहता था। ठंड थी और था आलस।

''पर मुझे अच्छा लग रहा है,'' सोते हुए सिमेन ने कहा, ''ख़ुदा हर किसी को ऐसी ज़िन्दगी बख़्शे।''

''तू निर्वासित है। तुझे कोई वापस नहीं लेगा।''

बाहर से कुत्ते के रोने की सी आवाज़ें आ रही थीं।

''यह क्या है? कौन है?

''यह तातार रो रहा है।''

''उफ़...कितना बेवकूफ़ है।

''आ...द..त..पड़ जायेगी।'' सिमेन ने तभी कहा और सो गया।

जल्दी ही बाकी भी सो गये पर दरवाज़ा खुला ही रहा।

❑❑❑

योगेश भटनागर

जन्म : दिल्ली में। **शिक्षा** : एम.ए. इकॉनोमिक्स और पॉलिटिकल साइंस में। रूसी साहित्य में मास्को विश्वविद्यालय मास्को, रूस, से पी-एच.डी.। कुछ वर्ष नेशनल कॉउन्सिल ऑफ इकॉनोमिक रिसर्च, नयी दिल्ली में कार्यरत। बाद में ऑयल एण्ड नेचुरल गैस कमीशन में रूसी दुभाषिये के पद पर कार्य किया। डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर मराठवाड़ा यूनिवर्सिटी, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) में विदेशी भाषा प्रमुख की हैसियत से अठारह वर्ष रूसी भाषा और साहित्य का अध्यापन। जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नयी दिल्ली में रूसी साहित्य के प्रोफेसर के पद से अवकाश प्राप्त।

विदेशी भाषा शिक्षण की पद्धति, भारतीय द्विभाषिकता, अनुवाद के सिद्धान्तों और अन्य जुड़े हुए विषयों पर 20 पुस्तकें प्रकाशित। **थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ ट्रान्सलेशन, फॉरन लैंग्वेज टीचिंग** (एन अप्रोच), **सेकिंड लैंग्वेज पेडागोजी इन इण्डिया, रशियन केस सिस्टम) ए ब्रीफ रशियन रेफरेन्स ग्रामर–बहुचर्चित पुस्तकें।**

हिन्दी में चर्चित कहानीकार हंस, वातायन, विपाशा, आजकल, सम्भव, वागर्थ, वैचारिकी, अक्षर पर्व में कहानियाँ प्रकाशित। 'नसीबन' और 'एक लम्बा दिन' कहानी-संग्रह प्रकाशित।

पोस्ट-पेरिस्त्रोइका काल की वर्तमान रूसी कहानियों का रूसी से अंग्रेजी में चार अनुवाद-संग्रह प्रकाशित।

रूसी से हिन्दी में वर्तमान रूसी कहानियों के अनुवाद वागर्थ, विपाशा, अक्षर पर्व में प्रकाशित। **'डॉक्टर तथा अन्य कहानियाँ'** अन्तोन चेखव, **'एक अज्ञात आदमी की कहानी'**–अन्तोन चेखव, **'एक मछली का प्यार'** अन्तोन चेखव और **पत्नी**–अन्तोन चेखव कहानी-संग्रह हिन्दी में प्रकाशित।